हिन्दी अंक 01 | जनवरी, 2017

आई वंडर ...

विज्ञान नई नजर से



पृष्ठ 10

चीजें गति क्यों करती हैं?

गति की खोजबीन करने के अन्तर्विषयी रास्ते

अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय का प्रकाशन

Azim Premji University

No. 134, Doddakannelli
Next to Wipro Corporate Office
Sarjapur Road, Bangalore - 560 035. India
Tel: +91 80 6614 9000/01/02 Fax: +91 806614 4903
www.azimpremjifoundation.org

Also visit Azim Premji University website at
www.azimpremjiuniversity.edu.in

Soft copy can be downloaded from www.azimpremjiuniversity.edu.in/iwonder

आई वंडर...

विज्ञान नई नजर से

इमेज सौजन्य
1. Cover image recreated from https://en.wikipedia.org/wiki/Flying_fish#/media/File:Pink-wing_flying_fish.jpg
2. Back cover image: Rocky Mountain Laboratories, NIAID, NIH Source: [http://www2.niaid.nih.gov/biodefense/public/images.htm NIAID]. Downloaded from Wikimedia Commons: https://en.wikipedia.org/wiki/File:SalmonellaNIAID.jpg on September 29, 2015. Uploaded by user Taragui. License: Image in Public Domain.

Additional images sourced from freeimages.com and all-free-download.com

मुद्रक
SCPL Bangalore - 560 062
+91 80 2686 0585, +91 98450 42233
www.scpl.net

आभारी हैं : हम विशेष रूप से मधुमिता, शैलेश सिराली, स्नेहा टायटस, गौतम पाण्डेय, जयश्री मिश्रा, जी.के.अनन्तसुरेश एवं दीपक सैनी के आभारी हैं जिन्होंने पत्रिका के इस पहले अंक के लिए अपने सुझाव दिए एवं उन्हें मूर्तरूप देने में सहायता की। हम अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन के उन साथियों के भी आभारी हैं जिन्होंने पत्रिका का नाम तय करने में अपना योगदान दिया।



सम्पादक की मेज से

आश्चर्य से भर जाता था मैं, जब बचपन में, अपने गाँव में रात के समय आसमान में सैकड़ों टिमटिमाते तारों के विस्मित कर देने वाले नजारे को देखता था। मुझे तब भी विस्मय होता था जब रसायनविज्ञान के शिक्षक तत्वों के वर्गीकरण को आवर्त सारणी में दिखाते थे। और आज भी मैं विस्मित रह जाता हूँ जब भी मानव शरीर के प्रत्येक अंग, ऊतक और कोशिका के काम करने की जटिलताओं और बारीकियों के बारे में कुछ और नया जानने को मिलता है। प्राकृतिक संसार को देखकर होने वाले विस्मय ने ऐसी कई वैज्ञानिक खोजों का रास्ता निर्मित किया है जिन्होंने दुनिया को बदलकर रख दिया। विस्मय, वैज्ञानिक मिजाज का एक अत्यावश्यक अंश है। जो शिक्षक अपनी कक्षा में विस्मय का भाव पैदा कर सकता है, वह अपने विद्यार्थियों की कल्पना शक्ति को आकर्षित करने में सफल रहता है। इसी वजह से हमने इस विज्ञान पत्रिका का नाम 'आई वंडर...' रखा है।

'आई वंडर...' देश भर के मिडिल स्कूलों के उन सभी विज्ञान शिक्षकों को समर्पित है जो अपनी कक्षाओं में वैज्ञानिक मिजाज को प्रेरित कर रहे हैं। इस पत्रिका में कई विज्ञान शिक्षकों, शिक्षक प्रशिक्षकों और शोधकर्ताओं के नजरियों और प्रयोगों को एक साथ प्रस्तुत किया गया है। हम आशा करते हैं कि इस पत्रिका को शिक्षक एक स्रोत के रूप में उपयोग करेंगे और जो विषय वे पढ़ाते हैं, उनके अधिक व्यापक और गहरे दृष्टिकोण उन्हें इससे प्राप्त होंगे – ऐसे दृष्टिकोण जिनसे उन्हें विज्ञान के मूलभूत सिद्धान्तों को, उनके विकास और उनके अन्तर्सम्बन्धों को समझाने में मदद मिलती है। इस पत्रिका के माध्यम से शिक्षक अपनी कक्षाओं की गतिविधियों, उपयोग किए जाने वाले संसाधनों और वहाँ बनी उनकी गहरी समझ को पाठकों के साथ साझा कर सकते हैं।

इस प्रथम अंक में हम विज्ञान के एक ऐसे महत्त्वपूर्ण पहलू की पड़ताल कर रहे हैं जो स्कूल की पाठ्यपुस्तकों में विरले ही दिखाई देता है। यह पहलू है विज्ञान की अन्तर्विषयात्मकता। किसी अवधारणा को उसकी पूर्णता में समझने के लिए हमें उसे कई शैक्षणिक धाराओं जैसे भौतिकशास्त्र, रसायनशास्त्र, जीवविज्ञान और अन्य विषयों के नजरियों से और अक्सर इन शैक्षणिक धाराओं को जोड़कर देखना जरूरी होता है। इसलिए इस अंक का विषयसूत्र अन्तर्विषयी विज्ञान है।

इसके अलावा इस पत्रिका में ऐसे भी खण्ड हैं जो विज्ञान के ऐसे अन्य पहलुओं को रोशन करते हैं जो किसी कक्षा में दिलचस्पी और विस्मय पैदा करते हैं। इनमें ऐसे खण्ड हैं जो विज्ञान के समृद्ध इतिहास पर प्रकाश डालते हैं, हमारे भीतर के जगत, आसपास के स्थानों और हमसे दूर स्थित स्थानों की पड़ताल करते हैं; या विज्ञान की हाल ही में घटी रोमांचक घटनाओं का उल्लेख करते हैं। वे लोग जो स्रोतों की तलाश में हैं, उनके लिए इस पत्रिका में पोस्टर हैं, प्रयोग हैं और कुछ निशुल्क ऑनलाइन स्रोतों का भी उल्लेख किया गया है। पत्रिका में एक खण्ड विज्ञान की प्रकृति पर नजर डालता है।

हम आशा करते हैं कि आपको इस अंक को पढ़ने में उतना ही मजा आएगा जितना हमें इसे तैयार करने में आया। हम उम्मीद करते हैं कि हमें अपने पाठकों की ढेर सारी प्रतिक्रियाएँ मिलेंगी जिनकी मदद से हम आपकी जरूरतों के मुताबिक पत्रिका की विषयवस्तु में फेरबदल कर सकेंगे। आप अपनी प्रतिक्रियाएँ iwonder.editor@azimpremjifoundation.org पर भेज सकते हैं ।

रामगोपाल (राम जी) वल्लत
सम्पादक

(अनुवाद : सत्येन्द्र त्रिपाठी)



इस अंक में





अन्तर्विषयी विज्ञान

दस बातें, जो आप नहीं जानते

विज्ञान की प्रकृति

कुछ अन्दर की/कुछ बाहर की

आई वंडर...







पानी

एक चकित करने वाला अणु

यासमीन जयतीर्थ

पृथ्वी से परे जीवन रूपों की हमारी खोज पानी खोजने से क्यों जुड़ी हुई है? बर्फ का घनाकार टुकड़ा पानी से भरे गिलास में क्यों तैरता है? कौन–सी बात पानी को दूसरे द्रवों से भिन्न बनाती है? इस लेख में लेखिका ने पानी से जुड़े कई अवलोकनों का उपयोग एक ऐसे विषयसूत्र के रूप में उसकी जाँच–पड़ताल करने के लिए किया है जिसका विभिन्न कक्षाओं और विषयों के अन्तर्गत अध्ययन किया जा सकता है।

पानी जनजीवन में सबसे ज्यादा व्यापक रूप से पाया जाने वाला एक ऐसा द्रव है जिससे हमारा परिचय है और जिसका उपयोग हम उसके बारे में बिना ज्यादा सोचे–विचारे करते रहते हैं, सिवाय तब शिकायत करने के जब वह फैलता है, अधिक भरने पर बेकार बहता है, या बारिश के रूप में भीतर आ जाता है, या हमें प्यासे होने पर जिसकी तलब लगती है, या बारिश न होने पर जिसकी गहरी चाह होती है।

पानी हमारे जीवन में, सभी जीवरूपों के जीवन में, और व्यापक रूप से इस ग्रह पर अनेक भूमिकाएँ निभाता है। रसायनशास्त्रियों, भौतिकशास्त्रियों, जीवशास्त्रियों और इंजीनियरों द्वारा इसका अध्ययन किया जाता है और अभी भी इस पर शोधकार्य किया जा रहा है। यह आश्चर्य की बात है क्योंकि यह इतना छोटा–सा अणु है, जिसका इतना सरल सूत्र है H_2O। शायद यह वह सूत्र है जो विज्ञान का हर विद्यार्थी सबसे पहले सीखता है।



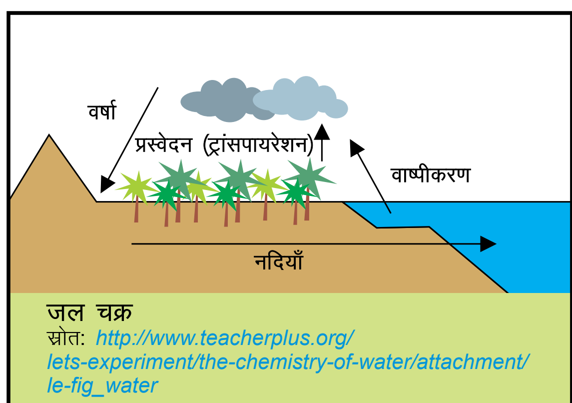
फीलिक्स फ्रैंक एक ब्रिटिश वैज्ञानिक हैं जिनका काम प्रमुख रूप से पानी की संरचना और उसके गुणों के बारे में है। वे निम्नलिखित किस्सा सुनाते हैंः वे किसी विश्वविद्यालय में पानी पर एक व्याख्यान देने के लिए रेलगाड़ी से सफर कर रहे थे। संयोग से उसी डिब्बे में एक अन्य वैज्ञानिक भी थे जो खुद भी एक नौकरी के साक्षात्कार के लिए उसी विश्वविद्यालय में जा रहे थे। फ्रैंक के व्याख्यान का शीर्षक सुनकर उन्होंने ऐसा कहा कि, 'मेरा ख्याल था कि सभी को पता है कि पानी की संरचना H_2O होती है।' फ्रैंक कहते हैं कि यह कहने की जरूरत नहीं कि उन सज्जन को वह नौकरी नहीं मिली।

वे क्या भूमिकाएँ हैं जिन्हें पानी निभाता है?

1. यह जीवन के लिए एक पर्यावरण प्रदान करता है।
2. यह एक संरचनात्मक पदार्थ की तरह काम करता है।
3. यह एक बहुत अच्छा विलायक है।
4. यह बड़े और छोटे, दोनों पैमानों पर पदार्थों और ऊर्जा के परिवहन के लिए एक माध्यम है।
5. यह एक (ऊष्मा) अवरोधक की तरह काम करता है।
6. यह जलवायु को मध्यस्थ (moderator) बनाने का काम करता है।
7. यह एक शीतलक की तरह ठण्डा करने का काम करता है।
8. यह एक रासायनिक अभिकारक है।

पानी के शायद और भी अन्य अनेक उपयोग हैं। ऊपर बताए गए कई उपयोग एक–दूसरे से जुड़े हुए हैं। जब हम अपने आसपास के जीवन को देखते हैं तो हमें पानी के उपरोक्त कार्यों के अनेक उदाहरण मिलते हैं।

हम शुरुआत पानी के कुछ ऐसे कार्यों से करते हैं जो ज्यादा बड़े पैमानों पर किए जाते हैं। हम सभी को जल चक्र के बारे में कुछ जानकारी होती है। लेकिन इस प्रक्रिया के दौरान एक अवस्था से दूसरी अवस्था में स्थानान्तरित होने वाले पानी की वास्तविक मात्रा हमें चकित कर सकती है।



जल चक्र
स्रोत: *http://www.teacherplus.org/lets-experiment/the-chemistry-of-water/attachment/le-fig_water*

सभी प्रकार की जलवायु में और सारे संसार में समुद्र, नदियाँ, झीलें, तालाब, चट्टानों में बने छोटे–छोटे पानी के डबरे आदि सभी प्राणियों के जीवित रहने के लिए पर्यावरण प्रदान करते हैं। अनेक छोटे तालाब और डबरे अपने बनने के थोड़े ही समय के भीतर जीवन से भर जाते हैं। यह देखना बहुत आसान है कि मच्छर का लार्वा कहाँ से आता है, परन्तु मछली और पौधों के बारे में क्या कहेंगे – वे वहाँ कैसे आ जाते हैं? असल में अण्डे और बीज बारिश के आने तक वहाँ सूखी, निर्जल अवस्था में पड़े रहते हैं। बारिश का पानी उन्हें, भीतर और बाहर, अंकुरित होने का और नए जीवरूपों के पनपने का अवसर और परिवेश देता है।

पानी जीवन के लिए नितान्त आवश्यक क्यों है? वह एक ऐसा माध्यम प्रदान करता है जिसमें रसायन घुलते हैं और परस्पर अभिक्रिया करते हैं। पानी खुद भी रासायनिक क्रियाओं के घटित होने के लिए एक अभिकारक की तरह काम करता है। क्या कोई अन्य यौगिक केवल पृथ्वी पर ही नहीं बल्कि अन्य किसी भी जगह जीवन को उसी तरह से सहारा देता है जैसे पानी देता है? जैनोबॉयोलोजिस्ट (वे वैज्ञानिक जो पृथ्वी से परे किसी जगह पर जीवन के बारे में विचार करते हैं) ऐसा सोचते हुए नहीं प्रतीत होते। अनजाने जीवन की समस्त खोज इस बात पर केन्द्रित जान पड़ती है कि ब्रह्माण्ड में कहीं और पानी मौजूद है या नहीं। पृथ्वी पर पानी उपलब्ध है और समस्त जीवन उसका उपयोग करने के लिए विकसित हुआ है।

पृथ्वी पर रहने वाले हम सभी प्राणियों के पूर्वज पानी से भूमि पर स्थानान्तरित हुए, तब हमें पानी को प्राप्त करने, उसे अपने भीतर रखने और यह सुनिश्चित करने कि हमारी सन्तानों को बढ़ने के लिए पानी उपलब्ध रहे, इन सबके लिए तरीके विकसित करना पड़े। विभिन्न जीवरूपों के समूहों ने इस समस्या को अलग–अलग तरीकों से हल किया। एक जीवविज्ञानी की तरह इन सभी तरीकों का अध्ययन करना बहुत अद्भुत होता है।

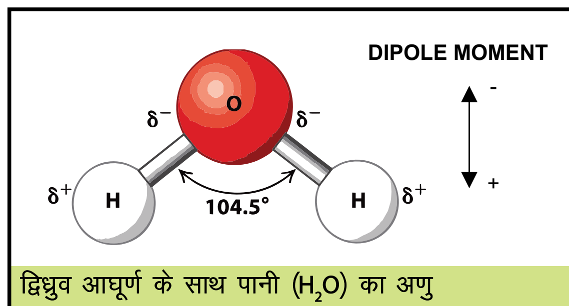


ऐसा माना जाता है कि ऊँट अपने कूबड़ में संचित पानी लेकर चलते हैं जो बिना पानी पिए लम्बी दूरियों तक जाने में उनकी सहायता करता है। वास्तव में उनके कूबड़ में वसा होती है। वसा, एक ऊष्मा–अवरोधक और पानी के स्रोत, दोनों तरह से काम करती है। भोजन के पचने की प्रक्रिया (मैटाबोलिज्म) पानी निकालती है, और इस तरह वह उस पानी का कुछ हिस्सा प्रदान करती है जिसकी सभी जीवरूपों को जरूरत होती है। एक ग्राम वसा के पचने की प्रक्रिया में एक ग्राम से भी अधिक पानी निकलता है। इसलिए, ऊँट को अपने कूबड़ से ऊर्जा और पानी दोनों प्राप्त होते हैं और वह बिना भोजन और पानी के कई दिनों तक चल सकता है। परन्तु, कुछ वैज्ञानिकों ने तर्क दिया है कि कूबड़ ऊँट के लिए पानी का स्रोत नहीं हो सकता, क्योंकि कूबड़ में मौजूद वसा को पचाने के लिए साँस की प्रक्रिया के द्वारा आक्सीजन लेने से शरीर के पानी में कमी आएगी।

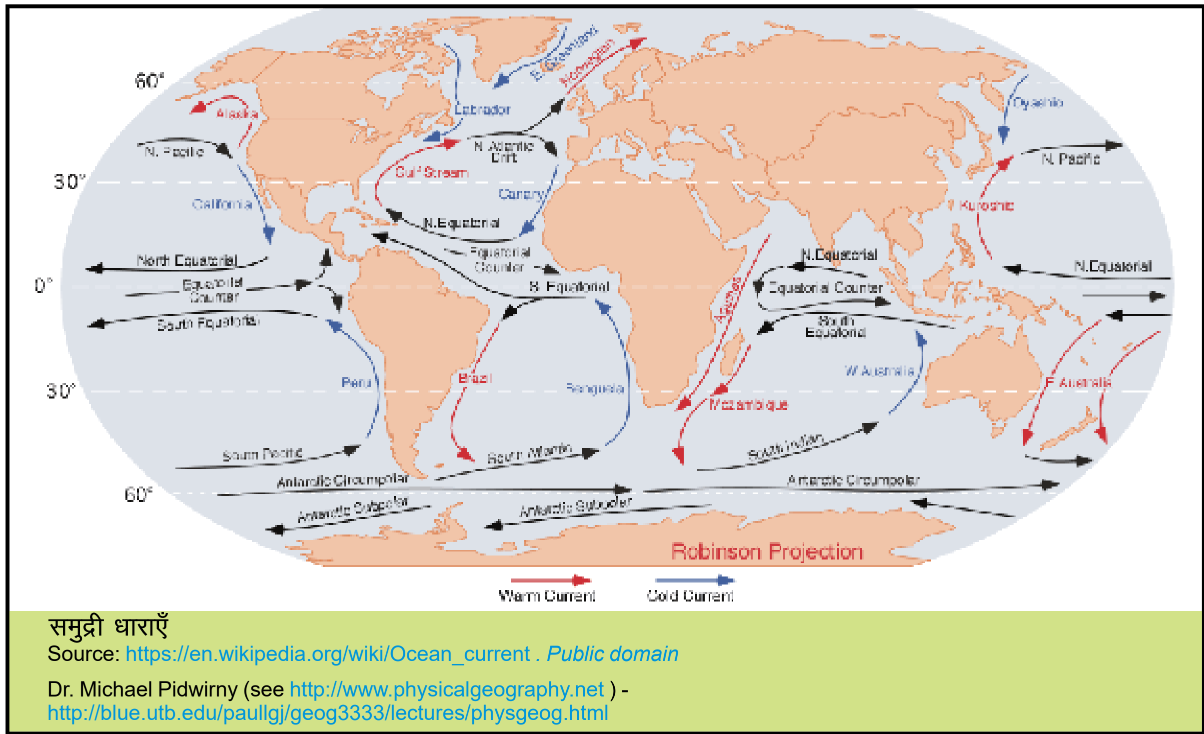
पृथ्वी पर पानी बारिश या बर्फबारी के रूप में, हवा में मौजूद कार्बन डाईआक्साइड को अपने में घोलते हुए गिरता है। फिर जमीन के ऊपर, खनिजों को घोलते हुए (विशेष रूप से चूना पत्थर $CaCO_3$ को एक रासायनिक अभिक्रिया द्वारा घोलते हुए), बहता है और अन्त में या तो जमीन के भीतर चला जाता है या बहकर समुद्रों में पहुँचता है। समुद्र में समुद्री जीव पानी में मौजूद कैल्सियम और कार्बोनेट आयनों का इस्तेमाल अपने लिए कठोर खोल जैसी सीपियों और शंखों को बनाने के लिए करते हैं।

जब पानी जमीन पर बहता है तो वह उसका दो प्रकार से क्षरण करता है – रासायनिक अभिक्रिया के द्वारा और मौसमों की मार की भौतिक गतिविधि के द्वारा। इस तरह वह भूतल को घाटियों और खोहों, खाइयों के आकार देता है। नहरों, नदियों और समुद्रों के माध्यम से बड़े पैमाने पर होने वाले परिवहन के लिए पानी का इस्तेमाल किया जाता है। लोग समुद्र में नौका चालन करते हैं। वे न केवल मौसमी हवाओं का, बल्कि मौसमी धाराओं का भी उपयोग करते हैं। आजकल विशालकाय यात्री जहाज भी ईंधन बचाने के लिए समुद्री धाराओं का उपयोग करते हैं। इन जल धाराओं (गल्फ स्ट्रीम, एल नीनो तथा अन्य) के जलवायु पर भी महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ते हैं।

इस अणु का रसायनविज्ञान क्या है जो इसे इतना महत्त्वपूर्ण बनाता है? इस अणु का सूत्र H_2O है, जिसका मतलब है कि इसमें हाइड्रोजन के दो परमाणु आक्सीजन के एक परमाणु के साथ मिलकर एक बन्ध बनाते हैं (नीचे का चित्र देखें)। ये परमाणु इलेक्ट्रानों को साझा करते हैं, लेकिन चूँकि साझे के इलेक्ट्रानों पर आक्सीजन के परमाणु का खिंचाव अधिक बलशाली होता है, इसलिए इस अणु में एक डाइपोल मूमेंट (द्विध्रुव आघूर्ण) कहलाने वाली प्रवृत्ति होती है, अर्थात इसका एक सिरा थोड़ा धनात्मक होता है और दूसरा थोड़ा ऋणात्मक होता है। इस कारण से पानी के अणुओं में एक–दूसरे को (धनात्मक सिरे से ऋणात्मक सिरे को) आकर्षित करने की क्षमता आ जाती है। चूँकि आक्सीजन के पास बन्धों से मुक्त कुछ इलेक्ट्रान भी होते हैं, तो धनात्मक H उन इलेक्ट्रानों से सम्बन्ध बनाता है, और एक निर्बल बन्ध निर्मित करता है जिसे हाइड्रोजन बन्ध कहते हैं। ये बन्ध कमजोर होते हैं (इनकी ताकत सामान्य बन्धों की ताकत के लगभग दसवें भाग के बराबर होती है), लेकिन वे पानी के अणुओं को आपस में चिपके रहने की सुविधा देते



द्विध्रुव आघूर्ण के साथ पानी (H_2O) का अणु



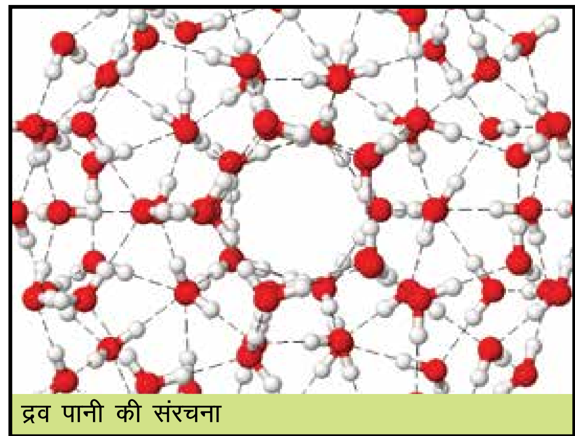
समुद्री धाराएँ
Source: https://en.wikipedia.org/wiki/Ocean_current . *Public domain*

Dr. Michael Pidwirny (see http://www.physicalgeography.net) - http://blue.utb.edu/paullgj/geog3333/lectures/physgeog.html

हैं। इसके परिणामस्वरूप दूसरे द्रवों की तुलना में पानी के व्यवहार में कुछ विचित्र (अनियमित) बातें दिखाई देती हैं।

पानी का आणविक द्रव्यमान 18 है। कमरे के सामान्य तापमान पर इसके जैसे द्रव्यमान वाले अन्य सभी यौगिक गैसों के रूप में होते हैं। पानी के अणु हाइड्रोजन बन्धों के द्वारा एक–दूसरे से चिपके रहते हैं, इस तथ्य का मतलब यह है कि इन अणुओं को एक–दूसरे से अलग करने के लिए ऊर्जा की आवश्यकता होती है, इसलिए सामान्य तापमान पर पानी द्रव अवस्था में रहता है। चूँकि

तापमान के अधिकांश पैमाने पानी के हिमांक (बर्फ के रूप में जमने का तापमान) और क्वथनांक (उबलने का तापमान) को अपने स्थिर बिन्दुओं की तरह इस्तेमाल करते हैं। फैरेनहाइट पैमाना बर्फ तथा नमक के मिश्रण के सबसे कम प्राप्त होने वाले तापमान को 0° की तरह लेता है और पानी के क्वथनांक को 212° मानता है।



द्रव पानी की संरचना

अणुओं को अलग करने के लिए आवश्यक ऊर्जा काफी ज्यादा होती है, इसलिए तापमान के एक विस्तृत दायरे – 0°C से 100°C तक – पानी द्रव रूप में ही रहता है।

पानी ऐसा एकमात्र पदार्थ है जिसे हम दैनिक जीवन में सामान्य रूप से सभी तीनों अवस्थाओं में देखते हैं : ठोस (बर्फ), द्रव (पानी) और गैस (वाष्प या भाप)।

पानी के इन गुणों में से कुछ को इसके हाइड्रोजन बन्धों की ताकत के माध्यम से समझाया जा सकता है। पानी की ऊष्मा धारिता बहुत अधिक होती है, अर्थात पानी के तापमान को 1° सैल्सियस बढ़ाने के लिए ढेर सारी ऊर्जा की जरूरत होती है, और जब वह ठण्डा होता है तब भी बड़ी मात्रा में ऊष्मा निकलती है। इसका मतलब है कि जीवनधारी सभी रूपों में, पाचन की चयापचयी प्रक्रियाओं (मैटाबोलिक रिएक्शन्स) के दौरान निकलने वाली ऊष्मा उनके शरीर में मौजूद पानी के द्वारा, तापमान में थोड़ी–सी ही वृद्धि के साथ, सोख ली जाती है। पानी के विशाल भण्डार और जलाशय उनसे सटे हुए भू–भागों के तापमानों को स्थिर बनाए रखने का काम भी गर्मियों में ऊष्मा को सोखकर और सर्दियों में उसे उत्सर्जित करके करते हैं। समुद्रतटीय शहर और विशाल झीलों के किनारे बसे नगरों के तापमान, आन्तरिक भू–भाग के नगरों के तापमानों की तुलना में मध्यम स्तर के होते है। यही कारण समुद्री हवाओं के लिए भी लागू होता है। दिन के दौरान भू–भाग समुद्र की अपेक्षा अधिक गरम हो जाता है, और उनसे गरम हवा ऊपर उठती है जिससे समुद्र की अपेक्षाकृत ठण्डी हवा नीचे खाली जगह को भरने के लिए खिंच आती है। बड़े पैमाने पर, मौसम की दृष्टि से, यही गतिविधि भारत में मानसून के दौरों का एक कारण होती है। और बहुत छोटे पैमाने पर किसी गरम दिन के दौरान तरणताल शीतल मालूम पड़ते हैं (क्योंकि उनका पानी बहुत अधिक गरम नहीं हुआ होता है) तथा किसी ठण्डी सुबह वे अपेक्षाकृत गरम लगते हैं (क्योंकि उनका पानी बहुत ज्यादा ठण्डा नहीं हुआ होता है)।

पानी की गलन तथा वाष्पीकरण ऊष्माएँ बहुत अधिक होती हैं, अर्थात बर्फ को 0°C पर 0°C के पानी में बदलने के लिए, और 100°C पर पानी को 100°C की भाप में बदलने के लिए बहुत–सी ऊर्जा की जरूरत पड़ती है। पौधों में प्रस्वेदन और पशुओं में पसीना आने की क्रिया चयापचयी (मैटाबोलिक) प्रक्रिया के दौरान पैदा हुई अतिरिक्त ऊर्जा को पानी के वाष्पीकरण के लिए इस्तेमाल करने के माध्यम से उसे निकालने में मदद करती है, और इस तरह उनके शरीर को ठण्डा करती है।

पानी के इन सभी गुणों को हाइड्रोजन बन्धों की ताकत के द्वारा समझाया जाता है, लेकिन पानी की कुछ अन्य विशेषताएँ भी हैं जिन्हें इतनी आसानी से समझाया नहीं जा सकता। जब द्रवों को ठण्डा किया जाता है तो वे सिकुड़ते हैं, क्योंकि उन्हें निर्मित करने वाले अणुओं के पास, कम तापमानों पर कम ऊर्जा रहती है, इसलिए वे एक–दूसरे के नजदीक आ जाते हैं। यह संकुचन तब तक जारी रहता है जब तक कि पूरा द्रव जम नहीं जाता। इसलिए आमतौर पर द्रवों की तुलना में ठोस अधिक घने होते हैं। परन्तु जब पानी ठण्डा होता है तो उसका घनत्व तब तक तो बढ़ता है जब तक कि वह 4°C पर पहुँचता है, पर उससे और ठण्डा होने पर वह घटने लगता है। द्रव पानी की तुलना में बर्फ कम घना और हल्का होता है, जो आपके पानी के गिलास में बर्फ के तैरते हुए टुकड़ों से साफ जाहिर होता है। अति ठण्डी जलवायु वाले इलाकों में पाए जाने वाले जीव–जन्तुओं के लिए इस तथ्य के बहुत महत्त्वपूर्ण निहितार्थ होते हैं। जब मौसम ज्यादा ठण्डा होने लगता है, तो सतह का पानी ठण्डा होकर नीचे तलहटी में बैठने लगता है। यह प्रक्रिया तब तक चलती है जब तक तापमान 4°C पर नहीं पहुँच जाता। इससे ज्यादा ठण्डा होने पर पानी सतह पर ही बना रहता है क्योंकि वह कम घना अर्थात हल्का होता है। जब पानी जमता है तो वह ऊपर से जमता है, और शेष नीचे का पानी, उदाहरण के लिए जमी हुई झील में सतह के नीचे का पानी लगभग 4°C पर बना रहता है। इस प्रकार सभी जलीय जीवरूप सर्दियों के महीनों में नीचे के अपेक्षाकृत गरम पर्यावरण में जीवित बने रहते हैं। दूसरी ओर चट्टानों के भीतर की दरारों में पानी के जमने पर उसमें हुआ फैलाव उनको चौड़ा करता है और उनकी भौतिक टूटन का कारण बनता है।

पानी के कई गुण इस प्रकार का व्यवहार दर्शाते हैं – वे तापमान के साथ–साथ लगातार एक तरह से

गतिविधियाँ

एलन लाइटमैन एक जाने–माने भौतिकशास्त्री और लेखक हैं। अपनी किताब 'डांस फॉर टू' में वे कहते हैं कि अधिकांश लोग चीजों को प्रत्यक्ष देखने के लिए स्वयं प्रयोग नहीं करते। वे बस उसे स्वीकार कर लेते हैं जो उन्होंने पढ़ा है। मेरे विचार में यह बात सत्य है। आजकल हमें लगता है कि इंटरनेट पर किसी प्रयोग को होते हुए देखना उसे खुद करने के जैसा ही है। मैं यहाँ कुछ सरल प्रयोगों की रूपरेखा प्रस्तुत कर रही हूँ। विज्ञान की कक्षाओं में इनका उपयोग पानी के गुणों को उजागर करने के लिए किया जा सकता है। इनमें से आपने कितने प्रयोगों के बारे में पढ़ा है और स्वयं कितने किए हैं?

1 पानी एक ध्रुवीय अणु है



इस बात को देखने के सबसे सरल और सहज तरीके के लिए, आपको एक नल, एक गुब्बारे तथा नाइलॉन या टेरिलीन के एक कपड़े के टुकड़े की जरूरत होगी। गुब्बारे को फुलाएँ, फिर नल को इतना खोलें कि उसमें से पानी की एक पतली धार निकले। गुब्बारे की सतह को कपड़े के टुकड़े से तेजी से रगड़ें और फिर उसे धार के पास लाएँ। किसी गैर–ध्रुवीय द्रव का व्यवहार देखने के लिए आपको एक 50 क्यूबिक सेंमी. की डिस्पोजेबिल सिरिंज, थोड़े–से केरोसीन या पेट्रोल और एक साथी की जरूरत पड़ेगी। अपने साथी से सिरिंज में पेट्रोल या केरोसीन भरवाकर उसे एक सतत धीमी धार में एक बर्तन में गिराएँ और फिर आवेशित गुब्बारे वाले इसी प्रयोग को दोहराएँ और दोनों प्रयोगों के अन्तर को देखें।

2 बर्फ पानी से कम घना, या हल्का, होता है





इस तथ्य को हम अपने बर्फ डले हुए पेय पदार्थों में हर समय देखते ही रहते हैं। वह सामान्य बात मालूम होती है। इसकी तुलना करने के लिए काँच के दो जार लें; एक में पानी भरकर उसमें बर्फ की एक डली डाल दें। दूसरे जार में पिघला हुआ द्रव मोम लें (गैस के चूल्हे पर मोमबत्तियों को पिघलाना आसान है) और उसमें मोमबत्ती का एक टुकड़ा डालें। परिणाम का अवलोकन करें।

3 पानी का पृष्ठ तनाव बहुत अधिक होता है

यह पानी के अणुओं के बीच में निर्मित हाइड्रोजन बन्धों के कारण उत्पन्न होता है। यहाँ फिर तुलनात्मक प्रयोग से मदद मिलती है। दो बिना किनारी वाले गिलास लें। एक को पानी से और दूसरे को पेट्रोल से ऊपर तक भर लें। गिलासों को एक ट्रे में रखना बेहतर होगा, ताकि यदि कुछ द्रव छलके तो उस ट्रे में गिरे। अब एक ड्रॉपर का इस्तेमाल करके प्रत्येक द्रव के गिलास में उसकी कुछ बूँदें और डालें। आप पानी के गिलास में कितनी बूँदें डाल सकते हैं और फिर वह कैसा दिखता है? कितनी बूँदें पेट्रोल के गिलास में डाल सकते हैं और वह कैसा दिखता है?

अब दो पिन लें, उन्हें अखबार के अलग–अलग टुकड़ों पर रखें और दोनों द्रवों की सतह पर तैराएँ। प्रतीक्षा करें और देखें।



4 जमने पर पानी फैलता है



एक पानी की बोतल लेकर उसे बिलकुल ऊपर तक भर लें। फिर कसकर उसका ढक्कन लगा दें। अब इस बोतल को फ्रीजर में तब तक के लिए रख दें जब तक कि उसका पूरा पानी जम नहीं जाता। इस प्रयोग में फैलान कम होगी यदि बोतल को फ्रीजर में रखने से पहले उसे एक प्लास्टिक के बैग में रख दें।

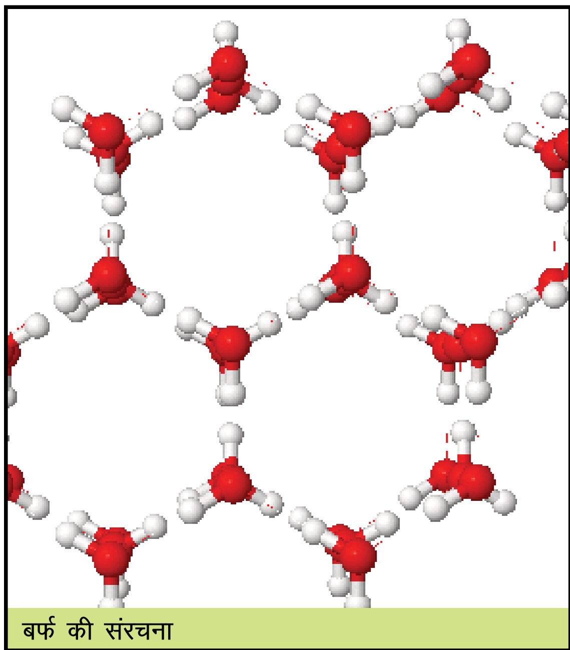
5 पानी का घनत्व लगभग 40°C के तापमान पर सबसे ज्यादा होता है

इस तथ्य का उपयोग यह समझाने के लिए किया जाता है कि तालाब ऊपर से क्यों जम जाते हैं। यदि आप पानी से भरा एक बर्तन फ्रीजर में रखते हैं तो आप देख सकते हैं कि बर्फ ऊपर से जमती है। एक काँच के जार, खाने के रंगों और एक थर्मामीटर लेकर तथा इस तथ्य का उपयोग करते हुए कि अलग–अलग घनत्व वाले द्रव आसानी से आपस में नहीं मिलते, क्या आप एक ऐसी गतिविधि निर्मित कर सकते हैं जो यह दर्शाए कि 40°C तापमान पर पानी अपने सबसे घने, या भारी, रूप में होता है?

यासमिन जयतीर्थ
अनुवाद : सत्येन्द्र त्रिपाठी






बर्फ की संरचना

नहीं बदलते, बल्कि एक न्यूनतम और एक अधिकतम, दो प्रकार की स्थितियाँ दर्शाते हैं।

1. ऊष्मा धारिता 35°C पर अपने न्यूनतम स्तर से गुजरती है, जबकि अधिकांश द्रव उसमें एक लगातार बढ़त दर्शाते हैं।
2. संपीड्यता (अर्थात दब सकने का गुण) – पानी को दबाकर संकुचित करना बहुत कठिन होता है। अधिकांश अन्य द्रवों के प्रतिकूल, पानी की संपीड्यता लगभग 46°C पर अपने न्यूनतम स्तर पर होती है। पानी की यह विशेषता सभी जीवरूपों (पौधों तथा पशुओं दोनों) को उनका ढाँचा बनाने के लिए एक सामग्री की तरह उसका उपयोग करने की सुविधा देती है। पौधे अपने पानी के कारण फूले हुए रहते हैं और उसका क्षय होने पर मुरझा जाते हैं। जैलीफिश, केंचुए और अन्य जीव–जन्तुओं के ढाँचों में पानी एक घटक के रूप में होता है।
3. पानी में ध्वनि की गति 74°C तक बढ़ती जाती है और फिर वह घटने लगती है।

ये बस कुछ ही ऐसे गुण हैं जो दर्शाते हैं कि अधिकांश अन्य द्रवों की तुलना में पानी अलग तरह से व्यवहार करता है। वर्तमान में बहुत–सा शोध कार्य इन्हीं भेदों को समझाने पर केन्द्रित है कि ऐसा होने का क्या कारण हो सकता है।

कमरे के सामान्य तापमानों पर पानी के अणु ढीले झुण्डों के रूप में होते हैं जो हाइड्रोजन बन्धों के कारण इकट्ठे बने रहते हैं, और जो काफी सरलता से अपने साथी बदलते रहते हैं। जब द्रव पानी ठण्डा होने लगता है, तो ये झुण्ड ज्यादा खुले छोरों वाली संरचनाओं में बदलने लगते हैं, जिनमें से प्रत्येक में चार हाइड्रोजन बन्ध होते हैं। इसलिए बर्फ की संरचना पानी की तुलना में ज्यादा खुली होती है और वह कम घनी तथा ज्यादा ऊष्मारोधी होती है। जब बर्फ पिघलती है तो उसके लगभग 15% हाइड्रोजन बन्ध टूट जाते हैं, जिससे उसका आयतन घट जाता है। जब इस प्रक्रिया को और अधिक ऊर्जा प्रदान की जाती है तो तापमान बढ़ता है, फिर और भी अधिक हाइड्रोजन बन्ध टूटते हैं, जिससे पानी का घनत्व बढ़ जाता है। लेकिन उच्च तापमान पर पानी के अणु एक–दूसरे से ज्यादा दूर होते जाते हैं जिससे पानी का घनत्व कम होने लगता है। इन दोनों विरोधी प्रक्रियाओं का संतुलन 4°C पर पानी को उसका अधिकतम घनत्व देता है। हाइड्रोजन बन्धों की ऐसी खुली और बन्द संरचनाओं का यह आन्तरिक क्रियाकलाप ही पानी को उसकी वह अनियमित संरचना और विशेषताएँ प्रदान करता है जो अभी भी शोध के महत्त्वपूर्ण विषय बने हुए हैं।



यासमीन जयतीर्थ *वर्तमान में बेंगलुरु के सेण्टर फॉर लर्निंग में पढ़ाती हैं। उन्होंने आई. आई. टी. बाम्बे से एम.एससी., तथा इण्डियन इंस्टीट्यूट आफ साइंस, बेंगलुरु से रसायन शास्त्र में पीएच.डी. की उपाधियाँ हासिल कीं। डाक्टरेट के उपरान्त उन्होंने अपना शोध कार्य यूनिवर्सिटी आफ लुईविल तथा इण्डियन इंस्टीट्यूट आफ साइंस, बेंगलुरु में किया।*
अनुवाद *: भरत त्रिपाठी*

चीजें गति क्यों करती हैं?

गति की खोजबीन करने के अन्तर्विषयी रास्ते

स्मिता बी.

गति के बारे में मनुष्यों की अधिकांश समझ अपेक्षाकृत हाल ही में हासिल हुई है – चाहे वह पृथ्वी की गति हो, ब्रह्माण्ड का फैलना हो, परमाणुओं की अनवरत गति हो या जीवरूपों में गति करने की प्रक्रिया हो। विभिन्न विषयों से प्राप्त होने वाली इसकी समझ को समेकित करना, इस घटना के प्रति एक सर्वांगी दृष्टिकोण विकसित करने के लिए बेहद जरूरी है। यह लेख गति के उत्पन्न होने के कारणों का विभिन्न विषयों के माध्यम से अध्ययन करने का सुझाव देता है ताकि यह उनको जोड़ने वाले विषयसूत्र का काम कर सके।

"संसार सदैव गतिमान रहता है।" – वी.एस.नायपाल'

क्या आपको याद है जब आपने पहली बार रात को किसी टूटते तारे को आकाश में एक जलती हुई लकीर बनाकर गुम होते हुए देखा था? मुझे अब भी उस विस्मय का स्मरण हो आता है जो मुझे तब अनुभव हुआ था जब मैंने ऐसे एक टूटते तारे की चमकदार तेज गति को और फिर उसके एकाएक विलीन हो जाने का दृश्य देखा था। वह इतनी जरा–सी देर के लिए दिखाई दिया था कि ऐसा लगा कि वह शायद मेरे मन का भ्रम हो सकता है!

हमें प्रकृति में ऐसी बहुत–सी हलचलें दिखाई देती हैं जो जादुई लगती हैं। चाहे वह किसी साँप की सरसराती हुई गति हो, या सहलाती–सी लहरों का तट से टकराना या फिर किसी छुई–मुई के पौधे की पत्तियों का तेजी से बन्द होना, सभी गतियाँ बहुत चित्ताकर्षक होती हैं।

यहाँ तक कि जो चीजें स्थिर प्रतीत होती हैं, वे भी वास्तव में गतिमान होती हैं। पौधे भी महत्त्वपूर्ण रूप से गति करते हैं, हालाँकि उनकी जड़ें जमी रहती हैं। बस इतना है कि उनकी गति इतनी धीमी होती है कि हमें यह समझने में कई सप्ताह, महीने या साल लग जाते हैं। हमारे ग्रह की सतह, पहाड़ और हिमनद (ग्लेशियर), सभी सदियों के अन्तराल में कुछ इंचों की गति करते हैं। जब हमें आसपास की हवा रुकी हुई लगती है तब भी उसमें गति होती है। उसकी इस हलचल को हम तब देख पाते हैं जब किसी अंधेरे कमरे में रोशनी की किरण आती है और उसमें धूल के कण प्रकाशित होकर नाचते हुए दिखाई देते हैं। प्रकाश स्वयं भी गति करता है, हालाँकि उसकी गति इतनी तेज होती है कि हमारी आँखें उसे अनुभव नहीं कर पातीं।

चूँकि गति इतनी व्यापक रूप से घटने वाली घटना है, इसलिए हमारे स्कूलों में सभी विषयों के

अन्तर्गत उसका अध्ययन किया जाता है।

माध्यमिक स्कूल के बच्चों के साथ इस प्रसंग की छानबीन करना एक बहुत लाभदायक और रोचक अनुभव हो सकता है। बच्चों में तो वैसे ही गति करने की अदम्य इच्छा होती है – चाहें तो किसी भी शिक्षक से पूछकर देख लीजिए जिसने अपनी कक्षा को स्थिर रखने का प्रयास किया हो! इस प्रसंग को पढ़ाने में विद्यार्थियों की गति करने की इस लालसा को सवाल पूछने के उनके जोश से जोड़ा जा सकता है।

जीवविज्ञान की कुछ पाठ्यपुस्तकों में उल्लेख किया जाता है कि गति जीवन का लक्षण है। लेकिन भूगोल, भौतिकशास्त्र और रसायनशास्त्र बताते हैं कि महासागर, गैलेक्सियाँ और सभी अणु भी गति करते हैं! इसलिए गति केवल जीवन का विशेष लक्षण कैसे हो सकती है? क्या ब्रह्माण्ड में **कोई भी चीज** सचमुच में स्थिर है? और कौन–सी बात इन सबको गति करने के लिए बाध्य करती है? ऐसे प्रश्न वे साझे विषयसूत्र हो सकते हैं जिनका उपयोग हम अन्तर्विषयी दृष्टिकोण से गति के प्रसंग को समझने के लिए कर सकते हैं।[2]

गति क्या है?

"यह मानकर कि समय, आकाश, स्थान तथा गति से सभी लोग अच्छी तरह परिचित होते हैं, मैं उनकी परिभाषा नहीं करता। मैं सिर्फ इतनी टिप्पणी जरूर करूँगा कि कुछ लोग इन राशियों को अन्य किन्हीं दृष्टियों से न देखकर, उनके बारे में केवल स्थूल वस्तुओं से उनके सम्बन्ध की दृष्टि से ही देखते हैं। और तब कुछ पूर्वधारणाएँ उत्पन्न होती हैं...!" – सर आइजक न्यूटन[3]

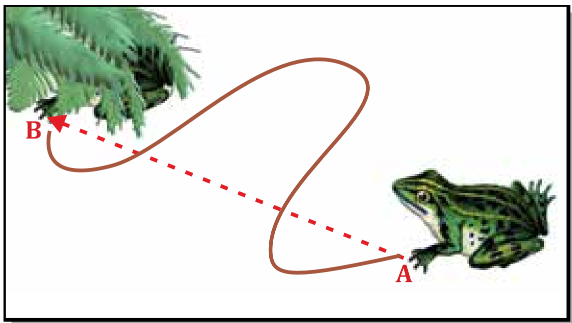
एक अन्तर्विषयी पाठ्यक्रम तैयार करने में एक प्रारम्भिक चुनौती उस भाषा से परिचित होना है जिसका उपयोग विभिन्न विषयों में समान अवधारणाओं के लिए किया जाता है।[4] उदाहरण के लिए, 'मूवमेंट (हलचल)' और 'मोशन (गति)' में क्या अन्तर है? और 'लोकोमोशन (संचलन)' तथा 'डिस्प्लेसमेंट (स्थानान्तरण)' के बारे में क्या कहेंगे? ऐसे अनेक शब्द होते हैं जो प्रत्येक विषय के लिए विशिष्ट होते हैं और जिन्हें जानना उपयोगी होता है। इस प्रसंग से सम्बन्धित भी ऐसे कुछ खास शब्द हैं, जैसे भौतिकशास्त्र में स्पीड (चाल), वैलोसिटी (वेग), ऐक्सीलरेशन (त्वरण), मूमेंटम (आवेग), भूगोल में रोटेशन (घूर्णन), रिवोल्यूशन (परिक्रमण), जीवविज्ञान में बोन (हड्डी), कार्टिलेज (लचीली हड्डी), मसल (मांसपेशी) और ज्वाइंट (जोड़)। हमें इसकी भी जाँच करना चाहिए कि क्या उन्हीं शब्दों के विभिन्न विषयों में भिन्न–भिन्न अर्थ होते हैं।

तो, क्या 'मूवमेंट (हलचल)' और 'मोशन (गति)' में अन्तर होता है? वास्तव में तो नहीं होता, हालाँकि इनमें से कोई एक शब्द प्रत्येक विषयक्षेत्र में बार–बार इस्तेमाल किया जाता है। उदाहरण के लिए, हमारी भौतिकशास्त्र की पाठ्यपुस्तकें 'मूवमेंट' शब्द के बजाय आमतौर पर 'मोशन' शब्द का उपयोग करती हैं। मूवमेंट (हलचल) और मोशन (गति), दोनों ही शब्द समय के साथ स्थान में परिवर्तन होना बताते हैं।

> हम कहते हैं कि हिमालय की भूगर्भीय परत हर साल लगभग दो सेंटीमीटर के स्थान परिवर्तन के कारण मध्य एशिया की दिशा में गति करती है।[5]

क्या 'मूवमेंट' का वही अर्थ होता है जो 'लोकोमोशन' या 'डिसप्लेसमेंट' का होता है? नहीं, क्योंकि बाद के दोनों शब्दों का अर्थ केवल 'स्थिति में परिवर्तन' की अपेक्षा ज्यादा विशिष्ट होता है।

जीवविज्ञान में, 'लोकोमोशन (संचलन)' का मतलब किसी जीवरूप के शरीर का किसी नए स्थान पर विस्थापित होना होता है। इसलिए, किसी जीवरूप के सभी मूवमेंट लोकोमोशन नहीं होते। उदाहरण के लिए, आपने यदि बैठे–बैठे अपना हाथ हिलाया तो आपने कोई लोकोमोशन नहीं किया होता। आपके हाथ ने हलचल तो की पर आपके शरीर का विस्थापन नहीं हुआ।



एक मेंढक की इस तस्वीर को देखिए जिसमें वह खुली हुई स्थिति 'ए' से पत्तों से ढँकी दूसरी स्थिति 'बी' पर जाता है। वह गहरे भूरे रंग से दर्शाए गए वक्रीय मार्ग से होकर वहाँ पहुँचता है।

परन्तु उसका विस्थापन इससे काफी कम है और वह 'ए' से 'बी' तक के बिन्दुवाले तीर से दर्शाया गया है। जब मेंढक 'ए' से 'बी' की ओर गया तब उसने संचलन (लोकोमोशन) किया। परन्तु बिन्दु 'बी' पर पहुँचकर जब वह उकड़ूँ बैठता है या अपनी पलकें झपकाता है, तब वह हलचल तो करता है लेकिन वह कोई संचलन या विस्थापन नहीं दर्शाता।

दूसरी ओर, विस्थापन भौतिकशास्त्र का शब्द है। वह किसी वस्तु की प्रारम्भिक और अन्तिम स्थितियों के बीच की सबसे कम दूरी बताता है। साथ ही, वह गति की दिशा भी बताता है। पिछले उदाहरण में, यदि आपका हाथ शरीर के दाहिनी ओर 10 सेंटीमीटर गया होता, तो उसका विस्थापन दाईं ओर 10 सेंटीमीटर होता।

हमारे आसपास होने वाली विभिन्न प्रकार की गतियाँ

माध्यमिक स्कूल की कक्षा में 'मूवमेंट' के प्रसंग का परिचय करवाने का एक उत्तम तरीका अलग–अलग विद्यार्थी के अवलोकनों से शुरुआत करना है। विद्यार्थियों से उनके आसपास की गतियों का अवलोकन करने और उनकी सूची बनाने के लिए कहें। उन्हें हर प्रकार की हलचलों (जानवरों की, हवा में हिलने–डुलने वाली चीजों की, स्वचालित मशीनों की गतियों की, यहाँ तक कि पानी के बहने की) को खोजने की याद दिलाएँ।

एकबारगी जब वे अपनी सूची तैयार कर लें, तो विद्यार्थियों से उन हलचलों की नकल उतारने और कक्षा में प्रदर्शन करने को कहें जिनका उन्होंने अवलोकन किया है। इस प्रसंग को पढ़ाने में *काइनैस्थेटिक लर्निंग (क्रियात्मक शिक्षण)* के करने के द्वारा सीखने की पद्धति का बार–बार इस्तेमाल किया जा सकता है। जैसा कि सूसन ग्रिस कहती हैं कि, "बच्चों को उनकी कुर्सियों से उठाकर सक्रिय कर देने भर से ही हम 'मैं वास्तव में यहाँ नहीं होना चाहता'– वाली शिक्षा" का नीरस ढाँचा तोड़ना शुरू कर देते हैं।'' विद्यार्थी जब गति के बारे में सीख रहे हों, तब उन्हें स्थिर बिठाए रखना तो एक अपराध जैसा है।[6]

इस गतिविधि के अन्त में विद्यार्थियों ने जिन विभिन्न प्रकार की गतियों का अवलोकन किया है, उनके प्रकार के आधार पर उन्हें वर्गीकृत करने के लिए कहना उपयोगी होगा। तो हमारे आसपास की विभिन्न प्रकारों की गतियाँ कौन–सी हैं? गतियों का वर्गीकरण भी विषयक्षेत्र के अनुसार बदलता है।

किसी भौतिकशास्त्री से इसके बारे में पूछिए तो वह ऐसे शब्दों का हवाला देगा जैसे 'ट्रांसलेशनल (स्थान परिवर्तन की गति)', 'पीरियोडिक (आवर्ती)', 'हार्मोनिक (लयबद्ध अनुकम्पित)' तथा 'रोटेशनल (चक्रीय)'। वहीं, दूसरी ओर, एक जीवविज्ञानी पहले तो ऐसे कठिन शब्द इस्तेमाल करेगा जैसे कि 'नैस्टिक (संकेत से उकसाया गया)' तथा 'ट्रॉपिक (प्रकाश अनुवर्ती)', और फिर ऐसे शब्दों की झड़ी लगा देगा जैसे 'क्राल (रेंगना), क्लाइंब (चढ़ना), हॉप (कुलाँचे भरना), ग्लाइड (सरकना), हॉवर (मँडराना), अनडुलेट (तरंगित होना)...'। एक भूवैज्ञानिक 'रोटेशन्स (घूर्णननों), रिवोल्यूशन्स (परिक्रमाओं), लहरों, ज्वार–भाटों और धाराओं' आदि का उल्लेख कर सकता है। एक रसायनशास्त्री 'कम्पनों, ब्राउनियन गति' आदि की बात करेगा। आप शब्दों के इस कोलाहल को कैसे समझेंगे?

एक गहरी साँस लीजिए और ध्यान रखिए कि ये सारे शब्द हमारी सुविधा के लिए यहाँ हैं। हमें केवल उतने विस्तार में जाना है जितना कि हमारे

विद्यार्थियों के लिए जरूरी है।

हम शुरुआत बुनियादी प्रकार की गतियों से करते हैं जैसी कि वे **मैकेनिक्स (यांत्रिकी)** द्वारा परिभाषित की गई हैं। जैसा कि आप जानते हैं, मैकेनिक्स, भौतिकशास्त्र की वह शाखा है जिसका सम्बन्ध वस्तुओं पर बलों की क्रिया के कारण होने वाली उनकी गति से होता है। मैकेनिक्स में गतियाँ चार प्रकार की हो सकती हैं।

ऐसी गति जिसके परिणामस्वरूप वस्तु के स्थान में परिवर्तन होता है, ***स्थानान्तरण गति (ट्रांसलेशनल मोशन)*** कहलाती है। आप पूछ सकते हैं कि क्या किसी और प्रकार की गति भी होती है? बिलकुल हो सकती है। उदाहरण के लिए, यदि कोई ट्रेन बेंगलुरु से दिल्ली जाती है और फिर वापिस बेंगलुरु आती है, तो उसने बहुत गति की होती है। लेकिन उसकी स्थिति में कुल मिलाकर कोई परिवर्तन नहीं होता। इसी प्रकार से यदि कोई वस्तु किन्हीं दो स्थितियों के बीच बार–बार गति करती है तो वह ***दोलन की गति (ऑसिलेटरी मोशन)*** दर्शाती है। परन्तु दूसरी ओर, यदि कोई वस्तु बिना कहीं गए अपने ही चारों ओर घूमती है, तो वह ***घूर्णन गति (रोटेशनल मोशन)*** दर्शाती है। और अन्त में, यदि किसी वस्तु की गति का पूर्वानुमान नहीं लगाया जा सकता तो वह ***अनियमित गति (रैंडम मोशन)*** करती है।

> एक इल्ली जो जमीन पर पहुँचने के लिए किसी पौधे पर नीचे की ओर रेंगती है, वह स्थानान्तरण गति दर्शाती है। किसी पेंडुलम की बार–बार दोहराई जाने वाली गति दोलन गति होती है। किसी सीडी प्लेयर में घूमती हुई सीडी की गति घूर्णन गति है। किसी गैस में उसके अणुओं की गति का पूर्वानुमान नहीं लगाया जा सकता इसलिए वह अनियमित गति है।

जानवरों की गतियाँ

"उड़ने वाले कीट और पक्षी अपने पंखों को ऊपर और नीचे फड़फड़ाते हैं, तैरती हुई मछलियाँ अपनी पूँछों को एक तरफ से दूसरी तरफ हिलाती रहती हैं, और दौड़ते हुए स्तनपाई जानवर अपने पैरों को आगे और पीछे की ओर चलाते हैं। इन सभी मामलों में, एक ऐसा ढाँचा जिसमें द्रव्यमान होता है किसी ऐसे तरल पदार्थ (या हवा या पानी) में दोलन करता है जो उसकी गति का प्रतिरोध करता है।" –आर. मैकनील एलैक्जेंडर[7]

अभी तक हमने चार प्रकारों की गति को देखा है। क्या यह हमारी कक्षाओं के लिए पर्याप्त नहीं है? अच्छा तो, यह कहने में कि "कंगारू कुलाँचें भरते (हॉप) हैं जबकि घोड़े चौकड़ी भरते हुए दौड़ते हैं (गैलप)" और यह कहने में कि "कंगारू और घोड़े स्थानान्तरण गति करते हैं" दिखाए जा रहे फर्क को देखें! जानवरों की लगभग समस्त गति स्थानान्तरण गति होती है, पर जब हम उस गति को बारीकी से सही–सही बताना चाहते हैं तो हम अन्य शब्दों का इस्तेमाल करते हैं।

जानवरों के स्थान परिवर्तन (लोकोमोशन) के प्रकार उस माध्यम पर निर्भर करते हैं जिसमें उनकी गति घटित होती है। पानी के अन्दर होने वाली समस्त गति ***तैरना (स्विमिंग)*** होती है, हालाँकि उसका आगे फिर ऐसी गतियों में वर्गीकरण किया जा सकता है जैसे कि ***लहराना (अनडुलेशन) और आगे को धक्का देना (प्रोपल्शन)***। हवा में होने वाली गति विविध प्रकार की उड़ना ***(फ्लाइंग)*** होती है –***तिरना (ग्लाइडिंग), मँडराना (हॉवरिंग) और फड़फड़ाना (फ्लैपिंग)***। जमीन के नीचे की गति आमतौर पर ***बिल खोदना (बरोइंग)*** होती है। जमीन पर होने वाली गति में सबसे अधिक विविधता होती है और वह ***चलना, दौड़ना, कुलाँचें भरना, चढ़ना, कूदना*** या ***रेंगना*** हो सकती है।

इन सभी हलचलों का परिणाम स्थानान्तरण गति होता है। लेकिन क्या जानवरों में अन्य प्रकार की गतियाँ भी देखी जाती हैं? जरा अपने हृदय के धड़कने के बारे में सोचिए – वह धड़कता तो रहता है, पर उसका धड़कना छाती के अन्दर एक ही स्थान पर होता है। यह दोलन गति का एक उदाहरण है, जिसमें हृदय दो स्थितियों के बीच में

आगे–पीछे गति करता है। अब अपने सिर को एक तरफ से दूसरी तरफ ले जाइए। आपकी गर्दन में धुरी का काम करने वाला जोड़, जो आपके सिर को इस तरह से हिलाने की आपको सुविधा देता है, इसके लिए घूर्णन गति पर निर्भर करता है। क्या आप जानवरों में दोलन और घूर्णन गति के और उदाहरणों के बारे में सोच सकते हैं?

पौधों की गति

"उन्हें एक–दूसरे से लड़ना पड़ता है, उन्हें सहवासी साथियों के लिए स्पर्धा करना पड़ती है, उन्हें नए क्षेत्रों में हमला करके घुसपैठ करना पड़ती है। पर हमें कतई इन नाटकीय घटनाओं का पता नहीं चलता। इसका कारण यह है कि पौधे, निश्चित रूप से, समय के एक अन्य पैमाने पर जीते हैं।" –सर डेविड ऐटिनबरो[8]

हम आमतौर पर पौधों के बारे में ऐसा नहीं सोचते कि वे गति करते हैं, लेकिन उनके जीवन में ढेरों प्रकार की गतिविधि होती हैं। उनकी जो हलचलें हमारी नजर में आती हैं वे ***रैपिड प्लांट मूवमेंट्स (त्वरित वनस्पति हलचल)*** होती हैं। ये हलचलें एक सेकेण्ड के भी छोटे से अंश में, या कुछ सेकेण्डों में घटित होती हैं। ऐसी त्वरित गतियों के उदाहरणों में वीनस फ्लाईट्रैप (भक्षी पौधे का मक्खी पिंजरा) का खट से अपने शिकार को बन्द कर लेना, छुई–मुई के पौधे तथा टैलीग्राफ पौधे की पत्तियों की गतियाँ शामिल हैं। पौधों में सबसे तेज गति से होने वाली ज्ञात गति सफेद मलबेरी के पेड़ों से पराग का फेंका जाना है। यह घटना ध्वनि की गति से आधी गति पर घटती है।[9]

परन्तु, पौधों की अधिकांश गतियाँ अकल्पनीय रूप से धीमी होती हैं और उनको घटित होने में कई सप्ताह और महीने लग जाते हैं। ये गतियाँ विभिन्न प्रकार के उकसाने वाले संकेतों जैसे कि प्रकाश, पानी, गुरुत्वाकर्षण,रसायनों और सूर्य आदि के कारण होती हैं। इन गतियों में सबसे प्रसिद्ध गति सूरजमुखी के फूलों के द्वारा "सन–ट्रैकिंग (सूर्य का पीछा करना)" है। कुछ अन्य उदाहरणों में प्राथमिक जड़ों का गुरुत्व की ओर बढ़ना और तने के सिरों का प्रकाश की ओर झुकना शामिल है।

पौधों की ये गतियाँ तब और ज्यादा रोचक लगती हैं जब उनको रुक–रुककर ली गई बहुत–सी क्रमिक तस्वीरों (टाइम–लैप्स फोटोग्राफी) द्वारा कैद किया जाता है और फिर तेज गति पर दिखाया जाता है। पौधों की गति के कुछ ऐसे मनोहर वीडियो इस वैबसाइट पर देखे जा सकते हैं जिसे रॉजर पी. हैंगार्टर ने निर्मित किया है: http://plantsinmotion.bio.indiana.edu[10]

आकाशीय पिण्डों की गतियाँ

"हमारी दृष्टि की इन्द्रिय हमारे सामने बृहस्पति का चक्कर लगाते हुए उसके चार उपग्रहों का दृश्य प्रस्तुत करती है, वैसे ही जैसे चन्द्रमा पृथ्वी का चक्कर लगाता है, साथ ही बृहस्पति का यह पूरा समूह 12 वर्षों की अवधि में सूर्य के चारों ओर एक विराट कक्षा की यात्रा पूरी करता है....।" –गैलीलियो गैलिली एवं जोहानस कैपलर[11]

ऊपर हमने ऐसे जीवनधारी प्राणियों की गतियों को देखा जो आकार के पैमाने पर लगभग हमारे समान होते हैं। अब हम गतियों को ज्यादा बड़े पैमाने पर देखें अर्थात ग्रहों और तारों और स्वयं ब्रह्माण्ड की गतियों को देखें।

इतिहास के अधिकांश दौर में मनुष्य सोचते रहे कि ब्रह्माण्ड पृथ्वी की परिक्रमा करता था। आखिरकार क्या सूर्य पूर्व में नहीं उगता था और पश्चिम में अस्त नहीं होता था? और क्या रात को तारे और चन्द्रमा पृथ्वी के इर्द–गिर्द नहीं घूमते थे? ब्रह्माण्ड में गतियों की हमारी मौजूदा, जबर्दस्त रूप से बदली हुई, समझ ऐसे कई साहसी वैज्ञानिकों के कार्य से हासिल हुई जिन्होंने तत्कालीन आधिकारिक सत्ता को चुनौती दी।

ब्रह्माण्ड का पृथ्वी–केन्द्रित सिद्धान्त यह दावा करता था कि सूर्य, चन्द्रमा, तारे और ग्रह सभी पृथ्वी का चक्कर लगाते थे। निकोलस कोपर्निकस ने इस सिद्धान्त को चुनौती देने वाली अपनी कृति अपनी मृत्यु के थोड़े समय पहले तक प्रकाशित नहीं की थी क्योंकि वह ईश–निन्दा मानी जाती

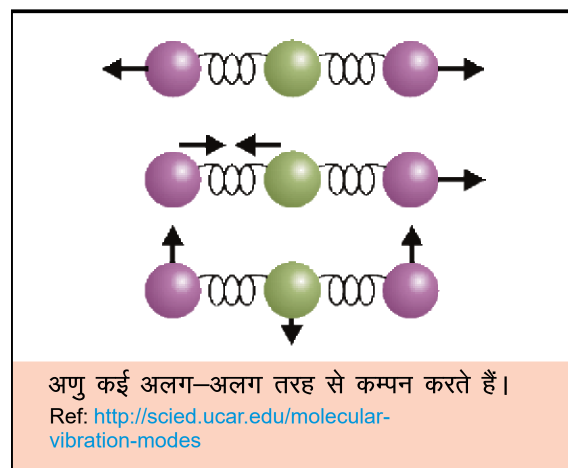
थी! गैलीलियो गैलिली को यह कहने के लिए चर्च द्वारा सताया गया कि वह पृथ्वी थी जो कि सूर्य का चक्कर लगाती थी, न कि इसका उलटा, जैसा कि माना जाता था। आधुनिक विज्ञान का प्रारम्भ तब हुआ जब मनुष्यों ने यह स्वीकार कर लिया कि पृथ्वी ब्रह्माण्ड का केन्द्र नहीं थी। बल्कि, पृथ्वी ही हर 24 घण्टे में अपने ही चारों ओर पश्चिम से पूर्व की ओर पूरी घूम जाती है, और इसीलिए आकाशीय पिण्ड हमें पूर्व से पश्चिम की ओर गति करते हुए प्रतीत होते हैं।

ग्रीक विद्वानों के बाद, कोपर्निकस वह पहला व्यक्ति था जिसने यह सुझाया कि दिखाई देने वाले पाँच ग्रह और पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करते हैं। गैलीलियो ने अपने टैलिस्कोप का उपयोग करते हुए विस्तृत अवलोकन किए और बृहस्पति के इर्द–गिर्द उसके उपग्रहों के मौजूद होने की खोज की। और जोहानस कैपलर ने प्रस्तावित किया कि ग्रहों तथा उपग्रहों की परिक्रमा कक्षाएँ वृत्ताकार न होकर अण्डाकार (इलिप्टिकल) थीं। बाद में, सौर मण्डल में अन्य ग्रहों (यूरेनस, नैपचून तथा प्लूटो) की खोज के साथ ही, आकाश में ग्रहों की गतियों को अधिकांश रूप से कैपलर के ***लॉज ऑफ प्लैनेटरी मोशन (ग्रहों की गति के नियम)*** के द्वारा समझा गया।

अब हम जानते हैं कि पृथ्वी अपनी धुरी पर अपने ही चारों ओर घूर्णन करती है और सूर्य की परिक्रमा करती है। ये किस प्रकार की गतियाँ हैं?

बीसवीं सदी के शुरुआती दौर तक, यह मान लिया गया कि सूर्य भी हमारी आकाशगंगा के केन्द्र में स्थित नहीं है। उसके बजाय, इस आकाशगंगा यानी मिल्की–वे आकाशगंगा, का केन्द्र उसकी एक छोटी भुजा में स्थित अनेक तारों में से एक तारा है। एडविन हबल यह सिद्ध करने में सफल हुए कि इस विराट ब्रह्माण्ड में ऐसी हजारों आकाशगंगाएँ हैं। इससे भी ज्यादा दिलचस्प बात है कि हबल के आँकड़ों ने दिखाया कि जो आकाशगंगा पृथ्वी से जितनी ज्यादा दूर थी, वह उतनी ही तेज गति से और दूर जा रही थी। इसका यह मतलब था कि अधिकांश आकाशगंगाएँ निरन्तर बढ़ती हुई गतियों से एक–दूसरे से दूर जा रही थीं। और, इसलिए यह अर्थ भी निकला कि ब्रह्माण्ड फैल रहा था!

अणुओं की गति



अणु कई अलग–अलग तरह से कम्पन करते हैं।
Ref: http://scied.ucar.edu/molecular-vibration-modes

अणु कई अलग–अलग तरह से कम्पन करते हैं।

"क्योंकि यहाँ तुम अनेक कणों को अदृश्य धक्कों के कारण अपना छोटा–सा रास्ता बदलते हुए,

और फिर वापिस पीछे धकेला जाते हुए,

सभी दिशाओं में इधर–उधर होते हुए देखोगे।

देखो, उनकी सभी बदलती हुई गतियाँ पुरानी हैं,

वे आदिकालीन परमाणु से चली आ रही हैं.... ।"

–टाइटस लूक्रीशस कैरस [12]

ग्रहों तथा आकाशगंगाओं से अब हम पैमाने के दूसरे छोर पर चलें और सूक्ष्मदर्शी (माइक्रोस्कोप) से देखी जाने वाली चीजों से और भी सूक्ष्म स्तर पर झाँकें। अब हम तुरन्त मान लेते हैं कि समस्त पदार्थ परमाणुओं या अणुओं से मिलकर बना होता है। लेकिन सदियों तक परमाणु केवल एक काल्पनिक अवधारणा थे, जिनका कोई वास्तविक प्रमाण नहीं था। परन्तु लूक्रेटियस के उद्धरण, जो 2000 वर्षों से भी अधिक पुराना है, में उनके प्रमाण का बीज मौजूद था!

अपनी दार्शनिक कविता में लूक्रीशस ने सूजर्य की किरण में नजर आने वाले धूल के कणों की ध्यान आकर्षित करने वाली गति का वर्णन किया है। उसने अनुमान लगाया कि धूल कणों को वायु में मौजूद अदृश्य गतिमान परमाणुओं द्वारा धक्के दिए जा रहे थे। अब हम जानते हैं कि धूल के कणों की गति वास्तव में ऊष्मीय धाराओं (थर्मल करेंट्स) के कारण होती है। पर यह गति उल्लेखनीय रूप से ब्राउनियन मोशन के समान होती है जिसने परमाणुओं और अणुओं के अस्तित्व की पुष्टि करने में सहायता की।

रॉबर्ट ब्राउन ने अपने सूक्ष्मदर्शी से पराग का अध्ययन करते हुए कुछ कणों को पराग से उत्सर्जित होते हुए देखा। ये कण पानी में बेचैनी से इधर–उधर इस तरह से गति कर रहे थे, जैसे कि वे जीवित हों। किसी द्रव या गैस (तरल पदार्थ) में निलम्बित कणों की इस बेतरतीब अनियमित गति को अब ब्राउनियन मोशन के नाम से जाना जाता है। उसके दशकों बाद, अल्बर्ट आइंस्टीन ने समझाया कि ये कण, स्वयं उस तरल पदार्थ के निरन्तर गति करते हुए परमाणुओं और अणुओं से टकराने के कारण, बेचैनी भरी हलचलें दर्शाते थे। अदृश्य परमाणुओं की गति इस तरह उनके द्वारा उनसे बड़े दिखाई देने वाले कणों को गति देने के कारण प्रकट हुई।

हमने अभी देखा कि किसी तरल पदार्थ के अणु निरन्तर गति कर रहे होते हैं। पर किसी ठोस पदार्थ के अणुओं में क्या होता है? यह पता चला कि ठोस के अणु भी गति करते हैं। परन्तु, कणों के गति करने का ढंग जरूर पदार्थ की अवस्था पर निर्भर करता है। उदाहरण के लिए, इसका मतलब है कि पानी के अणु, बर्फ में, द्रव पानी में और पानी की वाष्प में अलग–अलग प्रकार से गति करते हैं।

ठोस पदार्थों के कण एक नियमित व्यवस्था में सघन रूप से साथ–साथ जमाए गए होते हैं। फिर भी, ठोस अणु कम्पन करते हैं और अपनी नियत स्थिति पर घूर्णन करते हैं। कम्पन एक सन्तुलन बिन्दु के इर्द–गिर्द एक प्रकार का दोलन होता है। इन हलचलों के बावजूद, ठोस पदार्थ अपने अणुओं के बीच के कसे हुए बन्धों के कारण सख्त या अनम्य होते हैं।

द्रवों में, उनके कण ज्यादा ढीले तरीके से साथ होते हैं। द्रव कण पास तो होते हैं, लेकिन वे एक–दूसरे के इर्द–गिर्द स्वतंत्रतापूर्वक सरक सकते हैं। यही कारण है कि द्रव पदार्थ अपने पात्र का आकार ग्रहण कर पाते हैं। द्रव कणों में कम्पन, घूर्णन तथा स्थानान्तरण की गतियाँ प्रदर्शित होती हैं।




जहाँ हम जानवरों में होने वाली गतियों को आसानी से समझ लेते हैं, वहीं पौधों में गति की अवधारणा को समझने के लिए अधिक कल्पना शक्ति की आवश्यकता होती है। Sources for illustration (Animal): Garvie, Steve. The Great Trek. 2010. Wikimedia Commons. Web. 15 Apr. 2015. https://commons.wikimedia.org/wiki/File:The_Great_Trek.jpg. Attribution-Share Alike 2.0 Generic License: https://creativecommons.org/licenses/by-sa/2.0/deed.en. Sources for illustration (plants sprouting): Favreau, Jean-Marie. Sprouter. 2006. Wikimedia Commons. Web. 15 Apr. 2015. https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Sprouter.png. GNU Free Documentation License, Version 1.2 or later: https://en.wikipedia.org/wiki/GNU_Free_Documentation_License)

गैसों के कण भी ये सभी गतियाँ दर्शाते हैं। लेकिन द्रवों की अपेक्षा गैसों के कणों के बीच में ज्यादा बड़ी दूरी होती है। इसके अलावा, गैसों के अणु तेजी से सभी दिशाओं में गति करते हैं। यही कारण है कि गैसें जिस किसी भी पात्र में रखी जाती हैं उसे वे भर देती हैं।

गति के कारण

"क्या है वह आदि चालक, वह बुनकर जो तेजी से चलती हुई बुनाई भरनियों का मार्गदर्शन करता है?" —एडवर्ड ओ. विल्सन[13]

हमारे आसपास के संसार में विविध प्रकार की हलचलें होती हैं। इनमें से कुछ हमारी आँखों को दिखाई नहीं देती और कुछ एकदम हमारे पास के परिवेश में घटती हैं। अन्य हमसे इतने ज्यादा बड़े पैमाने पर होती हैं कि उन्हें समझना कठिन होता है। लेकिन ये सारी चीजें आखिरकार क्यों और कैसे गति करती हैं?

इस सवाल का उत्तर काफी जटिल है और उस सन्दर्भ पर निर्भर करता है जिसमें हम इस सवाल को उठाते हैं। पशु तथा पौधे जिन कारणों से गति करते हैं उनसे हम परिचित हैं। लेकिन किसी गैस के अणु या ग्रह तथा आकाशगंगाएँ क्यों गति करती हैं? यह एक अच्छा विचार है कि इन सवालों को माध्यमिक स्कूल में उठाना शुरू कर दिया जाए ताकि विद्यार्थी इन पर मनन कर सकें। और आरम्भ करने की सबसे अच्छी जगह है, परिचित से अर्थात जीवनधारी प्राणियों से शुरू करना।

पशु क्यों गति करते हैं?

यदि आप अपने विद्यार्थियों से यह प्रश्न करेंगे तो सम्भावना है कि वे आपको ऐसे उत्तर देंगे, जैसे कि 'खतरे से बचने के लिए' या 'भोजन और पानी की तलाश करने के लिए'। इस चर्चा को आगे बढ़ाने का एक तरीका विद्यार्थियों से यह पूछना है कि बदलते हुए मौसम के साथ जानवर दूसरी जगहों पर पलायन क्यों करते हैं? आप सहवासी साथियों की तलाश करने के लिए होने वाली जानवरों की गतियों, जैसे कि चींटियों तथा दीमकों की वैवाहिक उड़ानों, का भी वर्णन कर सकते हैं।

> इन बातों से हम देख सकते हैं कि भोजन, आश्रय, संगीसाथी आदि की जरूरत ही जानवरों में गति का प्रमुख कारण होती है।

इसके बाद, यह देखना उपयोगी है कि जानवरों में गति करने की प्रक्रिया कैसे होती है। अधिकांश जानवरों में गति पैदा करने का सबसे नजदीकी कारण मांसपेशियों का सिकुड़ना होता है।

कशेरूक प्राणियों में गति उत्पन्न करने के लिए मांसपेशियाँ तथा ऊतक एक साथ लीवरों की तरह काम करते हैं।[14] लीवर एक सरल मशीन होती है जो एक छोटा बल लगाकर एक बड़ा बल पैदा करने के लिए इस्तेमाल की जाती है। लीवर का सिद्धान्त ही रीढ़धारी प्राणियों में सक्षम रूप से गति पैदा करने के लिए इस्तेमाल किया जाता है। विद्यार्थियों से पूछें कि उनकी मांसपेशियाँ और हड्डियाँ लीवर की तरह कैसे काम कर सकती हैं।

एक अन्य रोचक तथ्य यह है कि शरीर की अधिकांश गतिविधियाँ मांसपेशियों के युग्मों (पेयर्स) में काम करने के द्वारा क्रियान्वित की जाती हैं। विद्यार्थियों से इस सवाल पर विचार करने को कहें कि मांसपेशियाँ जोड़ों के रूप में काम क्यों करती हैं। इस सवाल के उत्तर का संकेत यह है कि कोई भी मांसपेशी एक ही दिशा में गति करने के लिए सिकुड़ सकती है।

बाइसैप्स (द्विशिर पेशी) तथा ट्राइसैप्स (ढाँचे की त्रिमूलक पेशी) ऐसा ही मांसपेशियों का जोड़ा है, जब बाइसैप्स सिकुड़ती हैं तब ट्राइसैप्स ढीली हो जाती हैं और ऐसा ही विपरीत क्रिया में होता है। बाइसैप्स का सिकुड़ना कोहनियों को मोड़ता है, ट्राइसैप्स का सिकुड़ना कोहनियों को फिर से सीधा कर देता है। इस प्रकार शरीर के अंगों को दोनों दिशाओं में चलाने के लिए मांसपेशियाँ जोड़ों में काम करती हैं।

पौधे क्यों गति करते हैं?

इस बात पर गौर करना दिलचस्प होता है कि क्या

विद्यार्थी यह समझ पाते हैं कि पौधों के गति करने के कई कारण भी वही होते हैं जो जानवरों के होते हैं। हाँ, उनमें केवल यह अन्तर जरूर होता है कि पौधों में कोई वास्तविक लोकोमोशन (पूरे पौधे का स्थान परिवर्तन) नहीं होता। विद्यार्थियों से पौधों की गतियों के विशिष्ट नाम बताने के लिए कहें और फिर इस पर विचार करने के लिए कहें कि ये गतियाँ क्यों होती हैं।

उदाहरण के लिए, प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया के द्वारा भोजन तैयार करने में पौधे की मदद करने के लिए उसका तना प्रकाश की ओर गति करता है तथा जड़ें पानी की ओर गति करती हैं। वीनस फ्लाइट्रैप की गति कीटों को फँसाने के द्वारा पौधे को कठिनाई से प्राप्त होने वाले पोषक तत्व (जैसे कि नाइट्रोजन) पाने में मदद करने के लिए होती है। छुई–मुई की पत्तियाँ, परभक्षियों से अपनी रक्षा करने के लिए, छुए जाने पर बन्द हो जाती हैं। फूल अपने परागण, निषेचन (फर्टिलाइजेशन) और बीज–निर्माण की सम्भावनाओं को अधिकतम बनाने के लिए खुलते तथा बन्द होते हैं।

> पौधों में भी गति का प्रमुख कारण, भोजन, प्रतिरक्षा, प्रजनन तथा अन्य आवश्यकताएँ होती हैं।

लेकिन पौधे वास्तव में किस तरह गति पैदा करते हैं? आखिरकार उनमें कोई मांसपेशियाँ, कोई हड्डियाँ और सबसे महत्त्वपूर्ण, कोई तंत्रिका व्यवस्था नहीं होती। इस प्रश्न के उत्तर में जीवविज्ञान तथा रसायनशास्त्र का एक रोचक मिश्रण शामिल होता है। यदि आपके विद्यार्थी पौधे की बुनियादी कोशिका संरचना से और थोड़े–बहुत रसायनशास्त्र से परिचित हैं, तो आप पौधों की गतियों के एक या दो उदाहरणों का थोड़े विस्तार से अध्ययन कर सकते हैं।

पौधों में गतियों की धीमी दरें, उनके अलग–अलग अंगों के बढ़ने की अलग–अलग दरों के कारण होती हैं। उदाहरण के लिए, जब छोटे कोमल पौधों को एक कमरे के भीतर रखा जाता है तब उनके तने खिड़की की ओर प्रकाश की दिशा में मुड़ जाते हैं। यह गति तने के उस भाग के लम्बे हो जाने के कारण होती है जो प्रकाश से दूर होता है। इस असमान वृद्धि के कारण तना प्रकाश की ओर मुड़ जाता है। वृद्धि हार्मोन कहलाने वाले रसायन लम्बाई में इस बढ़त को पैदा करते हैं। वृद्धि हार्मोन कोशिकाओं की दीवारों को अधिक लचीला बना देते हैं और इसलिए पानी का संचय करने के द्वारा कोशिकाएँ ज्यादा लम्बी हो जाती हैं।[15] और कुछ अन्य रसायनों की क्रिया के द्वारा (जो प्रकाश के प्रति संवेदनशील होते हैं) इस वृद्धि हार्मोन को तने के अंधेरे भाग की ओर भेजा जाता है।

रैपिड प्लांट मूवमेंट्स (पौधों में त्वरित गतियाँ) कई घटनाओं के संयोजन के माध्यम से घटते हैं। इस तरह की एक घटना 'अम्ल वृद्धि' होती है जो वीनस फ्लाईट्रैप में पाई जाती है।[16] जब उसकी पत्तियों के रोमों को छुआ जाता है, तो पत्ती के विद्युतीय विभव में परिवर्तन होता है। इस परिवर्तन के कारण मिडरिब (पत्ती के बीच की नस) की कोशिकाओं की दीवारों में धनात्मक हाइड्रोजन आयनों (H^+) की बाढ़ आ जाती है। ये आयन उस क्षेत्र को अधिक अम्लीय बना देते हैं और कोशिकाओं की दीवारों के कुछ हिस्सों को घोल देते हैं। इसके परिणास्वरूप कोशिकाएँ पानी का संग्रह करने के द्वारा फैलने के लिए मुक्त हो जाती हैं। पत्ती का बाहरी भाग तेजी से फैलता है और इसलिए उसका फंदा खट से बन्द हो जाता है।

पौधों में गति के ऐसे कई नजदीकी कारण होते हैं। इन प्रक्रियाओं को बेहतर ढंग से समझने के लिए हम अभी भी उनकी खोजबीन कर रहे हैं।

पशुओं तथा पौधों, दोनों के मामले में हमने देखा कि उनके जीवन के लिए आवश्यक चीजों की तलाश करने के द्वारा, जीवन को बनाए रखने की जरूरत ही उनकी गतियों के उत्पन्न होने का कारण होती है। फिर भी हमें इसका पक्का पता नहीं है कि यह 'जीवन' क्या है जो अपने को सतत बनाए रखने का प्रयास करता है।

ग्रह, तारे तथा आकाषगंगाएँ क्यों गति करते हैं?

हमने आकाशीय पिण्डों के द्वारा प्रदर्शित की जाने

वाली विभिन्न प्रकार की गतियों को देखा है। वे अपने ही चारों ओर घूर्णन (स्पिन या रोटेट) करते हैं, दूसरे पिण्डों के चारों ओर चक्कर लगाते हैं और शेष ब्रह्माण्ड से तेज गति से दूर भागते हैं। लेकिन ये पिण्ड गति करते ही क्यों हैं, यह एक ऐसा सवाल है जिसने मनुष्यों को सदियों से परेशान और हैरान कर रखा है। ब्रह्माण्ड की रहस्यमय प्रकृति से सचमुच में विद्यार्थियों का परिचय करवाये जाने की जरूरत होती है। उन्हें इन गतियों के कारणों का अनुमान लगाने के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है। कक्षा में इस सवाल की चर्चा करने से पहले वे स्वयं भी इसके बारे में पढ़ सकते हैं और इसके उत्तर खोज सकते हैं। यहाँ हम पहले उल्लेख की गईं तीन प्रकार की गतियों के सम्भावित कारणों पर एक संक्षिप्त नजर डालेंगे।



पृथ्वी के स्वयं के चारों ओर घूर्णन करने से ऐसा प्रतीत होता है जैसे कि सूर्य तथा तारे उसका चक्कर लगाते हैं। यह फोटोग्राफ रात्रि आकाश में 91 मिनिट की अवधि में लिए गए तारों की आभासी गति की तस्वीर को दिखाता है। Source: Lee, James Ronald. 91 Minutes of the Night Sky . 2010.Wikimedia Commons. Web. 15 Apr. 2015. https://commons.wikimedia.org/wiki/File:91_minutes_of_the_night_sky .jpg.

यह देखा गया है कि ब्रह्माण्ड में हर चीज (सौर मण्डल के ग्रह, सूर्य, अन्य तारे, सभी आकाशगंगाएँ) **सभी चीजें** घूर्णन करती हैं।[17] और एक व्यवस्था (जैसे कि मिल्की–वे आकाशगंगा या सौर मण्डल) के भीतर स्थित सभी वस्तुएँ पृथ्वी के जैसी ही दिशा में घूर्णन करते हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि यह घूर्णन स्वयं इन व्यवस्थाओं के निर्मित होने के फलस्वरूप विकसित हुआ प्रतीत होता है।

उदाहरण के लिए, मिल्की–वे के भीतर सौर मण्डल लगभग 4.5 अरब वर्ष पहले किसी ऐसे बल के परिणामस्वरूप निर्मित हुआ, जो सम्भव है कि पास में स्थित सुपरनोवा की शॉकवेव्स (उच्च दबाव का तेज गति से आ रहा क्षेत्र) का रहा हो।[18] इस बल ने हाइड्रोजन गैस के एक विराट बादल को गुरुत्व के कारण अपने अन्दर ही ढह जाने पर बाध्य किया। जिन भिन्न–भिन्न आवेगों से हाइड्रोजन के कण एक–दूसरे की ओर आए, उन्होंने संयुक्त होकर पूरी व्यवस्था के लिए घूर्णन को उत्पादित किया। जिन घटनाओं के परिणामस्वरूप आकाशगंगाओं का निर्माण हुआ, वे ही उनके घूर्णन करने का कारण बनीं।

अब, पृथ्वी तथा अन्य ग्रह सूर्य की परिक्रमा क्यों करते हैं? गुरुत्वाकर्षण बल के कारण ग्रह सूर्य की ओर उसी तरह खींचे जाते हैं जिस तरह एक सेब जमीन पर गिरता है। पर, पृथ्वी सूर्य में क्यों नहीं गिर जाती, इसका कारण है कि पृथ्वी का एक पार्श्ववेग (साइडवेज वेलोसिटी) भी होता है, जिसकी दिशा सूर्य से समकोण (90 डिग्री का कोण) बनाती है।[19] यह पार्श्ववेग उस समय से चला आ रहा है जब आरम्भ में पृथ्वी सौर मण्डल में निर्मित हुई थी। यह पार्श्ववेग पृथ्वी को सूर्य से दूर धकेलने का प्रयास करता है, जबकि गुरुत्वाकर्षण का बल उसे सूर्य की ओर खींचता है। ये दोनों परिपूर्ण सन्तुलन में होते हैं, और इसीलिए पृथ्वी न तो सूर्य में गिरती है और न ही उससे दूर जाती है। उसके बजाय, वह निरन्तर अपनी कक्षा में सूर्य की परिक्रमा करती रहती है।

और अन्त में, ब्रह्माण्ड की आकाशगंगाएँ क्यों तेजी से एक–दूसरे से दूर भाग रही हैं? इस प्रश्न का उत्तर बिग बैंग (महाविस्फोट)[20] में निहित है। जब आकाशगंगाओं की गति को समय में पीछे की ओर ले जाया जाता है, तो वे सभी एक ही मूल बिन्दु से उत्पन्न हुई प्रतीत होती हैं।

बिग बैंग का सिद्धान्त ऐसे एक मात्र मूल बिन्दु (जो अत्यन्त ही छोटा, अत्यन्त गरम, अनन्त रूप से सघन बिन्दु है) से ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति को समझाने के लिए प्रस्तावित किया गया था। हमें यह नहीं मालूम कि यह एक मात्र मूल बिन्दु कहाँ से या कैसे आया।

महाविस्फोट के सिद्धान्त का दावा है कि 13.7 अरब वर्ष पहले यह एक मात्र बिन्दु एक विस्फोट के परिणामस्वरूप फूला, फैलता गया और बाद में ठण्डा होने पर उसने वर्तमान विस्तृत होते हुए ब्रह्माण्ड को निर्मित किया।[21]

सारांश में हम देख सकते हैं कि आकाशीय पिण्डों की गति का एक प्रमुख कारण गुरुत्वाकर्षण बल है। लेकिन उनकी गति के अन्य कारण वास्तव में हमें ज्ञात नहीं हैं, और इसीलिए हम सुपरनोवा या बिग बैंग जैसी घटनाओं का अनुमान लगाते हैं। महत्त्वपूर्ण बात ब्रह्माण्ड के बारे में एक विस्मय और रहस्य की अनुभूति को अपने विद्यार्थियों को सम्प्रेषित करना है।

परमाणु तथा अणु क्यों गति करते हैं?

हमने पहले देखा कि परमाणुओं तथा अणुओं की गति पदार्थ की अवस्था के साथ बदलती है। लेकिन ये कण गति करते ही क्यों हैं? क्या कोई ऐसे अणु भी होते हैं जो पूरी तरह गतिहीन या स्थिर हों?

इन सवालों के उत्तर में, विद्यार्थियों से उनके अनुमान जानने का तरीका, उनसे यह पूछना है कि पानी के मामले में पदार्थ की अवस्थाओं का परिवर्तन कैसे होता है। निश्चित रूप से, हम जानते हैं कि बर्फ को गर्म करने पर वह पानी में बदल जाता है, और उसे आगे गर्म करने पर वह वाष्प में बदल जाता है। ठण्डा करने पर यह घटना उलटे रूप में घटित होती है।

अगला काम हमारे विद्यार्थियों को इन घटनाओं में अन्तर्सम्बन्ध खोजने के लिए प्रेरित करना है। उनसे पूछिए कि जिस तरह पदार्थ की अवस्था में परिवर्तन होता है और जिस तरह पदार्थ की अलग–अलग अवस्थाओं में उनके कणों की गति अलग–अलग होती है, इन दोनों बातों के बीच में क्या सम्बन्ध हो सकता है। उन्हें यह देख सकना चाहिए कि गर्म करने पर कण ज्यादा तेज गति करते हैं और ठण्डा करने पर उनकी गति धीमी हो जाती है। यहाँ गति की ऊर्जा के रूप में **गतिज ऊर्जा (काइनैटिक एनर्जी)** का परिचय करवाया जा सकता है। कोई वस्तु जितनी तेजी से गति करती है, उसकी गतिज ऊर्जा उतनी ही अधिक होती है।

फिर विद्यार्थियों से पूछें कि किसी पदार्थ को गरम करने पर उसका **तापमान** कैसे बदलता है। उन्हें कोशिश करके तापमान को परिभाषित करने दें। निश्चित रूप से, तापमान किसी वस्तु की ऊष्मा की तीव्रता को नापता है। लेकिन यहाँ सम्बन्ध यह है कि तापमान किसी वस्तु में मौजूद कणों की औसत गतिज ऊर्जा की माप होता है। किसी वस्तु के कण जितनी अधिक तेज गति करते हैं, उतना ही अधिक उसका तापमान होता है।[22]

हमने देखा है कि पदार्थ के कण गर्म करने पर ज्यादा तेजी से गति करते हैं। तो, क्या कणों को पर्याप्त ठण्डा करने के द्वारा उनकी गति को रोका जा सकता है? तापमान का कैल्विन पैमाना इसी विचार पर आधारित है, क्योंकि वैज्ञानिकों ने सिद्धान्त रूप में यह निष्कर्ष निकाला कि किसी गैस का आयतन– 273.15°C (डिग्री सैल्सियस) पर शून्य हो जाता है। यह – 273.15°C का तापमान **चरम शून्य (ऐब्सोल्यूट जीरो)** या 0 डिग्री कैल्विन माना जाता है।[23] परिभाषा के अनुसार, माना जाता है कि चरम शून्य पर समस्त आणविक गति को बन्द हो जाना चाहिए।

लेकिन इसके साथ कई समस्याएँ हैं। पूरे ज्ञात ब्रह्माण्ड में कोई भी ऐसा स्थान नहीं है जो चरम शून्य तापमान पर हो। हमारे लिए एक चरम शून्य निर्मित कर पाना सैद्धान्तिक रूप से असम्भव है, हालाँकि हम उसके बहुत नजदीक तक पहुँचने में सफल हुए हैं।[24] अन्त में, क्वाण्टम मैकेनिक्स का तर्क है कि चरम शून्य पर कण गतिमान हैं या नहीं, यह माप सकना असम्भव है। और यदि हम

किसी प्रकार उस तापमान पर गति को माप भी सकते, तब भी कणों में थोड़े परिमाण में कम्पन और घूर्णन तो होगा।[25] इसलिए ब्रह्माण्ड में प्रत्येक कण गति कर रहा होता है। और हमें सचमुच में पता नहीं है कि ऐसा क्यों है।

निष्कर्ष

हम फिर से उस सवाल को दोहराएँ जिससे हमने शुरुआत की थी – क्या हम कह सकते हैं कि गति जीवन का लक्षण है? आखिरकार, ब्रह्माण्ड में हर चीज गति करती है। इसलिए जीवनधारी प्राणियों के द्वारा विभिन्न प्रकार के **उकसावों के प्रतिउत्तर** के रूप में, उद्देश्यपूर्ण गति प्रदर्शित करने की बात करना अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है। आदर्श रूप में अन्तर्विषयी अध्ययन इसी प्रकार की बारीक भेद वाली समझ को बढ़ावा देता है।

हमने यहाँ कई दृष्टिकोणों से गति के प्रसंग का अध्ययन एक खास कारण से किया है, ताकि कोशिश करके हम अलग–अलग दृष्टिकोणों का एकीकरण कर सकें। जहाँ हम विषय क्षेत्रों के एक कृत्रिम विभाजन के माध्यम से संसार के बारे में समझते हैं, वहीं अन्तर्विषयी पाठ्यक्रम समग्र को देखने का प्रयास करता है। आशा की जानी चाहिए कि अब हमें गति की एक ऐसी समझ हासिल हुई है जिसमें विभिन्न विषय क्षेत्रों की अवधारणाएँ समाहित हैं।

निश्चित रूप से, चीजें क्यों गति करती है, इस प्रश्न की हम जितनी गहरी खोजबीन करेंगे, हमारे मन में उतने ही अधिक प्रश्न उठेंगे। हमारे अध्ययन के समस्त विस्तार के बावजूद, ब्रह्माण्ड में गति का अन्तिम कारण हमारी पकड़ से बाहर है। यह बोध कि बहुत कुछ है जो अज्ञात है, एक ऐसी अन्तर्दृष्टि है जो हमें अपने विद्यार्थियों तक सम्प्रेषित करना जरूरी है। क्योंकि केवल तभी परिचित और ज्ञात की सीमाओं के पार जाने की उत्कट इच्छा पैदा होती है।

Reference

1. "V.S. Naipaul - Nobel Lecture: Two Worlds". Nobelprize.org. Nobel Media AB 2014. Web. 11 Apr 2015. http://www.nobelprize.org/nobel_prizes/literature/laureates/2001/naipaul-lecture-e.html.
2. "What Is Interdisciplinary Teaching?" Goldsmith, Arthur H., Darrick Hamilton, Karen Hornsby, and Dave Wells. Interdisciplinary Approaches to Teaching. National Science Foundation, 09 Feb. 2010. Web. 11 Apr. 2015. http://serc.carleton.edu/sp/library/interdisciplinary/what.html.
3. "Scholium to Definitions." Newton, Sir Isaac. The Mathematical Principles of Natural Philosophy. Trans. Andrew Motte. Vol. I. London: Benjamin Mott, 1729. 9. Print.
4. The Logic of Interdisciplinary Studies. Review. Mathison, Sandra, and Melissa Freeman. Centre on English Learning and Achievement, 25 Oct. 2006. Web. 11 Apr. 2015. http://www.albany.edu/cela/reports/mathisonlogic12004.pdf
5. "Himalayas on the Move." Adhya, Tiasa. Down to Earth 15 Feb. 2010: n. pag. Down To Earth. Web. 11 Apr. 2015. http://www.downtoearth.org.in/node/943.
6. "Everybody, Stand Up! The Power of Kinesthetic Teaching and Learning." Griss, Susan. Independent Teacher. National Association of Independent Schools, May 2013. Web. 11 Apr. 2015. http://www.nais.org/Magazines-Newsletters/ITMagazine/Pages/Everybody-Stand-Up.aspx.
7. "Energy Requirements for Locomotion." Alexander, R. McNeill. Principles of Animal Locomotion. Princeton, NJ: Princeton UP, 2003. 48. Print.
8. "Travelling." Attenborough, Sir David. The Private Life of Plants. BBC One. United Kingdom, 11 Jan. 1995. Television.
9. "Rapid Plant Movement." Wikipedia. Wikimedia Foundation, 17 Nov. 2014. Web. 11 Apr. 2015. https://en.wikipedia.org/wiki/Rapid_plant_movement.
10. Plants-In-Motion. Hangarter, Roger P. Roger P. Hangarter and Indiana University, 27 Sept. 2011. Web. 11 Apr. 2015. http://plantsinmotion.bio.indiana.edu/.
11. The Sidereal Messenger of Galileo Galilei and a Part of the Preface to Kepler's Dioptrics Containing the Original Account of Galileo's Astronomical Discoveries. Galilei, Galileo, and Johannes Kepler. Trans. Edward Stafford Carlos. London: Rivington's, 1880. Print.
12. Of the Nature of Things. Trans. Carus, Titus Lucretius. William Ellery Leonard. New York: E. P. Dutton, 1916. Project Gutenberg. 31 July 2008. Web. 11 Apr. 2015.

http://www.gutenberg.org/files/785/785-h/785-h.htm.

13. "Emergence." Wilson, Edward O.On Human Nature. Cambridge: Harvard UP, 1978. 75. Print.
14. "What Levers Does Your Body Use?" Science Learning Hub RSS. The University of Waikato, 21 June 2007. Web. 11 Apr. 2015. http://sciencelearn.org.nz/Contexts/Sporting-Edge/Looking-closer/What-levers-does-your-body-use.
15. "How Do Plants Grow toward the Light?" Wankerl, Barbara. TechnischeUniversitätMünchen, 27 May 2013. Web. 11 Apr. 2015. https://www.tum.de/en/about-tum/news/press-releases/short/article/30854/.
16. "Exactly How Does a Venus Flytrap's Leaves Close so Fast?" Rice, Barry. The Carnivorous Plant FAQ. International Carnivorous Plants Society, 13 Mar. 2011. Web. 11 Apr. 2015. http://www.sarracenia.com/faq/faq2800.html.
17. "Why Does Everything in the Universe Spin?" Dominguez, Trace. TestTube. Discovery Digital Networks, 13 Feb. 2015. Web. 11 Apr. 2015. http://testtube.com/dnews/why-does-everything-in-the-universe-spin/.
18. "Why Does the Earth Spin?"Cain, Fraser. Universe Today. Fraser Cain, 12 Sept. 2013. Web. 11 Apr. 2015. http://www.universetoday.com/14491/why-does-the-earth-rotate/.
19. "Why Do the Planets Orbit the Sun? (Beginner)." Jordan, Cathy.Ask an Astronomer. The Curious Team, n.d. Web. 11 Apr. 2015. http://curious.astro.cornell.edu/about-us/57-our-solar-system/planets-and-dwarf-planets/orbits/243-why-do-the-planets-orbit-the-sun-beginner.
20. "Big Bang." Wikipedia. Wikimedia Foundation, 7 Apr. 2015. Web. 11 Apr. 2015. http://en.wikipedia.org/wiki/Big_Bang.
21. "Big Bang Theory - An Overview." Big Bang Theory. AllAboutScience.org, 2 Jan. 2015. Web. 11 Apr. 2015. http://www.big-bang-theory.com/.
22. "Kinetic Theory of Matter." Kurtus, Ron. School for Champions. Ron Kurtus, School for Champions LLC, 26 Nov. 2011. Web. 11 Apr. 2015. http://www.school-for-champions.com/science/matter_kinetic_theory.htm.
23. "Absolute Zero." Wikipedia Contributors. Wikipedia. Wikimedia Foundation, 5 Apr. 2015. Web. 11 Apr. 2015. http://en.wikipedia.org/wiki/Absolute_zero.
24. "Why Can't We Get to Absolute Zero?" Reid, Alastair.MrReid.org. Mr. Reid, 3 July 2014. Web. 11 Apr. 2015. http://wordpress.mrreid.org/2014/07/03/why-cant-we-get-to-absolute-zero/.
25. "Zero-point Energy." Wikipedia. Wikimedia Foundation, 10 Apr. 2015. Web. 11 Apr. 2015. http://en.wikipedia.org/wiki/Zero-point_energy.

__स्मिता बी.__ ने स्कूलों में जीवविज्ञान तथा पर्यावरण विज्ञान का शिक्षण किया है। उन्हें विद्यार्थियों को प्रायोगिक कार्य करने के कौशल सिखाने में विशेष रूप से आनन्द आता है। एक पारिस्थितिकी विज्ञानी (इकोलोजिस्ट) की तरह प्रशिक्षित होने के कारण, वे वनों के पुनरुद्धार के तरीकों का अध्ययन करने वाली एक निजी परियोजना को साकार करने का प्रयास कर रही हैं। वे अपने आसपास मौजूद लोगों से ज्यादा व्यापक स्तर पर पाठकों तक पहुँचने के लिए लिखने का कठिन श्रम करती हैं। उनसे bsmitha.work@gmail.com *पर सम्पर्क किया जा सकता है। __अनुवाद__ : भरत त्रिपाठी*

विद्युत का जीवविज्ञान

रामगोपाल (राम जी) वल्लत

मानव शरीर के काम करने में विद्युत क्या भूमिका निभाती है? स्कूल के दौरान सीखे जाने वाले विज्ञान में विद्युत की छानबीन एक विषय के रूप में भौतिकशास्त्र के अन्तर्गत की जाती है। रसायनशास्त्र में भी उसकी थोड़ी चर्चा होती है, लेकिन जीवविज्ञान में, विशेष रूप से जीवन को बनाए रखने में, विद्युत के महत्त्व को समझना भी आवश्यक है। यह लेख मानव शरीर की विभिन्न प्रक्रियाओं के काम करने में विद्युत की महत्त्वपूर्ण भूमिका की जाँच–पड़ताल करता है।

विकीपीडिया विद्युत को ऊर्जा के ऐसे रूप की तरह परिभाषित करता है जो आवेशित कणों (जैसे कि इलेक्ट्रान या प्रोटान) के मौजूद रहने के परिणामस्वरूप आवेश के पुंज की तरह स्थितिज रूप में या 'धारा' की तरह गतिज रूप में उत्पन्न होती है।

पिछली सदी में विद्युत और उसके उपयोगों ने समाज को रूपान्तरित कर दिया है। आज हर दिन के हर क्षण में हम अचेतन रूप से, विद्युत के सचेत बोध के बिना ही इसके द्वारा चलने वाले किसी न किसी उपकरण, औजार या मशीन का उपयोग करते रहते हैं। यदि हम बच्चों या बड़ों से किसी ऐसी चीज का नाम बताने के लिए कहें जो इस अद्भुत शक्ति द्वारा संचालित होती है, तो उनके लिए कम्प्यूटरों से लेकर रोशनी देने वाले बल्बों, मशीनों, रेफ्रिजरेटर, मोबाइल फोन इत्यादि तक तमाम चीजों को गिना देना बहुत आसान होगा। लेकिन मुझे सन्देह है कि उनमें से कोई भी संसार में विद्युत से संचालित होने वाली सबसे जटिल मशीन का नाम लेगा। वास्तव में हम इस मशीन का अपने जीवन के हर क्षण उपयोग करते हैं। हाँ, मैं मानव शरीर की बात कर रहा हूँ।

मानव शरीर ही नहीं किसी भी जीवरूप का शरीर उन सबसे जटिल मशीनों में शुमार होगा जो विद्युत की शक्ति से संचालित होती हैं।

निश्चित ही मुझे विश्वास है कि एक बुनियादी तल पर, अधिकांश लोग यह जानते हैं कि शरीर में होने वाली हर क्रिया (दिल के धड़कने से लेकर, हमारे आसपास की चीजों को अनुभव करने तक, मस्तिष्क की जटिल संज्ञानात्मक कार्यप्रणाली से लेकर उस प्रेम के भाव तक जिसे हम अनुभव करते हैं) रासायनिक अभिक्रियाओं से ऊर्जा पाकर संचालित होती है। और हर रासायनिक क्रिया विद्युत आवेशों के आंशिक या पूर्ण आदान–प्रदान के कारण घटित होती है। यद्यपि अधिकांश बच्चे और अनेक बड़े भी सजग रूप से इसके बारे में नहीं सोचते। यह स्पष्ट है कि जीवन के निर्मित

प्रोटीनों के कुछ कार्य

1. कोशिकाओं में अभिक्रियाओं को उत्प्रेरित करना

वे प्रोटीन जो कोशिकाओं में रासायनिक अभिक्रियाओं को उत्प्रेरित करते हैं, एन्जाइम कहलाते हैं। मानव शरीर में एन्जाइम विविध प्रकार की भूमिकाएँ निभाते हैं, उदाहरण के लिए वे भोजन के ज्यादा बड़े अणुओं को अधिक सरल अवयवों में तोड़ देते हैं, ताकि कोशिकाओं की झिल्लियों में से होकर उनका विसरण आसानी से हो सके। इन प्रोटीनों में शामिल हैंः ऐमीलेसिस जो कार्बोहाइड्रेट्स को पचाने में सहायक होते हैं; पेपसिन जो प्रोटीनों को पचाने में मदद करते हैं। अन्य प्रोटीन, जैसे कि डी.एन.ए. पॉलीमराज, कोशिकाओं के विभाजन के पहले डी.एन.ए. के नए सूत्रों का संश्लेषण करने में सहायता करते हैं।

2. संकेतों का उत्तर देना

कई प्रोटीन बाहरी संकेतों को पकड़ने और उनका उत्तर देने में मदद करते हैं। उदाहरण के लिए, ऐक्टिन तथा मायोसिन, मांसपेशियों के ऊतकों को सिकुड़ने या ढीला करने में मदद करते हैं।

3. रासायनिक संकेतों को पकड़ना और भेजना

कुछ प्रोटीन संकेत देने वाले ऐसे अणुओं की तरह काम करते हैं जो क्रिया को उकसाने के लिए जरूरी जानकारी ले जाते हैं। इन्सुलिन ऐसा ही एक हार्मोन है जो खून में शक्कर के स्तर को नियंत्रित करने के लिए संकेत की तरह काम करता है। कोशिकाओं में पाए जाने वाले विभिन्न ग्राही अवयव इन संकेतों का उत्तर देते हैं।

4. संरचना प्रदान करना

कई कोशिकाओं की संरचना सूक्ष्म–तन्तुओं से मिलकर बनती है। ऐसे तन्तु स्वयं दो प्रोटीनों (ऐक्टिन तथा ट्यूबुलिन) से मिलकर बनते हैं।

5. कोशिकाओं की झिल्ली के आरपार पदार्थों का परिवहन करना

विभिन्न वाहिका प्रोटीन, आवश्यकता के अनुसार अणुओं और परमाणुओं के आवागमन के लिए खुलकर, उनको कोशिकाओं की झिल्ली में से होकर लाने–ले जाने में सहायक होते हैं। इस लेख में बाद में इसे विस्तार से बताया जाएगा।

6. श्वसन की गैसों का परिवहन करना

कुछ प्रोटीन श्वसन गैसों के साथ बँध जाते हैं और इस तरह वे उन्हें शरीर के विभिन्न अंगों में ले जाते हैं। उदाहरण के लिए, हीमोग्लोबिन रक्त का एक ऐसा जटिल प्रोटीन है जो फेफड़ों से आक्सीजन को ऊतकों तक ले जाता है।

7. शरीर की रोगों से रक्षा करना

विभिन्न प्रतिरक्षी (एण्टीबॉडी) प्रोटीन हमला करने वाले कीटाणुओं से शरीर की रक्षा करते हैं।

होने में भी विद्युतीय आवेश वैसी ही महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, जैसी कि वे समस्त पदार्थ की आधारभूत संरचना में निभाते हैं।

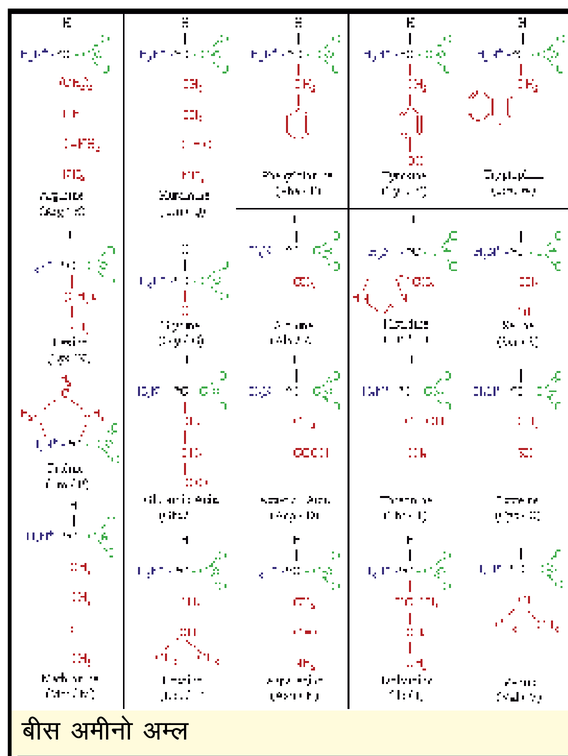
परन्तु उतने ही स्पष्ट वे तमाम तरीके नहीं हैं जिनके द्वारा विद्युत जीवन को बनाए रखती है। मैं इस लेख में इसके कुछ उदाहरणों की छानबीन करूँगा।

प्रोटीन – कोशिकीय परिश्रमी कामगार

शरीर में विद्युत द्वारा निभाई जाने वाली भूमिकाओं में एक जीवन के केन्द्रीय घटकों (विभिन्न प्रोटीन, जो कि कोशिकाओं के परिश्रमी कामगार होते हैं) की कार्यप्रणाली से सम्बन्धित है। हमारे शरीर में हजारों प्रोटीन होते हैं जो कोशिकाओं के स्तर पर हर क्षण, दिमाग को चकरा देने वाली विराट संख्या में विविध कार्य करते रहते हैं। इनमें से कुछ प्रमुख कार्य इस प्रकार हैं –

विद्युत और प्रोटीनों के आकार

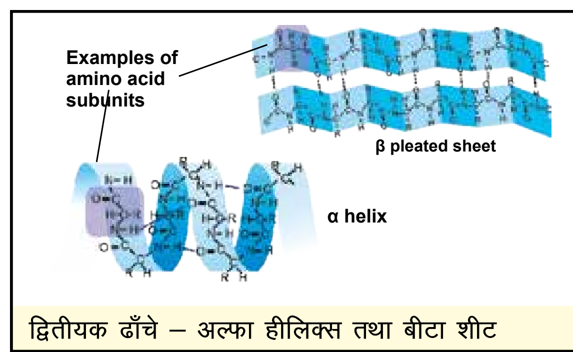
प्रोटीनों में विद्युत स्पष्ट रूप से किस तरह महत्त्वपूर्ण होती है? प्रोटीन उनके बुनियादी घटक अंशों (अमीनो अम्ल) के विविध संयोजनों से बनते हैं। मानव प्रोटीन बनाने वाले बीस अमीनो अम्ल में से प्रत्येक में ये अवयव होते हैं : एक अमीनो समूह (NH2), एक कार्बोक्सिल समूह (COOH), एक केन्द्रीय कार्बन जो इन दो समूहों को जोड़ता है तथा एक परिवर्तनशील समूह (जिसे शाखा शृंखला – साइड चेन – भी कहते हैं) जो हर अमीनो अम्ल के लिए अलग–अलग होता है। दो अमीनो अम्ल एक सहसंयोजक बन्ध के माध्यम से आपस में जुड़ते हैं, जिसे पैप्टाइड बन्ध कहते हैं। यह एक अम्ल के अमीनो समूह और दूसरे अम्ल के कार्बोक्सिल समूह के बीच निर्मित होता है और इस प्रक्रिया में पानी का एक अणु निकल जाता है। पैप्टाइड बन्धों से जुड़े हुए ऐसे तीन या चार अमीनो अम्लों के गठजोड़ को पॉलीपैप्टाइड शृंखला कहा जाता है। ये पॉलीपैप्टाइड शृंखलाएँ ही प्रोटीनों को बनाने के लिए विशिष्ट त्रि–आयामी आकार धारण करती हैं। हर प्रोटीन अपने अनोखे आकार के कारण ही अपना विशेष कार्य करने में समर्थ होता है। किसी प्रोटीन का सही–सही आकार उसको निर्मित करने वाली पॉलीपैप्टाइड शृंखलाओं में अमीनो अम्लों के सही–सही क्रम द्वारा निर्धारित होता है। एक प्रोटीन हजारों अमीनो अम्लों के संयोजन से निर्मित होता है। किसी एक भी अमीनो अम्ल में म्यूटेशन के कारण होने वाले परिवर्तन के फलस्वरूप उस प्रोटीन का आकार बदल सकता है, जो उसे उसका निर्धारित कार्य करने में या तो ज्यादा प्रभावकारी बना सकता है, या फिर पूरी तरह प्रभावहीन बना सकता है।


बीस अमीनो अम्ल

प्रोटीन के ढाँचे प्राथमिक, द्वितीयक, तृतीयक और कभी–कभी चतुर्थक प्रकार के होते हैं जो उनके आकार को निर्धारित करते हैं। किसी प्रोटीन का प्राथमिक ढाँचा बस उन अमीनो अम्लों का सिलसिला होता है जो मिलकर उसकी पॉलीपैप्टाइड शृंखला बनाते हैं। उसका द्वितीयक ढाँचा पॉलीपैप्टाइड शृंखला के एक टुकड़े के आकार का होता है। यह आमतौर पर एक कुण्डली (अल्फा कुण्डली) या एक मुड़कर बनी तहों वाली चादर (बीटा शीट – जो पॉलीपैप्टाइड शृंखलाओं की तहें बन जाने के कारण निर्मित होती है) के

स्वरूप का होता है। मुड़कर बनने वाली ये द्वितीयक तहें शृंखला में मौजूद एक अम्ल के धनात्मक विद्युत आवेश वाले हाईड्रोजन परमाणु और शृंखला के किसी दूसरे अमीनो अम्ल के एक ऋणात्मक विद्युत आवेश वाले परमाणु (आमतौर पर आक्सीजन) के बीच बन्ध बनने के कारण निर्मित होती हैं। शृंखला के इन दोनों हिस्सों के बीच में मौजूद स्थितिज विद्युतीय आकर्षण के कारण ऐसा होता है। द्वितीयक ढाँचे विभिन्न बलों (हाइड्रोजन बन्धों, अलग–अलग अमीनो अम्लों की शाखा शृंखलाओं के बीच बनने वाले आयनिक बन्धों, अलग–अलग शाखा शृंखलाओं में मौजूद सल्फर के परमाणुओं के बीच के डाइसल्फाइड बन्धों और वान डर वाल बलों) के कारण आगे चलकर तृतीयक ढाँचे बनाते हैं। अन्त में सम्पूर्ण ढाँचे को एक विशेष प्रक्रिया (हाइड्रोफोबिक पैकिंग) के द्वारा एक त्रि–आयामी आकार में ढाल दिया जाता है। ऐसा इस तथ्य के कारण घटित होता है क्योंकि कुछ अमीनो अम्लों की ऐसी ध्रुवीय शाखा शृंखलाएँ होती हैं जो हाइड्रोफिलिक (पानी के प्रति आकर्षित होने वाली) होती हैं, और कुछ अमीनो अम्लों की ऐसी गैर–ध्रुवीय शाखा शृंखलाएँ होती हैं जो हाइड्रोफोबिक (पानी से विकर्षित होने वाली) होती हैं। कोशिकाओं के भीतर के तथा कोशिकाओं के बाहर के जिन द्रवों में प्रोटीन रहते हैं, वे मुख्य रूप से पानी से बने होते हैं जिसकी प्रकृति विद्युतध्रुवीय होती है। इसी कारण प्रोटीन मुड़कर इस तरह से परतें बनाते हैं कि हाइड्रोफोबिक शाखा शृंखलाएँ द्रव से हटकर प्रोटीन के आन्तरिक भाग में चली जाती हैं। इससे हाइड्रोफिलिक शाखा शृंखलाएँ प्रोटीन के बाहर के हिस्से में आ जाती हैं और इस प्रकार प्रोटीन मुड़कर विशिष्ट स्वरूप वाले त्रि–आयामी आकार ग्रहण कर लेते हैं।

इसलिए, यह काफी स्पष्ट है कि कोशिकीय प्रोटीनों का आकार निर्धारित करने में, हाइड्रोजन बन्ध, आयनिक बन्ध तथा हाइड्रोफोबिक पैकिंग के रूप में स्थितिज विद्युतीय बल महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। प्रोटीनों के ये आकार उनके कामकाज के लिए तथा अन्ततः जीवन बनाए रखने के लिए अत्यन्त आवश्यक होते हैं।



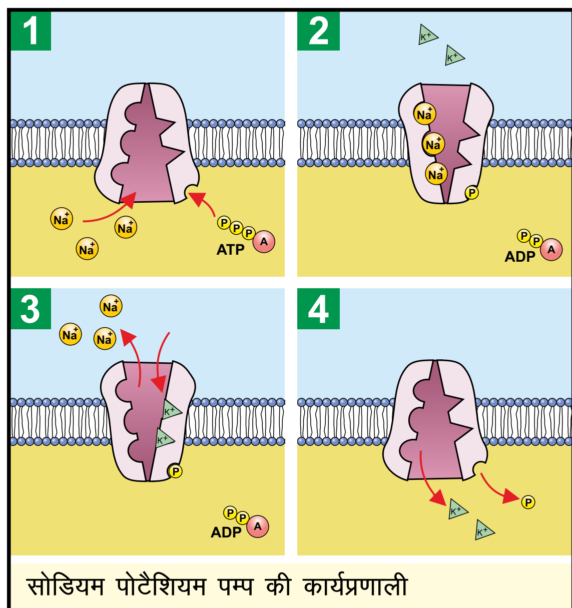
द्वितीयक ढाँचे – अल्फा हीलिक्स तथा बीटा शीट

आयन प्रवाहिकाओं तथा झिल्ली के विभव में विद्युत

कोशिकाओं के कामकाज में विद्युत द्वारा एक अधिक प्रत्यक्ष भूमिका आयन प्रवाहिकाओं और झिल्लियों के विभवों की संयोजित क्रिया के माध्यम से निभाई जाती है।

शरीर की हर कोशिका अपने आन्तरिक और बाह्य हिस्से के बीच में, कोशिका झिल्ली के आरपार, एक विद्युतीय विभवान्तर बनाए रखती है, जिसे विश्रामावस्था का विभव कहते हैं। इसे कोशिका के भीतर और बाहर किसी विशेष आयन के सान्द्रणों में अन्तर के द्वारा बनाए रखा जाता है। कोशिका यह अन्तर कैसे बनाए रखती है? कुछ ऐसे प्रोटीन होते हैं जो झिल्ली पर फैले हुए सेतु बनाए रहते हैं और सक्रिय रूप से आयनों को झिल्ली के आरपार उनके सान्द्रण झुकाव के विपरीत धकेलते हैं, इन्हें आयन पम्प कहा जाता है। ये ही आयनों को निरन्तर कोशिका के अन्दर या बाहर पम्प करके कोशिका का विश्रामवस्था का विभव बनाए रखने में सहायक होते हैं। इसके अलावा, आयन प्रवाहिकाएँ कहलाने वाले अन्य प्रोटीन भी झिल्ली पर फैले रहते हैं जो उकसाए जाने पर खुल जाते हैं और निष्क्रिय रूप से अपने सान्द्रण झुकाव की दिशा में आयनों को बहने देते हैं। ये आयन प्रवाहिकाएँ केवल विशिष्ट आयनों को ही अपने में से गुजरने देती हैं। इन आयन प्रवाहिकाओं को निर्मित करने वाले प्रोटीनों के जटिल आकार यह सुनिश्चित करते हैं कि प्रत्येक प्रकार की आयन प्रवाहिका केवल चुने हुए खास आयन के प्रवाह के लिए ही खुली रहती है। जैसे कि मानव शरीर में पाई जाने वाली कुछ प्रमुख आयन प्रवाहिकाएँ सोडियम

प्रवाहिकाएँ, पोटैशियम प्रवाहिकाएँ, कैल्शियम प्रवाहिकाएँ तथा क्लोराइड प्रवाहिकाएँ होती हैं। विभिन्न कोशिकाओं के काम करने की प्रक्रिया में किसी जीवित कोशिका की झिल्ली के विभव के साथ काम करने वाली इन प्रवाहिकाओं की केन्द्रीय भूमिका होती है।

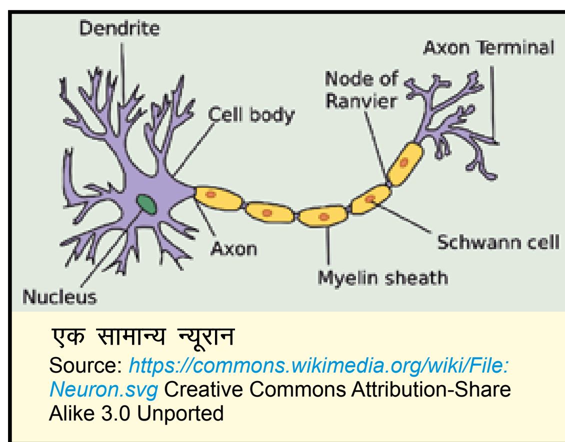


सोडियम पोटैशियम पम्प की कार्यप्रणाली

आइए सबसे पहले हम तंत्रिका कोशिकाओं को देखें। जब मैं माध्यमिक स्कूल का विद्यार्थी था, तो मुझे लगता था कि मनुष्य की तंत्रिका व्यवस्था, किसी विराट मशीन में लगे तारों के संजाल के समान होती है। जिसमें तंत्रिकाएँ, इलेक्ट्रानों के रूप में विद्युत संवेगों को लाने–ले जाने का काम करती हैं, जैसा कि एक सामान्य तार करता है। परन्तु तंत्रिकाओं के काम करने का तरीका ऐसा नहीं है।

तंत्रिकाएँ विद्युत के रूप में संकेत जरूर भेजती हैं, परन्तु ऐसा करने के लिए वे इलेक्ट्रानों का नहीं बल्कि आयनों का इस्तेमाल करती हैं। साथ ही, आयन कूट संकेतों में निहित संदेशों को लेकर पूरी तंत्रिका की यात्रा नहीं करते – वे किसी तंत्रिका कोशिका की झिल्ली के आरपार जाते हैं, जिसके कारण उसके झिल्ली विभव की ध्रुवीयता बदल जाती है। ध्रुवीयता का यह परिवर्तन एक्सन (जो कि एक कोशिका से निकलने वाला पतला, लम्बा प्रक्षेपण होता है जो संकेतों को दूसरी कोशिकाओं तक ले जाता है) की पूरी लम्बाई में फैल जाता है। इस परिवर्तन के कारण ही एक विद्युत संकेत एक्सन की लम्बाई की यात्रा कर पाता है। और इस तरह तंत्रिका में संकेत भेजा जाता है।

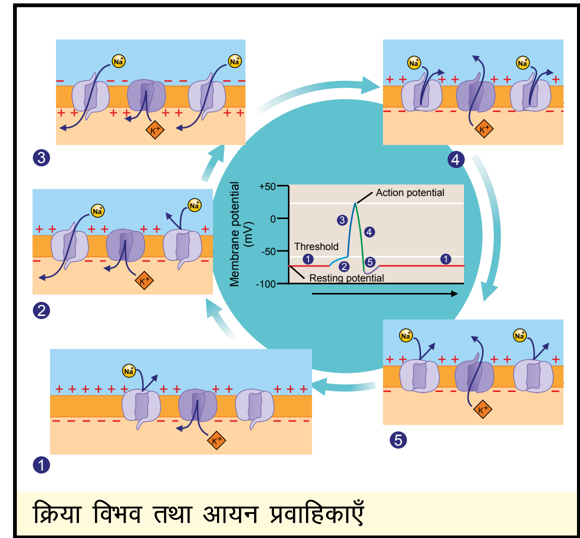
हम देखें कि यह असल में कैसे काम करता है। सामान्य अवस्था में, एक तंत्रिका कोशिका अपने बाहर के परिवेश और अपने अन्दर के हिस्से के बीच 70 मिली वोल्ट (mV) का विभव अन्तर बनाए रखती है। यानी उसके अन्दर का भाग उसके बाह्य परिवेश की अपेक्षा –70 mV पर होता है। यह कोशिका का विश्रामावस्था का विभव होता है। इसे कोशिका के अन्दर और उसके बाहर के हिस्सों में सोडियम तथा पोटैशियम आयनों के असन्तुलन के द्वारा बरकरार रखा जाता है। जहाँ कोशिका के आन्तरिक भाग में, बाहर की तुलना में पोटैशियम आयनों (K+) की अधिकता होती है, कोशिका के आन्तरिक भाग की अपेक्षा उसके बाहर के परिवेश में सोडियम आयनों (Na+) की अधिकता होती है। परन्तु बाहर Na+ की अधिकता का परिमाण, भीतरी भाग में K+ की अधिकता के परिमाण की तुलना में बहुत ज्यादा होता है और इस कारण से कोशिका का विभव नकारात्मक होता है।



एक सामान्य न्यूरान
Source: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Neuron.svg Creative Commons Attribution-Share Alike 3.0 Unported

एक न्यूरान में होने वाले छोटी शाखा जैसे विस्तार को डेन्ड्राइट कहते हैं। न्यूरान की कोशिका के मुख्य भाग (अर्थात सोमा) के चारों ओर फैले उसके अनेक डेन्ड्राइटों के माध्यम से ही वह न्यूरान संवेगों को प्राप्त करता है। ये डेन्ड्राइट संकेतों

को तंत्रिका संचारकों (न्यूरोट्रांसमिटर्स – जो कुछ रसायन होते हैं) के रूप में दूसरे न्यूरानों से या ऐन्द्रिक कोशिकाओं (ज्ञानेन्द्रियों में स्थित विशेष कोशिकाएँ जो बाह्य जानकारी, जैसे कि रंग, ध्वनि आदि को विद्युत–रासायनिक संकेतों में परिवर्तित कर देती हैं) से प्राप्त करते हैं। ये तंत्रिका संचारक, झिल्ली पर फैली हुई एक विशेष प्रकार की आयन प्रवाहिका, जिन्हें संलग्नीय द्वार वाली प्रवाहिका कहते हैं, को खुलने के लिए प्रेरित करते हैं। इसके फलस्वरूप Na+ आयन अपने सान्द्रण झुकाव के कारण कोशिका के अन्दर की ओर प्रवाहित होने लगते हैं, और K+ आयन अपने सान्द्रण झुकाव के अनुरूप कोशिका से बाहर की ओर प्रवाहित होने लगते हैं। चूँकि Na+ का सान्द्रण झुकाव अधिक होता है और वह अपने झुकाव में नीचे की ओर प्रवाहित होता है, इसलिए कोशिका से बाहर जाने वाले K+ की तुलना में, उसके भीतर आने वाले Na+ का प्रवाह अधिक होता है। तंत्रिका कोशिकाओं में इस तरह कुल मिलाकर होने वाले अधिक धनात्मक आयनों का प्रवाह उनके विभव को गिरा देता है – दूसरे शब्दों में कहें तो झिल्ली निध्रुवित (डिपोलेराइज) कर दी जाती है। एकबारगी जब कोशिका का मुख्य भाग (या सोमा) पर्याप्त रूप से निध्रुवित होकर –70mV से –50mV तक गिर जाता है, तो वह सोडियम आयन प्रवाहिकाओं को खुलने के लिए प्रेरित करता है जिनके द्वार का खुलना वोल्टेज पर निर्भर करता है – जैसे ही वोल्टेज –55mV की सीमा रेखा पर पहुँचता है, वे अपना द्वार खोल देते हैं। सोमा के सबसे नजदीक के एक्सनों पर स्थित वोल्टेज आधारित आयन प्रवाहिकाएँ सबसे पहले खुलती हैं क्योंकि वे –55mV के इस दहलीज के विभव पर सबसे पहले पहुँचती हैं। एक बारगी जब वे खुल जाती हैं तो सोडियम आयनों का एक बड़ा प्रवाह कोशिका के भीतर आ जाता है और वह उस क्षेत्र को पूरी तरह निध्रुवित करके +30mV तक ले जाता है। यह उछाल जिसे क्रिया विभव कहते हैं, तेजी से एक्सन में आगे की ओर फैल जाता है, क्योंकि एक प्रवाहिका के खुलने के फलस्वरूप दूसरी प्रवाहिका इस दहलीज के विभव पर पहुँच जाती है और स्वयं खुलकर फिर अगली प्रवाहिका को खुलने के लिए प्रेरित करती है। इस तरह एक डोमिनो (सिलसिलेवार) प्रभाव जैसी प्रक्रिया यहाँ काम करती है। Na+ आयनों के एक बहुत संक्षिप्त प्रबल प्रवाह के बाद ये प्रवाहिकाएँ निष्क्रिय हो जाती हैं, जिसकी वजह से विभव का शिखर +30mV पर रहता है।



क्रिया विभव तथा आयन प्रवाहिकाएँ

इसके अलावा, पोटैशियम आयन प्रवाहिकाएँ भी होती हैं जो दहलीज विभव की सीमा पर पहुँचने पर खुलती हैं, लेकिन यह तुलनात्मक रूप से अधिक धीमी गति से होता है। एकबारगी जब वे खुलना आरम्भ कर देती हैं (यहाँ भी एक के बाद एक एक्सन की पूरी लम्बाई में फैलते हुए), तब पोटैशियम आयन तेजी से बाहर निकलते हैं, और एक्सन के उस क्षेत्र को फिर से ध्रुवीय बना देते हैं। इस तरह से वोल्टेज का एक उछाल एक्सन की पूरी लम्बाई में आगे की ओर फैल जाता है, और वह वापिस अपने विश्रामावस्था विभव पर पहुँच जाता है।

आयन प्रवाहिकाओं की भूमिका न्यूरान के भीतर संकेतों के संप्रेषण के साथ समाप्त नहीं हो जाती। एकबारगी, जब क्रिया विभव एक्सन के अन्त तक पहुँच जाता है, तब उसके कारण झिल्ली में स्थित वोल्टेज आधारित द्वार वाली कैल्शियम प्रवाहिकाएँ साइनेप्सिसों (साइनेप्सिस एक्सन के छोर पर बनी ऐसी संरचना होती है जो संकेत को दूसरी कोशिका को सौंपने के लिए इस्तेमाल की जाती

है) पर खुल जाती हैं, और उनसे होकर कैल्शियम आयनों की बाढ़ जैसी कोशिका के भीतर आ जाती है। फिर इन कैल्शियम आयनों के कारण तंत्रिका संचारकों से भरे साइनेप्टिक वेसीकल (वेसीकिल एक छोटा–से थैले जैसा होता है जो सम्बन्धित रसायन से भरा रहता है) कोशिका की झिल्ली में संलग्न हो जाते हैं और इस प्रक्रिया में अपनी सामग्री को साइनेप्टिक अन्तराल (वह बारीक फासला जो एक कोशिका के साइनेप्सिस और लक्ष्य कोशिका के ग्राही घटक के बीच होता है) में छोड़ देते हैं। तंत्रिका संचारक साइनेप्टिक अन्तराल में फैल जाते हैं और एक ग्राही घटक से – जो या तो किसी और न्यूरान वाली झिल्ली पर होता है तथा संकेत को और आगे इसी प्रकार सम्प्रेषित करता है, या मांशपेशी कोशिका जैसी किसी गैर–न्यूरानल कोशिका पर होता है।

पर सभी साइनेप्सिस रासायनिक तरीके से तंत्रिका संचारकों के माध्यम से संचालित नहीं होतीं। कुछ साइनेप्सिस ऐसी भी होती हैं जो विद्युतीय होती हैं। इन साइनेप्सिसों में, जिन्हें गैप जंक्शन (अन्तराल के जोड़) भी कहा जाता है, दो न्यूरान ऐसी आयन प्रवाहिकाओं के माध्यम से जोड़े जाते हैं जिन्हें कनेक्सन्स कहा जाता है। ये सीधे जोड़ रासायनिक साइनेप्सिसों की प्रणाली की तुलना में, एक्सन विभव का एक न्यूरान से दूसरे न्यूरान तक कहीं अधिक तेज गति से यात्रा करना सम्भव बनाते हैं। इस तरह विद्युतीय साइनेप्सिस या तो उन न्यूरानों में पाए जाते हैं जो अत्यन्त तीव्र गति की प्रतिवर्ती क्रियाओं (रिफलैक्स एक्शन) को प्रेरित करते हैं या जहाँ बड़ी संख्या में कोशिकाओं के एक ही समय पर साथ काम करने की आवश्यकता होती है।

उदाहरण के लिए, मांसपेशियों की कोशिकाओं में तंत्रिका संचारक ऐसीटिलकोलिन (जो एक साइनेप्सिस से वेसीकिल के द्वारा छोड़ा जाता है) ही वह अवयव होता है जो मांसपेशी तन्तु पर स्थित एक एसीटिलकोलिन ग्राही (एक अन्य प्रोटीन जो तंत्रिका संचारक से बन्धन बनाने के लिए एकदम अनुरूप आकार का होता है) को सक्रिय करता है और ग्राही में एक आयन प्रवाहिका को खोल देता है तथा इस तरह सोडियम आयनों के बड़े प्रवाह को भीतर आने देता है। फिर यह मांसपेशी में एक विद्युतीय संवेग पैदा करता है, जिसके कारण कोई अंग संचालन की क्रिया होती है।

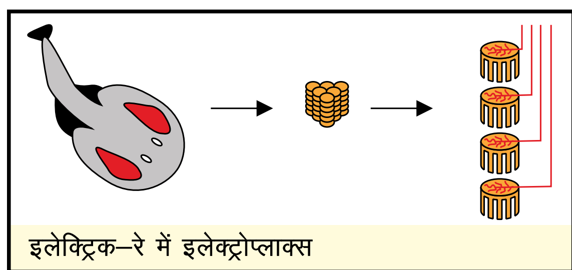
एक क्रिया विभव ठीक–ठीक किस तरह मांसपेशी के तन्तु को सिकुड़ने के लिए प्रेरित करता है? इसका उत्तर कई अन्य आयन प्रवाहिकाओं में निहित है।

विद्युत संवेगों के कारण कैल्शियम प्रवाहिकाएँ, जो रायनोडिन ग्राही कहलाती हैं, खुलती हैं। ये प्रवाहिकाएँ कोशिका के बाहर के हिस्से से नहीं जुड़तीं, बल्कि वे झिल्ली से बँधे कोशिका के भीतर के कैल्शियम आयनों के भण्डार से जुड़ती हैं, जिसे सैरकोप्लाज्मिक रैटीकुलम कहा जाता है। एकबारगी जब सायनोडिन प्रवाहिकाएँ खुल जाती हैं, तो कैल्शियम आयनों का भारी प्रवाह मांसपेशी तन्तुओं के भीतरी भाग में आ जाता है, जिसके फलस्वरूप वे सिकुड़ते हैं। जब कैल्शियम आयनों को वापिस इस भण्डार में पम्प कर दिया जाता है तो मांसपेशी ढीली हो जाती है। विद्युतीय तरीके से संचालित होने वाली यह मोटर कितनी बारीकी से बुनी गई और जटिल है!!

ईल मछलियाँ – प्राकृतिक विद्युत उत्पादक

विकास की प्रक्रिया ने कुछ प्राणियों के मांसपेशी तन्तुओं को इस तरह संशोधित किया है कि उनकी सिकुड़ने की क्षमता खो गई है, पर उसके बजाय वे अन्य भूमिकाएँ निभाने में सक्षम हो गए हैं। इसका एक उदाहरण विद्युतीय ईल मछली में देखा जा सकता है, जिसने संशोधित मांसपेशी तन्तुओं का उपयोग करके एक अत्यन्त प्रभावशाली विद्युतीय झटका उत्पादक तंत्र विकसित कर लिया है। यह प्राणी 500 वोल्ट से भी अधिक का विद्युतीय झटका और लगभग एक एम्पीयर की विद्युतीय धारा उत्पन्न कर सकता है – जो कि आधा किलोवाट विद्युत शक्ति के बराबर है। यह झटका एक मनुष्य को मार भी सकता है। इलेक्ट्रिक–रे मछली भी इसी से मिलते–जुलते तरीके से विद्युत पैदा करती है।

विद्युत ईलों की लम्बाई दो से लेकर ढाई मीटर तक भी बढ़ सकती है। उनके शरीर का लगभग 80 प्रतिशत भाग विद्युत बैटरी समूहों के समतुल्य काम करने वाले जैविक तंत्रों के लिए समर्पित रहता है। ऐसे हर तंत्र समूह में दोनों तरफ पतली प्लेट के जैसे संशोधित मांसपेशी कोशिकाओं के लगभग 70 लम्बे खम्भे होते हैं जो इल्क्ट्रोप्लाक्स कहलाते हैं। हर खम्भे में सिलसिले से जमी हुई लगभग 5000–10000 ऐसी कोशिकाएँ होती हैं।


इलेक्ट्रिक–रे में इलेक्ट्रोप्लाक्स

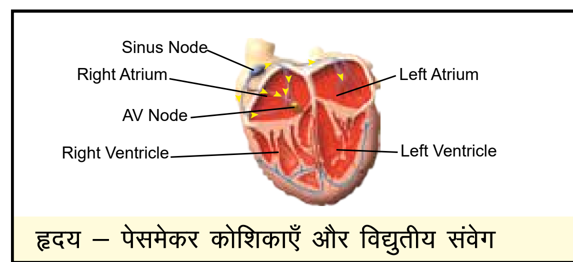
इन कोशिकाओं में से प्रत्येक का एक पक्ष तंत्रिका के सिरे से जुड़ा रहता है। सामान्यतया कोशिका के दोनों पक्षों के बीच कोई विभव अन्तर नहीं होता। जब यह मछली अपने विद्युतीय हथियार को सक्रिय करती है, तो वह प्रत्येक कोशिका की तंत्रिका में एक संवेग को जारी कर देता है। यह संवेग प्रत्येक इलेक्ट्रोप्लाक पर एक मांसपेशी क्रिया विभव को सक्रिय कर देता है, लेकिन ऐसा सिर्फ उस हिस्से में होता है जो तंत्रिकाओं से जुड़ा रहता है। इससे कोशिका के दोनों पक्षों के बीच लगभग 150mV का विभव अन्तर पैदा हो जाता है। चूँकि यह एक साथ सभी कोशिकाओं में होता है, और चूँकि हर खम्भे की कोशिकाएँ श्रेणीबद्ध तरीके से जुड़कर काम करती हैं, इसलिए ईल के शरीर में सबके योगदान को मिलाकर समग्र रूप से 500 वोल्ट तक का वोल्टेज निर्मित हो जाता है। यदि इस हथियार को लगातार इस्तेमाल किया जाता है तो कोशिका के भीतर बाढ़ की तरह आने वाले सोडियम आयनों को फिर से बाहर पम्प किए जाने का समय नहीं मिलता। इसके फलस्वरूप क्रिया विभव और वोल्टेज तब तक लगातार गिरता जाता है जब तक कि बैटरी पूरी तरह आवेशरहित नहीं हो जाती।

विद्युतीय तरीके से नियोजित दिल की धड़कन

अत्यन्त ही सटीक और विद्युतीय शक्ति से संचालित होने वाली एक और ताकतवर मशीन मनुष्य का हृदय है – यह दिन में लगभग 1,00,000 बार धड़कता है। जब तक यह जीवित रहता है तब तक कभी भी नहीं रुकता। इसे एक क्रिया विभव के रूप में विद्युतीय शक्ति मिलती है जो दाहिने ऐट्रियम की दीवार में स्थित पेसमेकर कोशिकाओं में पैदा की जाती है।

हृदय में खून ऊपर के कक्षों (ऐट्रिया) से होकर प्रवेश करता है। फिर यह संकुचन के द्वारा रक्त को हृदय के अपेक्षाकृत बड़े निचले कक्षों (वेन्ट्रीकिल्स) में धकेलता है। फिर लगभग आधा सेकेण्ड बाद वेन्ट्रीकिल्स सिकुड़ते हैं और इस प्रक्रिया के द्वारा खून को बाहर पम्प करते हैं, बाएँ वेन्ट्रीकिल शरीर में और दाएँ वेन्ट्रीकिल फेफड़ों में भेजते हैं।

हृदय के उचित और सक्षम ढंग से काम करने के लिए यह बहुत जरूरी है कि सभी संकुचनशील कोशिकाओं के समवेत ढंग से एक साथ सिकुड़ने के द्वारा इन संकुचनों की लय बरकरार रखी जाए।



हृदय – पेसमेकर कोशिकाएँ और विद्युतीय संवेग

हृदय की लय को संचालित करने वाली पेसमेकर कोशिकाओं को सामूहिक रूप से साइनो–ऐट्रियल नोड कहा जाता है। हृदय को उत्प्रेरित करने वाले विद्युतीय संवेग की शुरुआत सोडियम आयन प्रवाहिकाओं के द्वारा की जाती है। यह झिल्ली के विभव को उलट देता है और फिर वह इन कोशिकाओं के भीतर स्थित कैल्शियम आयन प्रवाहिकाओं को खोल देता है, जिससे कैल्शियम आयनों की बाढ़ बाहर से कोशिकाओं के भीतर आ जाती है। फिर ये आयन अन्य कैल्शियम

प्रवाहिकाओं को खोल देते हैं जिसके परिणामस्वरूप कोशिकाओं के आन्तरिक भण्डार में से बड़ी तादाद में कैल्शियम आयन छोड़े जाते हैं। ये कैल्शियम आयन संकुचनशील प्रोटीनों से क्रिया करते हैं और हृदय की मांसपेशियों को सिकुड़ने के लिए बाध्य करते हैं। यहाँ कैल्शियम की प्रवाहिकाओं के होने का लाभ यह है कि सोडियम प्रवाहिकाओं के विपरीत वे तब तक खुली रहती हैं जब तक कि झिल्ली का विभव धनात्मक रहता है। चूँकि क्रिया विभव आधा सेकेण्ड के लगभग रहता है, इसलिए कैल्शियम प्रवाहिकाएँ यह सुनिश्चित करने में सहायक होती हैं कि उसके परिणामस्वरूप उत्पन्न होने वाला मांसपेशियों का संकुचन उससे ज्यादा समय तक चले। अब पोटैशियम प्रवाहिकाएँ खुलती हैं और कोशिका को फिर से ध्रुवीय बनाती हैं तथा कैल्शियम प्रवाहिकाओं को बन्द करती हैं। ये पोटैशियम प्रवाहिकाएँ, तंत्रिका कोशिकाओं की पोटैशियम प्रवाहिकाओं की अपेक्षा और भी धीरे–धीरे खुलती हैं तथा इस तरह हृदय के क्रिया विभव को कार्य करने के लिए आवश्यक समय प्रदान करती हैं।

प्रत्येक संवेग पेसमेकर कोशिकाओं से पहले ऐट्रियो–वैन्ट्रीकुलर कोशिकाओं (जो ऐट्रिया तथा वैन्ट्रीकिल्स के बीच में स्थित होती हैं) तक जाता है और फिर वैन्ट्रीकिल्स के चारों ओर की कोशिकाओं में जाता है। इससे यह सुनिश्चित होता कि पहले ऐट्रिया और फिर वैन्ट्रीकिल्स क्रम से सिकुड़ते हैं, इसी के परिणामस्वरूप दिल के धड़कने की सुपरिचित 'धक–धक' लय पैदा होती है।

जैसा कि आप देख सकते हैं, हृदय एक बारीकी से गढ़ा गया और समय के अन्तरालों में नियंत्रित, जटिल और शक्तिशाली स्वचालित विद्युत पम्प है।

हमारी प्रत्येक संवेदन इन्द्री क्रिया विभव तथा आयन प्रवाहिकाओं को सक्रिय करने के माध्यम से संसार का अनुभव करती है। रैटीना (आँख का परदा) में यह सोडियम तथा कैल्शियम आयन प्रवाहिकाओं के जटिल झरने जैसी प्रक्रिया के कारण होता है। कानों में कोक्लिया में स्थित बालों की संवेदी कोशिकाओं की यांत्रिक हलचल ही उन आयन प्रवाहिकाओं को खोलती है जिनके परिणामस्वरूप क्रिया विभव उत्पन्न होता है। स्वाद कलिकाओं (टेस्ट बड्स) की अपनी आयन प्रवाहिकाएँ होती हैं जो तब अपना क्रिया विभव उत्पन्न करती हैं जब पाँच बुनियादी स्वाद – मीठा, नमकीन, खट्टा, कड़वा और युमामी (umami) – अनुभव किए जाते हैं। हमारी नाक में लगभग 350 विभिन्न प्रकार के ग्राही घटक होते हैं। जिस अणु को सूँघा जा रहा है उस पर निर्भर करते हुए इनमें से अनेक सक्रिय हो जाते हैं। इसके फलस्वरूप सक्रिय की गई कोशिकाओं के हजारों संयोजन, जिनमें से हर संयोजन के कारण एक अलग गंध का अनुभव होता है, हमें गंधों की बारीक भेदों वाली समझ निर्मित करने में समर्थ बनाते हैं। ऐसा अणुओं के ऑलफैक्टरी (घ्राण सम्बन्धी) कोशिकाओं के ग्राही अंगों के साथ जुड़ जाने के माध्यम से होता है। इसके फलस्वरूप विशेष आयन प्रवाहिकाएँ खुल जाती हैं जो ऑलफैक्टरी न्यूरानों में क्रिया विभवों को सक्रिय कर देती हैं। हमारी त्वचा में भी यांत्रिक रूप से संवेदनशील आयन प्रवाहिकाएँ होती हैं जो छुए जाने पर क्रिया विभव को सक्रिय कर देती हैं।

मस्तिष्क – विद्युतीय ढंग से संचालित केन्द्रीय प्रसंस्करण इकाई (सेंट्रल प्रोसेसिंग यूनिट)

हमारे शरीर के सभी अंगों में से मस्तिष्क सबसे जटिल विद्युतीय–रासायनिक रूप से क्रियाशील अंग होता है। अन्ततः ये सारे संकेत वही जाते हैं। इसमें एक अरब से भी अधिक तंत्रिका कोशिकाएँ होती हैं और उनमें से प्रत्येक अन्य हजारों कोशिकाओं से जुड़ी रहती है, जिसके फलस्वरूप खरबों जोड़ बन जाते हैं।

मस्तिष्क के अलग–अलग भाग अलग–अलग क्रियाओं को नियंत्रित करने के लिए समर्पित रहते हैं। यह हम कैसे जानते हैं? पूरे मस्तिष्क में समग्र रूप से होने वाली और उसके विभिन्न भागों में अलग–अलग होने वाली विद्युतीय गतिविधि का अनुसरण करने के द्वारा, हमने मस्तिष्क के काम

करने की प्रणाली के बारे में महत्त्वपूर्ण अन्तर्दृष्टियाँ हासिल की हैं। अब मस्तिष्क के अवलोकन (ब्रेन स्कैनिंग) के ऐसे विभिन्न तरीके उपलब्ध हैं जिनका उपयोग प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से मस्तिष्क में होने वाली विद्युतीय गतिविधि को मापने और रिकार्ड करने के लिए किया जाता है। ऐसा एक तरीका इलेक्ट्रो–एनसेफलोग्राम या ई.ई.जी. है। ई.ई.जी. में मस्तिष्क में होने वाली विद्युतीय गतिविधि के बारे में सूचनाओं को पकड़कर मस्तिष्क की तरंगों को रिकार्ड किया जाता है। चूँकि ई.ई.जी. मस्तिष्क में स्थित सभी न्यूरानों की सामूहिक और समग्र गतिविधि दर्शाता है, इसलिए इसकी उपयोगिता सीमित है। पर अलग–अलग गतिविधियों और कार्यों के लिए जिम्मेदार मस्तिष्क के अलग–अलग हिस्सों की पहचान करने में एफ.एम.आर.आई. यानी फंक्शनल मैगनेटिक रैजोनेन्स इमेजिंग (कार्याधारित चुम्बकीय अनुनादी छवि अंकन) विधि कहीं अधिक कारगर होती है। यह विधि मस्तिष्क के विभिन्न क्षेत्रों में होने वाले रक्त के प्रवाह को नापती है जो कि विद्युतीय गतिविधि का एक सूचक होता है। जब सम्बन्धित व्यक्ति से विभिन्न प्रश्न पूछे जाते हैं, या जब उससे अलग–अलग गतिविधियाँ (जैसे सोना, बात करना, सुनना या हाथ–पैरों का इस्तेमाल करना, विभिन्न तस्वीरों को देखना आदि) करवाई जाती हैं, तब उसके मस्तिष्क के अलग–अलग भागों में होने वाली गतिविधि का मानचित्रण करके, वैज्ञानिकों ने विभिन्न क्रियाओं, विचारों और भावनाओं के लिए जिम्मेदार मस्तिष्क के अलग–अलग क्षेत्रों की पहचान करने में सफलता पाई है।

मैं मस्तिष्क की कार्यप्रणाली में और गहराई में नहीं जाऊँगा, क्योंकि उसके लिए अलग से एक पूरी किताब की जरूरत होगी। पर इतना कहना काफी है कि मस्तिष्क की जटिल कार्यप्रणाली को समझने की यात्रा में हम अभी भी प्रारम्भिक अवस्था में ही हैं।

शरीर तथा उसके अंगों के विकास और उनके आकार को निर्धारित करना

अन्त में मैं जैव–विद्युत (बायो–इलेक्ट्रिसिटी) के क्षेत्र में हो रहे सबसे नए शोधकार्य का संक्षिप्त उल्लेख करना चाहूँगा। यह बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। हाल के अध्ययनों से ऐसे संकेत मिलते हैं कि कोशिकाओं के एक समूह के विश्रामावस्था विभव को परिवर्तित करना अंगों के विकास को प्रेरित कर सकता है। वैज्ञानिकों ने टैडपोलों और मेंढकों की परिपक्व कोशिकाओं के समूहों के कोशिका विभवों को परिवर्तित करके उनमें नए अंग और हाथ–पैर विकसित किए हैं। यह सम्भव प्रतीत होता है कि कोशिकाओं के विभवों का स्वरूप ही संकेतों के द्वारा अंगों और हाथ–पैर के त्रि–आयामी विकास को प्रेरित करता है और यह सुनिश्चित करता है कि अंग उपयुक्त परिमाणों और आकारों में विकसित हों। अंगों के पुनरुत्पादन के चिकित्सा विज्ञान के लिए इस बात के बहुत महत्त्वपूर्ण निहितार्थ हैं, क्योंकि शल्य क्रिया द्वारा शरीर के काटे जा चुके अंगों को तब सम्भावित रूप से, उनके छोर की कोशिकाओं के विभव को परिवर्तित करके, फिर से विकसित किया जा सकेगा। कोशिका विभव को आनुवंशिक विधि से ऐसी नई आयन प्रवाहिकाओं को निर्मित करके परिवर्तित किया जा सकता है जो कोशिका के भीतर और उसके बाहर के आयनों के सन्तुलन को बदल देती हों।

निष्कर्ष

जैसे–जैसे हम जैव–विद्युत के क्षेत्र में तथा जीवविज्ञान के क्षेत्र में प्रतिदिन नई समझ प्राप्त कर रहे हैं, विशेष रूप से मानव शरीर में विद्युत की भूमिका के बारे में, हमारी समझ में भी विस्फोटक गति से प्रगति हो रही है। इसलिए मुझे विश्वास है कि मानव शरीर को विद्युत से संचालित होने वाली संसार की सबसे जटिल मशीन कहने पर कोई हमें गलत नहीं ठहरा सकता।

Reference

1. It's Electric: Biologists Seek to Crack Cell's Bioelectric Code. Daisy Yuhas. Scientific American, March 27, 2013.URL: http://www.scientificamerican.com/article/bioelectric-code/

2. Harnessing the Bioelectric Potential of Cells for Regeneration - An interview with Michael Levin Ph.D., Professor, Department of Biology and Director, Tufts Center for Regenerative and Developmental Biology. Yvonne Stapp. Science for the public, February 21st, 2012 https://www.youtube.com/watch?v=YVY1kNAAqsE

3. The Spark of Life. Frances Ashcroft. ISBN-10: 039334679X



रामगोपाल (राम जी) वल्लत *सबसे ज्यादा बिकने वाली विज्ञान कथाओं के लेखक और विज्ञान के प्रति उत्साह जगाने वाले व्यक्ति हैं। अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय में अपने काम के अलावा वे एक टैक्नोलोजी स्टार्ट अप में भागीदार भी हैं। वे माध्यमिक स्कूल के बच्चों के लिए विज्ञान कार्यशालाएँ और हाईस्कूल विद्यार्थियों के लिए प्रेरक कार्यशालाएँ भी संचालित करते हैं। उनकी सार्वजनिक प्रोफाइल है ramgvallath.com, ट्विटर आईडी है @ramgvallath, और ईमेल आईडी है ramgopal.vallath@gmail.com* ***अनुवाद :*** *सत्येन्द्र त्रिपाठी*



रासायनिक उर्वरक:

रसायनशास्त्र की प्रयोगशालाओं को पौधों के जीवन से जोड़ना

जया अय्यर

निरन्तर बढ़ती हुई जनसंख्या का पेट भरने के लिए आवश्यक पर्याप्त मात्रा में विभिन्न फसलों का उत्पादन करना एक चुनौती है। इसका सामना अनेक देशों को, विशेष रूप से विकासशील देशों और कम विकसित देशों को करना पड़ रहा है। उपजाऊ जमीन की उपलब्धता, जलवायु की अनुकूल परिस्थितियों (और खेती की अच्छी पद्धतियों) के साथ विभिन्न प्रकार की आवश्यक सामग्री जैसे कि उच्च पैदावार देने वाले बीज, उर्वरक, कीट नियंत्रक दवाएँ, सिंचाई आदि इस सन्दर्भ में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यह लेख पाठकों का परिचय रासायनिक उर्वरकों से करवाता है जो कि खाद्य उत्पादन में लगने वाली सबसे महत्त्वपूर्ण बाहरी सामग्रियों में से एक हैं।

मनुष्य और अन्य पशु अपने पोषण की जरूरतों को पूरा करने के लिए प्रत्यक्ष रूप से या परोक्ष रूप से पौधों पर निर्भर करते हैं। पोषण के लिए आवश्यक चीजों में कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन और विटामिन तो होते ही हैं, इनमें विभिन्न प्रकार के खनिज तत्व भी शामिल रहते हैं, जैसे कि फॉस्फोरस, पोटैशियम, आयरन, मैग्नीशियम आदि। पौधों के पोषण के लिए भी ऐसी ही जरूरतें होती हैं। पौधों की कार्बोहाइड्रेट (कार्बन, हाइड्रोजन तथा आक्सीजन) की जरूरतें प्रकाश संश्लेषण (फोटोसिंथेसिस) की प्रक्रिया के माध्यम से प्रकाश, हवा और पानी के द्वारा पूरी की जाती हैं। लेकिन कार्बोहाइड्रेट के अलावा पौधों को अमीनो अम्लों का उत्पादन करने के लिए नाइट्रोजन (N) तथा सल्फर (S) जैसे तत्वों की, न्यूक्लिक अम्लों का संश्लेषण करने के लिए फॉस्फोरस (P) की, आयनों के परिवहन और एन्जाइम के कामकाज के लिए पोटैशियम (K) आदि तत्वों की भी आवश्यकता होती है। पौधों के द्वारा ये तत्व उस मिट्टी से अवशोषित जाते हैं जिसमें वे उगते हैं।

उपजाऊ मिट्टी इन अति आवश्यक तत्वों से सम्पन्न होती है, जिसके कारण उसमें पौधों का स्वस्थ विकास सम्भव हो पाता है। परन्तु, खाद्य फसलों की खेती करने में अक्सर उसी मिट्टी में बार–बार बड़े पैमाने पर पौधों को उगाने का चक्र दोहराया जाता है। इससे मिट्टी को फिर से जीवन्त होने का अवसर नहीं मिलता। इसके परिणामस्वरूप समय बीतने पर उन सभी आवश्यक

तत्वों में भारी कमी आ जाती है, जिनकी खाद्य फसलों को अपनी वृद्धि के लिए तलाश रहती है।

ऐसे सभी पदार्थ उर्वरक होते हैं जो मिट्टी में पोषक तत्व मिलाने के लिए इस्तेमाल किए जा सकते हैं, जिससे कि मिट्टी की उर्वरता में सुधार आता है और फसलों के बढ़ने तथा पैदावार में वृद्धि होती है। उर्वरकों को मोटेतौर पर दो वर्गों में बाँटा जाता है। पहला है प्राकृतिक या जैविक उर्वरक, जिनमें पीट (वनस्पति और घास का कचरा), पशुओं का मल–मूत्र तथा अवशेष, पौधों तथा फल–सब्जियों के घरेलू कचरे से बनाया गया कम्पोस्ट, निस्तार में निकला मल का कीचड़, जैव–उर्वरक आदि शामिल रहते हैं। दूसरा वर्ग रासायनिक उर्वरकों का है, जिनका उत्पादन संश्लेषण करके किया जाता है। इनमें ऐसे रसायन जैसे कि यूरिया, कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट, अमोनियम सल्फेट आदि शामिल रहते हैं।

यह लेख रासायनिक उर्वरकों पर केन्द्रित है और इस विषय के विभिन्न पहलुओं के बारे में ऐसी अन्तर्दृष्टियाँ प्रदान करता है जो आमतौर पर पाठ्यपुस्तकों में उपलब्ध नहीं रहतीं।

पौधों की पोषक तत्वों की जरूरतें और उनकी आपूर्ति

पौधों के उगने और पनपने के लिए अनेक रासायनिक तत्वों की जरूरत होती है। इनका वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है :

(क) प्रमुख रूप से आवश्यक पोषक तत्व : नाइट्रोजन, फॉस्फोरस तथा पोटैशियम

(ख) द्वितीयक पोषक तत्व : कैल्शियम, मैग्नीशियम और सल्फर

(ग) सूक्ष्म मात्रा वाले पोषक तत्व : आयरन, मैंगनीज, जिंक तथा कॉपर। साथ ही अति सूक्ष्म मात्रा में कई अन्य तत्व जैसे बोरोन तथा मोलीब्डनम।

पौधे इन्हें सोखकर आत्मसात कर सकें इसके लिए इनकी आपूर्ति किस प्रकार की जाती है?

उपरोक्त तत्वों को रसायन के रूप में मिट्टी में मिलाए जाने की जरूरत होती है (हालाँकि कुछ पत्तियों पर छिड़के जाते हैं)। उन्हें पानी में घुलनशील होना चाहिए या कुछ समय के अन्तराल में धीरे–धीरे घुलते रहना चाहिए। घुले हुए लवण (उनके आयनिक रूप में) पौधों की जड़ों की झिल्लियों के द्वारा विसरण की प्रक्रिया के माध्यम से सोख लिए जाते हैं। मिट्टी का सूक्ष्म–जीवाणुओं (माइक्रोब्स) से युक्त तंत्र, एन्जाइमों का इस्तेमाल करने वाली प्रक्रियाओं के द्वारा, उसमें मिलाए गए उर्वरकों में से कुछ को सोखने योग्य रूपों में परिवर्तित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। सूक्ष्म जीवाणु आवश्यकता से अधिक प्रदान किए पोषक तत्वों में से कुछ को मिट्टी में स्थापित करने का काम भी करते हैं। इसलिए पौधों के द्वारा रासायनिक उर्वरकों का कारगर तरीके से सोखा जाना, जिस मिट्टी में वे उगते हैं उसमें स्थित सूक्ष्म–जीवाणुओं की गतिविधि और उसमें पानी की मात्रा पर निर्भर करता है।

रासायनिक उर्वरकों का उत्पादन एक पोषक तत्व या कई पोषक तत्वों वाले रासायनिक रूपों में किया जा सकता है। एक पोषक तत्व वाले उर्वरकों को 'सीधे उर्वरक' कहा जाता है, और बहु–पोषक तत्वों वाले उर्वरकों को 'मिश्रित उर्वरक' कहा जाता है। यूरिया को छोड़कर, अधिकांश उर्वरक बहु–पोषक तत्वों वाले होते हैं। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि उर्वरक पानी में घुलनशील ऐसे अकार्बनिक रसायन होते हैं, जिनमें कैटायन और ऐनायन होते है; इन आयनों में से प्रत्येक कोई पोषक तत्व प्रदान करता है।

मिश्रित उर्वरकों में दो या दो से अधिक पोषक तत्व निहित होते हैं और उनकी संरचना N-P-K के क्रम में व्यक्त की जाती है। नाइट्रोजन (N) की मात्रा वजन के अनुसार (N) का %, फॉस्फोरस (P) की मात्रा वजन के अनुसार P_2O_5 का % और पोटैशियम (K) की मात्रा वजन के अनुसार K_2O के % के रूप में व्यक्त की जाती हैं। परम्परा के तौर पर, P_2O_5 तथा K_2O, दोनों ही इसमें अवधारणात्मक रूप से निरूपित किए गए होते हैं; वास्तव में वे

इनमें इन रासायनिक रूपों में मौजूद नहीं होते। N-P-K-S संरचना वाले मिश्रित उर्वरकों में सल्फर की मात्रा का उल्लेख भी, S के प्रतिशत के रूप में किया जाता है।

अब हम भारतीय बाजारों में उपलब्ध रासायनिक उर्वरकों पर एक नजर डालेंगे।

नाइट्रोजन युक्त उर्वरक

1. **यूरिया** : इस वर्ग का सबसे अधिक जाना–माना और लोकप्रिय उर्वरक यूरिया है। यह पानी में घुलनशील एक कार्बनिक रसायन है, जिसका निर्माण अमोनिया (NH_3) और कार्बन डाईआक्साइड (CO_2) से एक उच्च दबाव और तापमान वाली औद्योगिक प्रक्रिया के द्वारा किया जाता है। यूरिया का रासायनिक सूत्र NH_2-CO-NH_2 होता है। यूरिया में वजन के अनुसार लगभग 46% नाइट्रोजन होती है।



प्रिल टावर

सबसे अधिक उपयोग किए जाने वाले नाइट्रोजन युक्त उर्वरक यूरिया के बड़े पैमाने पर उत्पादन ने इसे किसानों के लिए कम कीमत पर (जिन्हें भारत सरकार द्वारा आंशिक योगदान या सबसिडी देकर और भी कम कर दिया जाता है) हासिल करना सम्भव बनाया है। यूरिया को छोटी–छोटी गोलियों (प्रिल्स) के रूप में, प्रिलिंग (गोली बनाने वाली) नामक औद्योगिक प्रक्रिया के द्वारा बनाया जाता है। इस प्रक्रिया में पिघले हुए यूरिया को एक बहुत ऊँचे टावर में ऊपर से नीचे गिराया जाता है। इसकी बूँदें जब नीचे आती हैं तो वे ठोस आकार ले लेती हैं। यूरिया पूरी तरह से पानी में घुलनशील है, लेकिन यह पौधों के द्वारा सीधे नहीं सोखा जाता। यह मिट्टी के सूक्ष्म जीवाणुओं में यूरीज नाम के एक एन्जाइम के द्वारा पानी में विघटित (हाइड्रोलाइज) कर दिया जाता है, जिससे अमोनियम तथा कार्बोनेट आयन बनते हैं। अमोनियम को विसरण की प्रक्रिया से पौधों के द्वारा सोख लिया जाता है।

पूछा जा सकता है कि अमोनिया सीधे ही पौधों को क्यों नहीं दी जा सकती ? वास्तव में उसकी सीधी आपूर्ति की जा सकती है। अमेरिका जैसे देशों में, ऐसा पाइपलाइनों के द्वारा खेतों तक अमोनिया पहुँचाकर किया भी जाता है। परन्तु, कमरे के तापमान पर अपने विशुद्ध रूप में अमोनिया एक बेहद तीखी और जहरीली गैस होती है। किसी भी हानिकारक प्रभाव से बचने के लिए अमोनिया को यूरिया में परिवर्तित कर दिया जाता है। जिसका आसानी से परिवहन किया जा सकता है, जो पानी में घुलनशील है और इस रूप में किसान आसानी से उपयोग कर सकते हैं।



चित्र 1 : यूरिया की गोलियाँ (प्रिल्स)

2. कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट (CAN) : यह अमोनियम नाइट्रेट और कैल्शियम कार्बोनेट का मिश्रण होता है, जिन्हें ऐसे अनुपात में मिलाकर दानेदार रूप दिया जाता है कि उसमें वजन के अनुसार लगभग 25% नाइट्रोजन होती है। इस नाइट्रोजन की 12.5% अमोनियाकल नाइट्रोजन (NH_4) के रूप में होती है और शेष 12.5% नाइट्रेट नाइट्रोजन (NO_3) के रूप में होती है। चूँकि इसमें एक अतिरिक्त पोषक तत्व कैल्शियम होता है, इसलिए यह फसलों के लिए लाभकारी होता है। हालाँकि इसमें नाइट्रोजन की कुल मात्रा यूरिया से कम होती है।

3. अमोनियम सल्फेट : इसे अक्सर एक सह–उत्पाद की तरह प्राप्त किया जाता है। इसमें 20.6% नाइट्रोजन अमोनियाकल रूप में होती है। चूँकि इसमें सल्फर भी (वजन के अनुसार 23%) होता है, जो पौधों के लिए एक बहुत महत्त्वपूर्ण पोषक तत्व है, इसलिए अनेक फसलों के लिए अमोनियम सल्फेट एक अच्छा उर्वरक होता है। पानी में 100% घुलनशील होने के कारण यह बूँद–बूँद वाली सिंचाई पद्धति (ड्रिप इरिगेशन) के लिए उपयोगी है, जिसमें उर्वरक के घोल को पतले रूप में पाइपों के द्वारा सीधे ही पौधों की जड़ों में दिया जाता है। छिड़काव वाली सिंचाई पद्धति (स्प्रिंकलर इरिगेशन) में इस घोल को पौधों पर छिड़का जाता है।

फॉस्फेटिक उर्वरक

फॉस्फेटिक उर्वरकों में फॉस्फोरस (जिसे P_2O_5 की तरह निरूपित किया जाता है) प्रमुख पोषक तत्व के रूप में होता है।

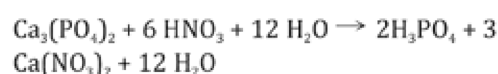
फॉस्फोरस को प्राकृतिक रूप से चट्टानी फॉस्फेट (रॉक फॉस्फेट) से प्राप्त किया जाता है, जो कि फॉस्फोरस से समृद्ध एक खनिज होता है। इसमें मुख्य रूप से कैल्शियम फॉस्फेट होता है। यही सभी फॉस्फेटिक उर्वरकों का प्राथमिक स्रोत होता है। रॉक फॉस्फेट को खनिज अम्लों के साथ क्रिया करवाकर पचाया जाता है, जिससे खनिज अम्ल के कैल्शियम लवण के साथ फॉस्फोरिक अम्ल प्राप्त किया जाता है। उदाहरण के लिए, सल्फ्यूरिक अम्ल के साथ रॉक फॉस्फेट की अभिक्रिया से फॉस्फोरिक अम्ल तथा सह–उत्पाद की तरह, कैल्शियम सल्फेट (जिसे फॉस्फो जिप्सम कहते हैं) प्राप्त होते हैं। फॉस्फोरिक अम्ल को अमोनिया मिलाकर उदासीन बनाया जाता है, जिससे दानेदार रूप में डाइअमोनियम फॉस्फेट (DAP) प्राप्त होता है जो कि एक बहुत लोकप्रिय फॉस्फेटिक (P) उर्वरक है।



चित्र 2 : मोटी पिसाई और आकार के अनुसार छटाई के बाद रॉक फॉस्फेट

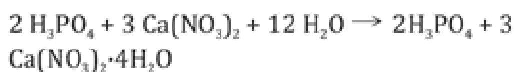
नाइट्रिक अम्ल के साथ रॉक फॉस्फेट की अभिक्रिया से फॉस्फोरिक अम्ल और कैल्शियम नाइट्रेट उत्पन्न होते हैं। फॉस्फोरिक अम्ल–कैल्शियम नाइट्रेट के इस मिश्रण को अमोनिया द्वारा उदासीन बनाकर दानेदार रूप दिया जाता है और इस तरह अमोनियम नाइट्रोफॉस्फेट (ANP) उर्वरक प्राप्त किया जाता है।

इस प्रक्रिया में रॉक फॉस्फेट का नाइट्रिक अम्ल के द्वारा अम्लीकरण किया जाता है जिससे फॉस्फोरिक अम्ल और कैल्शियम नाइट्रेट का मिश्रण अभिक्रिया के निम्न सूत्र के अनुसार प्राप्त होता है :



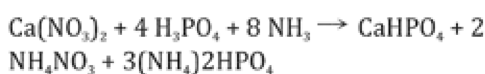
$$Ca_3(PO_4)_2 + 6\,HNO_3 + 12\,H_2O \rightarrow 2H_3PO_4 + 3\,Ca(NO_3)_2 + 12\,H_2O$$

इस मिश्रण को 0°C से भी नीचे तक ठण्डा किया जाता है। निचले तापमान पर कैल्शियम नाइट्रेट रवेदार रूप में जम जाता है और उसे फॉस्फोरिक अम्ल से अलग किया जा सकता है।



$$2\,H_3PO_4 + 3\,Ca(NO_3)_2 + 12\,H_2O \rightarrow 2H_3PO_4 + 3\,Ca(NO_3)_2 \cdot 4H_2O$$

इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप प्राप्त हुए कैल्शियम नाइट्रेट को एक नाइट्रोजन उर्वरक की तरह इस्तेमाल किया जा सकता है। जब इसका उपयोग अमोनियम कार्बोनेट के साथ अभिक्रिया करने में किया जाता है, तो उसके फलस्वरूप अमोनियम नाइट्रेट तथा कैल्शियम कार्बोनेट, जो एक सह–उत्पाद होता है, बनते हैं। कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट (CAN) का उत्पादन अमोनियम नाइट्रेट और कैल्शियम कार्बोनेट के मिश्रण को दानेदार स्वरूप में बदलकर किया जाता है। इसे छानने पर छने हुए द्रव में मुख्य रूप से फॉस्फोरिक अम्ल, थोड़ा नाइट्रिक अम्ल तथा अवशिष्ट कैल्शियम नाइट्रेट होता है। इसको अमोनिया से उदासीन बनाकर अमोनियम नाइट्रोफॉस्फेट (ANP) का उत्पादन किया जाता है।



$$Ca(NO_3)_2 + 4\,H_3PO_4 + 8\,NH_3 \rightarrow CaHPO_4 + 2\,NH_4NO_3 + 3(NH_4)2HPO_4$$

प्रमुख फॉस्फेटिक उर्वरक इस प्रकार हैं :

1. सिंगल सुपरफॉस्फेट
2. ट्रिपल सुपरफॉस्फेट
3. मोनोअमोनियम फॉस्फेट, MAP (11–52–0)
4. डाइअमोनियम फॉस्फेट, DAP (18–46–0)
5. अमोनियम नाइट्रोफॉस्फेट, ANP (20–20–0)

पोटैशियम उर्वरक

पौधों के लिए तीसरा सबसे महत्त्वपूर्ण पोषक तत्व पोटैशियम (K) है। इसे पोटैशियम क्लोराइड (पोटाश के मुरिएट, MOP) के रूप में, या पोटैशियम सल्फेट के रूप में दिया जाता है। मूल्य की दृष्टि से MOP ज्यादा सस्ता होता है, इसलिए यह किसानों के द्वारा व्यापक रूप से K उर्वरक की तरह इस्तेमाल किया जाता है। इसे या तो इसी रूप में प्रयोग करते हैं या फिर N तथा P के साथ मिलाकर मिश्रित उर्वरकों की तरह उपयोग करते हैं।

मिश्रित उर्वरक

इनमें एक से अधिक पोषक तत्व होते हैं। इन्हें N-P-K-S की तरह निरूपित किया जाता है। ऊपर बताए गए फॉस्फेटिक उर्वरकों में से कुछ इस वर्ग के अन्तर्गत आते हैं क्योंकि उनमें नाइट्रोजन (N) भी होती है। N-P-K से दर्शाए जाने वाले मिश्रित उर्वरक किसानों द्वारा व्यापक रूप से इस्तेमाल किए जाते हैं। पोटैशियम (K) की आवश्यक मात्रा प्राप्त करने के लिए, इनमें MOP (KCl) या पोटैशियम सल्फेट को भी मिला लिया जाता है।

द्रव उर्वरक तथा पानी में घुलनशील उर्वरक

द्रव उर्वरकों, जैसे कि यूरिया, अमोनियम नाइट्रेट तथा कई पोषक तत्वों वाले और पानी में 100% घुलनशील उर्वरकों के उत्पादन और बिक्री को भारत सरकार द्वारा स्वीकृति प्रदान की गई है। इन्हें बूँद–बूँद सिंचाई तथा छिड़काव वाली सिंचाई की पद्धतियों में इस्तेमाल किया जाता है। परन्तु, इनकी अपेक्षाकृत अधिक लागत के कारण इनका उपयोग मुख्य रूप से फल–फूल–सब्जी की खेती (हॉर्टीकल्चर) में या ऊँची कीमत वाली फसलों के उत्पादन में ही किया जाता है।

सूक्ष्म पोषक तत्वों वाले उर्वरक

हालाँकि पौधों को सूक्ष्म पोषक तत्वों की उतनी अधिक मात्रा में आवश्यकता नहीं होती जितनी जरूरत उनको N,P,K आदि की होती है, परन्तु फिर भी ये पौधों के स्वस्थ विकास और फसलों के अच्छे उत्पादन के लिए बेहद जरूरी होते हैं। इन्हें पानी में घुलनशील रासायनिक लवणों (जैसे कि जिंक सल्फेट, मैंगनीज सल्फेट, कॉपर सल्फेट, बोरेक्स, फेरस सल्फेट, मैग्नीशियम सल्फेट और अमोनियम मालीबडेट) के रूप में दिया जाता है। पौधों के द्वारा इनको सोखना आसान बनाने के लिए इनमें कीलेटेड (EDTA) लवण भी मिला दिए जाते हैं।

नियंत्रित रूप से छोड़े जाने वाले उर्वरक

घुलकर बह जाने (लीचिंग) या अन्य तरीकों से उर्वरकों के बेकार जाने के नुकसान से बचने के

लिए, साथ ही बार–बार उनकी आपूर्ति को कम से कम करने के लिए नियंत्रित रूप से छोड़े जाने वाले कई उर्वरक विकसित किए गए हैं। पोषक तत्वों के धीरे–धीरे और लम्बे समय तक छोड़े जाने को नियंत्रित करने के लिए, पानी में बहुत ज्यादा घुलनशील उर्वरकों पर पानी में न घुलने वाले, किन्तु मिट्टी के लिए अनुकूल पदार्थों की परत चढ़ा दी जाती है। ऐसे कुछ उर्वरक हैं :

1. सल्फर की परत चढ़ा यूरिया (इसमें यूरिया के दानों पर पिघले हुए सल्फर की परत चढ़ा दी जाती है), SUC, इंटरनेशनल फर्टिलाइजर्स डेवलपमेंट कार्पोरेशन, यू.एस.ए. के द्वारा विकसित किया गया।
2. फॉस्फो–जिप्सम की परत चढ़ा यूरिया (GCU) को गुजरात में गुजरात नर्मदा वैली फर्टिलाइजर्स कम्पनी के एक शोध समूह द्वारा विकसित किया गया।
3. यूरिया सुपरग्रेन्यूल्स (USG) एक अन्य नियंत्रित रूप से छोड़ा जाने वाला यूरिया उर्वरक है जिसका इस्तेमाल सामाजिक वनीकरण में किया जाता है। इस तरह के नियंत्रित रूप से छोड़े जाने वाले उर्वरकों ने व्यावहारिक कृषि–विज्ञान (एग्रोनोमिक) परीक्षणों में पोषक तत्वों के इस्तेमाल किए जाने की बेहतर क्षमता दर्शाई है। परन्तु, इनकी बहुत ज्यादा लागत और कम उपलब्धता के कारण इनका व्यावसायिक उपयोग काफी सीमित है।

भारत में उर्वरकों का उत्पादन

रसायन एवं उर्वरक मंत्रालय द्वारा प्रकाशित आँकड़ों के अनुसार भारत में प्रमुख उर्वरकों के उत्पादन के परिमाण नीचे दी गई तालिका में दर्शाए गए हैं।[1] चूँकि देश में उर्वरकों का उत्पादन यहाँ की आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए पर्याप्त नहीं होता, इसलिए अतिरिक्त मात्रा में इन्हें आयात किया जाता है।

रासायनिक उर्वरकों की गुणवत्ता और विशेषताओं का विवरण[2]

भारतीय बाजारों में बेचे जाने वाले रासायनिक उर्वरकों की गुणवत्ता और उनकी विशेषताओं के विवरण को भारत सरकार द्वारा सख्ती से नियंत्रित किया जाता है। फर्टिलाइजर (कंट्रोल) ऑर्डर 1985 के अन्तर्गत उर्वरकों की संरचना, विशेषताओं का विस्तृत विवरण और हर अवयव के विश्लेषण की पद्धतियों का स्पष्ट वर्णन किया गया है। समय–समय पर, किन्हीं भी आवश्यक परिवर्तनों को समाहित करने के लिए या उल्लेख की गई सूची में नई चीजें जोड़ने आदि के लिए इस आदेश को संशोधित किया जाता है। उर्वरक निर्माताओं को इन निर्धारित बातों का किसी भी विचलन के बिना, पालन करना पड़ता है। बाजार में सरकारी एजेंसियों द्वारा स्थान पर ही विभिन्न जाँच की जाती हैं और यदि निर्धारित गुणवत्ता का उत्पाद में पालन नहीं किया गया हो तो निर्माता के खिलाफ कानूनी कार्यवाही की जाती है। पोषक तत्वों की मात्रा के अलावा, नमी की मात्रा, दानों का आकार, पानी में घुलनशीलता आदि को भी कड़ाई से निर्धारित और लागू किया जाता है।

सरकार द्वारा उर्वरकों की प्रशासित कीमतें

किसानों द्वारा वहन की जा सकने वाली कीमत पर देश भर में उर्वरकों की पर्याप्त उपलब्धता को सुनिश्चित करने के लिए, भारत सरकार (उर्वरक विभाग) ने उर्वरक मूल्य निर्धारण

तालिका 1 : भारत में प्रमुख उर्वरकों का उत्पादन (मात्रा लाख मीट्रिक टन में)

Fertiliser / Year	2006-07	2007-08	2008-09	2009-10
Urea	203.1	198.6	199.2	211.3
DAP	48.52	42.12	29.93	42.47
Complex Fertilisers	74.28	58.72	67.99	80.38

नीति (फर्टिलाइजर प्राइसिंग पॉलिसी) निर्मित की है। इस नीति के अनुसार, प्रमुख उर्वरकों के बिक्री मूल्य सरकार द्वारा निश्चित और समय–समय पर संशोधित किए जाते हैं। कुछ मिश्रित फार्मूलों का इस्तेमाल करते हुए, उत्पादन की लागत (तथा उनमें पर्याप्त मुनाफे को जोड़कर) और बिक्री मूल्य के बीच के अन्तर की भरपाई सरकार द्वारा निर्माताओं को की जाती है। उर्वरक निर्माता कम्पनियों को क्षतिपूर्ति करने की यह वर्तमान पद्धति फर्टिलाइजर सबसिडी कहलाती है। इस पद्धति का अब आलोचनात्मक परीक्षण किया जा रहा है, ताकि इसकी जगह अन्य तरीकों, जैसे कि किसानों को सीधे नकद सबसिडी देने का उपयोग किया जा सके।

रासायनिक उर्वरकों के उपयोग के तरीके[3]

अधिकांश प्राकृतिक उर्वरकों को मिट्टी या पौधों की जड़ों में सीधे ही प्रयोग किया जाता है, क्योंकि ये मिट्टी को सुधारने वाले भी होते हैं। परन्तु, रासायनिक उर्वरकों को फसल के प्रकार, पानी की उपलब्धता, सोखने का तरीका आदि पर निर्भर करते हुए, कई तरीकों से उपयोग किया जा सकता है। उनके प्रयोग करने के तरीकों में से कुछ का उल्लेख नीचे किया गया है :

(क) ठोस रासायनिक उर्वरक

- आधार में (बेसल) उपयोग : इसमें बीज बोने के पहले उर्वरक को फसल के पूरे क्षेत्र में फैलाकर सीधे ही मिट्टी में मिलाया जाता है। फसल के विकसित होने के दौरान भी समय–समय पर फिर मिलाया जाता है। इस तरीके में पोषक तत्व बहुत ज्यादा मात्रा में बेकार चले जाते हैं, क्योंकि ठोस उर्वरक के दाने आसानी से जड़ों से दूर खिसक सकते हैं। इसकी भरपाई करने के लिए अक्सर आवश्यकता से ज्यादा मात्रा में उर्वरकों का उपयोग किया जाता है। यूरिया जैसे अत्यधिक घुलनशील उर्वरक घुलकर भी बेकार बह जा सकते हैं। यूरिया के जलीय विश्लेषण से बनने वाली अमोनिया भी वाष्प रूप में वातावरण में निकल जाती है।
- जड़ों के नजदीक सतह पर या मिट्टी में थोड़ी गहराई पर उपयोग : बेसल उपयोग की तुलना में यह बेहतर पद्धति है। परन्तु, इसमें मेहनत, मजदूरी अधिक लगती है। इस विधि के लिए सीड–कम–फर्टिलाइजर ड्रिल (मिट्टी में छेद करके बीज एवं उर्वरक डालने वाला यंत्र) का प्रयोग करना लाभकारी होता है।
- पौधों की कतारों के पास पट्टियों में उर्वरक को रखना।

(ख) द्रव उर्वरक, पानी में घुलनशील उर्वरक और सूक्ष्म पोषक तत्वों के घोल

- पत्तियों पर (फोलीयर) उपयोग : पानी में उर्वरक के पतले घोल का पौधों पर छिड़काव किया जाता है। इसमें पोषक तत्व सीधे ही पत्तियों द्वारा सोख लिए जाते हैं।
- सिंचाई के पानी के माध्यम से : पानी में घुलनशील उर्वरकों को सिंचाई की नालियों के द्वारा पौधों को प्रदान किया जाता है।

रासायनिक उर्वरकों के उपयोग से होने वाले लाभ और हानियाँ

भारत जैसे 1.3 अरब लोगों की आबादी वाले देश में पर्याप्त मात्राओं में खाद्य फसलों का उत्पादन एक बड़ी चुनौती है। 1960 के दशक में एक अकाल–पीड़ित देश होने से हालात बदलकर, वैज्ञानिकों, किसानों तथा सरकार के मिले–जुले प्रयासों के द्वारा, हम आज खाद्यान्नों में आत्म–निर्भर होने के करीब आ गए हैं। बहुत हद तक यह उच्च पैदावार देने वाली किस्मों के बीजों, सिंचाई, रासायनिक उर्वरकों तथा अन्य कृषि रसायनों, जैसे कि विभिन्न प्रकार के कीटनाशकों आदि के उपयोग के कारण सम्भव हो पाया है। इसलिए हमारी वर्तमान खाद्य सुरक्षा को हासिल करने में रासायनिक उर्वरकों की भूमिका को कम करके नहीं आँका जा सकता।

परन्तु, विवेकपूर्वक विचार किए बिना रासायनिक उर्वरकों के अंधाधुँध इस्तेमाल से मिट्टी के तंत्र पर और साथ ही व्यापक पर्यावरण पर अनेक नकारात्मक प्रभाव पड़ सकते हैं। हर फसल

के लिए सभी पोषक तत्वों और उनके साथ ही आवश्यक सूक्ष्म पोषक तत्वों तथा मिट्टी को सुधारने वाली सामग्रियों की सन्तुलित आपूर्ति (यह एक फसल से दूसरी फसल के लिए बदलती है) ही लम्बे समय तक चल सकने वाली खेती की अनुकूल स्थितियों को सुनिश्चित कर सकती है। उन्नत पैदावार देने वाले बीजों के साथ यदि पोषक तत्वों के इस्तेमाल में कोई भी असन्तुलन जुड़ जाता है, तो वह मिट्टी को प्राकृतिक रूप से उपलब्ध होने वाले खनिजों से खाली करता जाता है और समय बीतने के साथ वह मिट्टी बंजर बन जाती है।

रासायनिक उर्वरकों की बहुत अधिक खुराकें देने से होने वाली एक अन्य हानि पर्यावरण पर पड़ने वाला उनका दुष्प्रभाव है। उर्वरकों की तरह उपयोग किए जाने वाले पानी में घुलनशील



चित्र 3 : पानी में पोषक तत्वों के कारण होने वाला यूट्रोफिकेशन

रसायन मिट्टी में से बहकर निकल जाते हैं और भूमिगत तथा सतह के दोनों प्रकार के पानी को प्रदूषित कर देते हैं। पानी में फॉस्फेट और नाइट्रेट की अधिक मात्राओं के परिणामस्वरूप यूट्रोफिकेशन (पानी में वनस्पतियों का घने रूप में उगना, सड़ना और फिर पानी की आक्सीजन का क्षय करना जिसके फलस्वरूप जलीय जीव मर जाते हैं) की प्रक्रिया घटित होती है। जब अतिरेक में प्रदान किए गए पोषक तत्व तालाबों और झीलों में पहुँचते हैं, तो शैवाल या काई (एल्गी) तथा ऐसे अन्य जलीय पौधे उनका उपयोग पानी की सतह पर उगने और बढ़ने के लिए करते हैं। वनस्पति के उगने में होने वाली यह वृद्धि पानी में घुली हुई पूरी आक्सीजन का उपयोग कर लेती है। इसके अलावा यह पानी को वातावरण की आक्सीजन मिलने में एक भौतिक अवरोध की तरह काम करती है। आक्सीजन के अभाव में पानी में मौजूद समस्त जीव–जन्तु, जो पानी की सतह के नीचे रहते हैं (इनमें मछलियाँ तथा अन्य जीवरूप शामिल हैं), मरने लगते हैं।परन्तु, चूँकि प्राकृतिक/जैविक उर्वरक अकेले ही देश के एक अरब से भी अधिक लोगों के लिए खाद्य फसलों को आवश्यक मात्रा में नहीं उपजा सकते, इसलिए मिट्टी को सुधारने वाली प्राकृतिक सामग्री के इस्तेमाल के साथ, रासायनिक उर्वरकों का उचित और विवेकपूर्ण उपयोग लम्बे समय के लिए खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित कर सकता है।

निष्कर्ष

बीजों के बाद, आज विशेष रूप से हमारी खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने की दृष्टि से आवश्यक फसलों की उच्च पैदावार को हासिल करने के लिए, कृषि क्षेत्र में लगने वाली सबसे महत्त्वपूर्ण सामग्रियों में से कुछ रासायनिक उर्वरक ही हैं। किसानों के द्वारा उनकी फसलों के लिए पोषक तत्वों की विशेष जरूरतों पर निर्भर करते हुए विविध प्रकार के उर्वरक इस्तेमाल किए जाते हैं। देश के भीतर अनेक छोटे और बड़े निर्माताओं द्वारा रासायनिक उर्वरकों का उत्पादन किया जाता है। इन उर्वरकों की कुछ मात्राओं का हर साल

आयात भी किया जाता है। किसानों को उनके द्वारा वहन की जा सकने वाली कीमतों पर उर्वरकों की उपलब्धता को सुनिश्चित करने के लिए इस उद्योग पर भारत सरकार द्वारा नजदीकी निगरानी रखी जाती है और उसे नियंत्रित किया जाता है। अन्य प्राकृतिक उर्वरकों और मिट्टी सुधारने वाले पदार्थों के साथ, रासायनिक उर्वरकों का उचित और विवेकपूर्ण उपयोग ही लम्बे समय तक चलने वाले कृषि उत्पादन को और साथ ही निरन्तर सबके लिए पर्याप्त भोजन की उपलब्धता को सुनिश्चित कर सकता है।

Reference

1. Government of India, Department of Fertilisers. Ministry of Chemicals and Fertilisers. URL: http://fert.nic.in
2. The Fertiliser (Control) Order 1985. Ministry of Agriculture and Rural Development (Department of Agriculture and Cooperation). URL: http://agricoop.nic.in/seed/Fertiliser241209.pdf
3. Methods of Fertiliser Application. TNAU Agritech Portal. URL: http://agritech.tnau.ac.in/agriculture/agri_nutrientmgt_methodsoffertilizerappln.html



जयलक्ष्मी अय्यर *आई.आई.टी., बॉम्बे से रसायनशास्त्र में पोस्टग्रेजुएट हैं। उन्होंने यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो से पीएच.डी. की उपाधि हासिल की है। उर्वरक कम्पनी गुजरात नर्मदा वैली फर्टिलाइजर्स एण्ड केमिकल्स लिमिटेड से 1986 में जुड़ने से पहले उन्होंने एक वैज्ञानिक के रूप में आई.आई.टी., बॉम्बे तथा इण्डियन इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस, बेंगलुरु में काम किया। अपनी कम्पनी के आर एण्ड डी सेण्टर को स्थापित करने में उनका प्रमुख योगदान रहा है और उन्होंने कई वर्षों तक उसके आर एण्ड डी सेण्टर तथा क्वालिटी कंट्रोल विभाग के प्रमुख के रूप में कार्य किया है।*

वे अमेरिकन केमिकल सोसायटी की सदस्य हैं और उनको राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय जर्नलों में कई शोध प्रकाशित करने का और उनके कई पेटेंट हासिल करने का श्रेय जाता है। विज्ञान को आम लोगों तक पहुँचाने में गहन रुचि होने के कारण वे नर्मदानगर कम्युनिटी साइंस सेण्टर की गतिविधियों में शामिल रही हैं। उनसे jayayyer@yahoo.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। ***अनुवाद :*** *भरत त्रिपाठी*

रंगों का संसार

एन.एस.सुन्दरेसन

रंग को स्कूलों में टुकड़ों के रूप में रसायनशास्त्र, जीवविज्ञान और भौतिकशास्त्र में समझाया जाता है। इस लेख में रंग को एक अलग अन्तर्विषयी इकाई की तरह माध्यमिक स्कूल में पढ़ाए जाने की वकालत की गई है।

रंग एक सार्वभौमिक विषय है। बच्चे से लेकर वयस्क तक हर व्यक्ति की रंग के बारे में कुछ समझ तो होती ही है। लगभग हर भाषा में लाल, हरा, नीला, पीला तथा उनके बीच के अनेक रंगों के लिए शब्द होते हैं। यह इतना महत्त्वपूर्ण विषय है कि रसायनशास्त्र, जीवविज्ञान और भौतिकशास्त्र जैसे भिन्न क्षेत्रों के वैज्ञानिकों ने उसके विविध पहलुओं और उपयोगों का अध्ययन किया है। रंग तो चित्रकारों और कवियों के भी गहन अध्ययन का विषय रहा है। चित्रकारों ने अपने चित्रों में विभिन्न रंगों की रचना करने की तकनीक का अध्ययन किया है और कवियों ने हमारे लिए रंग के शब्द चित्र बनाए हैं। रंग हमारे दैनिक जीवन में कितनी महत्त्वपूर्ण भूमिकाएँ निभाता है इसके अनेक उदाहरण हैं : लाल रंग का उपयोग यातायात की संकेत बत्तियों में और खतरे के निशानों में होता है, बड़ी दुकानों में उनके सामानों के लिए रंगों के संकेत होते हैं, स्कूलों की वर्दियाँ रंगीन होती हैं, खेलों में टीमों को एक–दूसरे से अलग दिखने के लिए उनकी पोशाकों के रंग अलग–अलग होते हैं और राष्ट्रीय झंडों में भी रंग होते हैं। त्योहारों के दौरान हम अपने घरों के आंगनों को सजाने के लिए रंगोली के रंगों का उपयोग करते हैं। भारतीय त्योहार होली में तो रंगों का ही उत्सव मनाया जाता है।



परन्तु, स्कूली विज्ञान के पाठ्यक्रम में रंग की अवधारणा को विभिन्न स्तरों पर टुकड़ों–टुकड़ों में लाया जाता है। हर साल या तो भौतिकशास्त्र में या रसायनशास्त्र में या फिर जीवविज्ञान में उसका उल्लेख होता है, लेकिन यह कभी भी एक ही समय पर नहीं होता। इसलिए विद्यार्थियों को इस विषय की केवल टुकड़ों में बँटी हुई समझ ही प्राप्त होती है। वे उसके कुछ पहलुओं का सम्बन्ध केवल भौतिकशास्त्र से जोड़ते हैं और कुछ अन्य का रसायनशास्त्र से, बगैर यह समझे कि वह एक ही विषय होता है।

इस लेख का उद्देश्य रंग की अवधारणा को विज्ञान के पाठ्यक्रम में एक अन्तर्विषयी प्रसंग की तरह

शामिल करने की सम्भावना की ओर शिक्षक साथियों का और संयोग से इसे पढ़ने वाले किसी पाठ्यक्रम निर्माता का ध्यान आकर्षित करना है। एक प्रसंग की तरह इसका प्रवेश प्रकाश, प्रकाश–संश्लेषण, रासायनिक अभिक्रियाएँ आदि प्रसंगों के पहले करवाया जा सकता है। इसमें यह सुझाव भी दिया गया है कि इस प्रसंग को एक विज्ञान शिक्षक के द्वारा ही पढ़ाया जाए। इस लेख में ऐसी इकाई की विषय सामग्री के लिए एक रूपरेखा भी दी गई है।

इस पृष्ठभूमि के साथ हम पहले यह देखें कि वर्तमान स्कूली पाठ्यक्रम में रंग का परिचय किस तरह करवाया जाता है।

स्कूल के विज्ञान पाठ्यक्रम में रंग

रसायनशास्त्र में हम रंग का परिचय सबसे पहले पदार्थों के भौतिक गुणों के माध्यम से करवाते हैं। उदाहरण के लिए, गंधक एक पीले रंग का ठोस पदार्थ होता है और कॉपर सल्फेट नीला होता है। हम यह भी दिखाते हैं कि कुछ घोलों को मिलाने पर वे अवक्षेप बनाते हैं जो रंगीन होता है और उसका इस्तेमाल खास पदार्थों को पहचानने के लिए किया जा सकता है।

जीवविज्ञान में प्रकाश में रंग के होने और उसका अवशोषण होने का उल्लेख किए बिना ही प्रकाश–संश्लेषण की चर्चा काफी जल्दी कर दी जाती है।

भौतिकशास्त्र में प्रकाश और उसका संप्रेषण, परावर्तन आदि का विषय प्रवेश रंग की अवधारणाओं (जो शायद कक्षा 12 तक प्रकट नहीं होतीं) के बहुत पहले हो जाता है। हाँ, यह जरूर है कि प्रिज्म और रंग का विभाजन कक्षा 9 में किसी जगह आ जाता है, लेकिन उसमें भी रंगों पर ध्यान केन्द्रित नहीं होता।

इस प्रकार एक ऐसे प्रसंग, जो इन तीनों विषयों में शामिल रहता है, पर कभी भी एक साथ चर्चा नहीं की जाती। इस प्रसंग के लिए रसायनशास्त्र, जीवविज्ञान और भौतिकशास्त्र की सम्बन्धित जानकारी का एकीकरण करते हुए, रंग की एक इकट्ठी इकाई को प्रस्तुत करना महत्त्वपूर्ण हो सकता है। इसके साथ ही विद्यार्थियों में रंग की सार्वभौमिक प्रकृति की बेहतर समझ बने, इसके लिए यह भी सुझाव दिया जा सकता है कि शिक्षक को सभी क्षेत्रों से बड़ी संख्या में उदाहरणों को लेना चाहिए। नीचे कुछ उदाहरण दिए गए हैं, लेकिन शिक्षक निश्चित ही इस सूची का विस्तार कर सकते हैं।

1. रंजक (डाई), स्याहियाँ और अन्य रासायनिक उदाहरण : प्राकृतिक और संश्लेषित रंजकों के उदाहरणों का उल्लेख किया जा सकता है। शिक्षक कक्षा में एक प्रयोग दिखा सकता है जिसमें सुपरिचित डायाजोनियम लवण और बीटा नैफ्थाल के संयोजन से एक एजो रंजक पैदा होता है (वैसे यह 12वीं कक्षा में आता है)। काली स्याही, जो कि कई रंगीन रंजकों का मिश्रण होती है, को भी लिया जा सकता है; फिल्टर पेपर (पेपर क्रोमेटोग्राफी) का उपयोग करते हुए इस स्याही को विखण्डित करके उसके अलग–अलग घटक रंगों को दिखाया जा सकता है।

प्राकृतिक रूप से रंगी हुई कपास : कर्नाटक के धारवाड़ में पैदा होने वाली रंगीन कपास का उल्लेख किया जा सकता है। इसके बारे में और जानकारी मूर्ति के एक लेख से प्राप्त की जा सकती है (नैवर से डाई : द स्टोरी ऑफ कलर्ड कॉटन, रैजोनेंस, दिसम्बर 2001)।

हम 7वीं कक्षा में अम्लों तथा क्षारों का परिचय करवाते हैं, लेकिन शायद सूचकों (इंडीकेटर्स) का परिचय नहीं करवाते। चूँकि, pH मान पर निर्भर करते हुए सूचक नाटकीय ढंग से रंग परिवर्तन करते हैं, इसलिए उनके नामों और वे किस प्रकार का रंग परिवर्तन करते हैं, यह जानकारी देते हुए उनका अधिक विस्तार से उल्लेख किया जा सकता है। घर पर बनाए गए सूचकों जैसे कि हल्दी और मूली की पत्ती के रस का भी उल्लेख और प्रदर्शन किया जाना चाहिए। आमतौर पर विद्यार्थियों को प्राकृतिक और संश्लेषित रंजकों से 12वीं कक्षा में पहुँचने तक परिचित नहीं कराया जाता।

2. फोटो–क्रोमिज्म : एक अन्य रोचक उदाहरण फोटो–क्रोमिज्म है, जिसमें उत्क्रमणीय (रिवर्सिबिल) रासायनिक अभिक्रियाओं के कारण रंगों में परिवर्तन (या काले से पारदर्शी में परिवर्तन) होता है। ऐसा कर सकने वाले पदार्थ अक्सर चश्मों के लैंसों में इस्तेमाल किए जाते हैं। हालाँकि हो सकता है कि विद्यार्थियों को उन पदार्थों की रासायनिक प्रकृति जानने की जरूरत न हो, पर उनके नामों का उल्लेख किया जा सकता है, उदाहरण के लिए, ऐजोबैंजीन, स्पाइरोपीरान्स इत्यादि। इनमें से कुछ पदार्थों का इस्तेमाल आधुनिक 'स्मार्ट विंडोज' में किया जाता है जो तब अपने–आप हरी (या काली) हो जाती हैं, जब उन पर पड़ने वाली सूर्य की रोशनी की तीव्रता एक खास स्तर तक पहुँच जाती है। (हम इलेक्ट्रोमैगनेटिज्म – विद्युतीयचुम्बकत्व को बाद की किसी कक्षा के लिए छोड़ सकते हैं।)



3. फ्लूरोसैंस (प्रतिदीप्ति) : यह एक सुपरिचित घटना है। इसे किसी प्रतिदीप्त होने वाले पदार्थ के इलेक्ट्रानों द्वारा प्रकाश की ऊर्जा का अवशोषण करने और अवशोषित ऊर्जा को तत्काल फिर से प्रकाश के रूप में छोड़ने की तरह समझाया जा सकता है। इसके प्रदर्शन के लिए आसानी से उपलब्ध फ्लूरोसीन के घोल का उपयोग किया जा सकता है। किसी निर्माण स्थल पर काम करने वाले और साथ ही यातायात पुलिस के सिपाही कई बार फ्लूरोसैंट पेंट वाली ऊपरी पोशाक पहने रहते हैं। इसका जिक्र किया जा सकता है।

4. लेजर रोशनियों में रंग : बहुत से बच्चे (टीवी के कार्यक्रमों को देखने की वजह से या अन्य किसी कारण से) लेजर शब्द से परिचित होते हैं। यह एक अच्छा विचार हो सकता है कि इसकी बुनियादी तकनीक को इलेक्ट्रानों के द्वारा ऊर्जा को अवशोषित करने और फिर प्रकाश के रूप में छोड़ने की तरह से समझाया जाए। पर, फ्लूरोसैंस से इसका भिन्न पहलू है कि छोड़ी जाने वाली ऊर्जा को एक भौतिक उपकरण द्वारा इस तरह एकजुट किया जाता है कि सभी फोटानों (प्रकाश कणों) का फेस (प्रावस्था) समान होता है। इसके परिणामस्वरूप उत्सर्जित प्रकाश बहुत तीव्र होता है। लेजर किरणों में रंग का समावेश ऐसे उपयुक्त पदार्थों का इस्तेमाल करके हासिल किया जाता है जिनकी इलेक्ट्रानिक ऊर्जा आवश्यक स्तरों की होती है, उदाहरण के लिए, हीलियम–नीऑन संयोजन लाल रंग उत्पन्न करता है।

5. पशुओं में कैमोफ्लाज (छद्मावरण – छिपाने वाला भेष) और प्रदर्शन की तरह रंग : यदि जीवविज्ञान के विषयों से इसके उदाहरण देना हों तो हम बता सकते हैं कि किस तरह पक्षियों में उनके सहवासी साथियों को आकर्षित करने के लिए रंगबिरंगे पंख होते हैं; किस तरह कुछ परभक्षी रंगीन ऊपरी त्वचा का उपयोग करके अपने आसपास के परिवेश में एकरूप हो जाते हैं, ताकि वे कारगर ढंग से अपना शिकार पकड़ सकें। इसी प्रकार शिकार बनने वाले जीवों के पास भी ऐसे रंग हो सकते हैं, जो उन्हें उनके परिवेश में छिपा देते हैं ताकि वे परभक्षियों से बच सकें। निश्चित ही पत्तियों के हरे रंग का और प्रकाश–संश्लेषण में उसके उपयोग का कक्षा में पहले ही कई बार जिक्र किया ही गया होगा।

रंग पर एक संयुक्त इकाई के लिए प्रस्तावित विषयवस्तु

जैसा कि हम ऊपर देख चुके हैं कि सभी स्तरों पर रंग के बारे में बताने के लिए बहुत कुछ होता है। परन्तु माध्यमिक स्कूल के लिए हमें रंग के विभिन्न पहलुओं में से विवेकपूर्ण चुनाव करने की जरूरत है। साथ ही हमें उन पहलुओं को, फार्मूलों और समीकरणों के उबाऊपन के बगैर, रोचक तरीके से प्रस्तुत करना होगा। इसके अलावा कठिन अवधारणाओं का उचित मात्रा में इस तरह सरलीकरण करना कि तथ्यों को सही ढंग से समझाया जाए, यह भी जरूरी है।

रंग पर एक इकाई की विषयवस्तु की रूपरेखा बनाने का एक प्रयास नीचे प्रस्तुत है :

रंग

1. हमारे आसपास मौजूद रंग (प्राकृतिक तथा संश्लेषित), रोजमर्रा के जीवन से लिए गए उदाहरण।

2. ऊर्जा के एक रूप की तरह प्रकाश (इन्फ्रारैड हीटर्स, लैंसों के द्वारा सूर्य के प्रकाश का सघनीकरण आदि) का उल्लेख करें कि सफेद प्रकाश विभिन्न रंगों से मिलकर बना होता है।

3. (i) जब वस्तुओं पर प्रकाश पड़ता है तब क्या होता है (पारदर्शी तथा अपारदर्शी वस्तुएँ),घोलों में से प्रकाश का संप्रेषण – रंगीन घोलों का परिचय दें।

   (ii) रिफ्रेक्शन (अपवर्तन) – पानी का उपयोग करते हुए (प्रकाश का मुड़ना), एक संक्षिप्त और गुणात्मक व्याख्या।

   (iii) डिस्पर्शन (प्रकीर्णन –बिखरना) – प्रिज्म के साथ प्रयोग – इसका अपवर्तन से सम्बन्ध।



   (iv) अपारदर्शी वस्तुओं से प्रकाश का परावर्तन – वस्तुओं में रंग होने का कारण, सम्पूरक रंगों का विचार – समझाएँ कि वस्तुएँ अंधेरे में कोई रंग क्यों नहीं दर्शातीं।

4. रंग तथा रसायनशास्त्र : रसायनशास्त्र में रंगीन पदार्थ (तत्व और यौगिक दोनों) – उदाहरण के लिए जितने अधिक पदार्थों का प्रदर्शन करना सम्भव हो वह करें, रंगीन पदार्थों का उत्पादन – (क) अकार्बनिक : रंगीन अवक्षेप जैसे कि प्रशियन ब्लू (गहरा नीला) – कॉपर–अमोनिया संयोजन (कॉपर सल्फेट तथा अमोनिया), निकिल डाइमिथाइलग्लाईऑक्सिम्स (गहरा लाल), बेरियम क्रोमेट आदि दिखाए जा सकते हैं। (ख) कार्बनिक : एनीलीन तथा बीटा–नैप्थाल के द्वारा साधारण एजो रंजक तैयार किया जा सकता है और दिखाया जा सकता है। गुणात्मक रूप से सोडियम लैम्पों से पीले–नारंगी प्रकाश के उत्सर्जन की प्रक्रिया को समझाएँ। यदि विद्यार्थी परमाणु की संरचना की बुनियादी अवधारणाओं से परिचित हैं, तो इलेक्ट्रानों के द्वारा ऊर्जा के विशिष्ट अवशोषण और फिर पुनर्उत्सर्जन की सरल ढंग से चर्चा की जा सकती है।

5. हम कैसे देखते हैं : रैटिना (आँख के पर्दे), रॉड्स तथा कोन्स में मौजूद फोटोरिसैप्टर्स (प्रकाशग्राहियों) के द्वारा प्रकाश का अवशोषण। विभिन्न रंगों के प्रति कोन्स की संवेदनशीलता।

6. हरी पत्तियों के द्वारा लाल प्रकाश का अवशोषण। समझाएँ कि किस तरह उत्पादित ऊर्जा का उपयोग स्टार्च के संश्लेषण के लिए किया जाता है। प्रकाश संश्लेषण की केवल सरल व्याख्या करें।



7. कैमाफ्लाज (छद्मावरण) : पशुओं तथा कीटों की त्वचा पर रंग।

टिप्पणियाँ :

1. रंगों के नामों की उत्पत्ति : लाल, नीला, हरा, पीला आदि रंगों के अँग्रेजी नामों की उत्पत्ति अँग्रेजी (जैसी कि वह आज जानी जाती है) से भी प्राचीन भाषाओं से हुई है। मुख्य रूप से वे इण्डो–यूरोपियन, नोर्स आदि कुछ भाषाओं से निकले हैं। इसके बारे में एक अच्छा लेख इस वैबसाइट पर उपलब्ध है: http://www.gizmodo.in/datasearchresult.cms?query=how+colors+got+their+names&sortorder=score

2. आसमान नीला या लाल क्यों होता है? निश्चित ही हम यह जानते हैं कि प्रकाश का छितराना (स्कैटरिंग) वह घटना होती है जो इसका कारण है। परन्तु उसे शब्दों में

मानव रक्त की दस बातें जिनके बारे में आप नहीं जानते

श्रीकान्त के. एस.

1 आपके शरीर का लगभग 7% भार आपके खून का होता है!

एक औसत महिला के शरीर में लगभग 4-5 लीटर खून होता है, जबकि एक औसत पुरुष के शरीर में 5-6 लीटर। दिलचस्प बात यह है कि जो लोग निचले इलाकों में रहते हैं उनकी तुलना में, बहुत ऊँचाई पर (पहाड़ी इलाकों में) रहने वाले लोगों के शरीर में 2 लीटर तक अतिरिक्त खून हो सकता है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि बहुत ऊँचाई पर हवा में आक्सीजन कम होती है। इसलिए वहाँ रहने वाले लोगों के फेफड़ों को आवश्यक मात्रा में आक्सीजन पहुँचाने के लिए अतिरिक्त खून की जरूरत होती है।

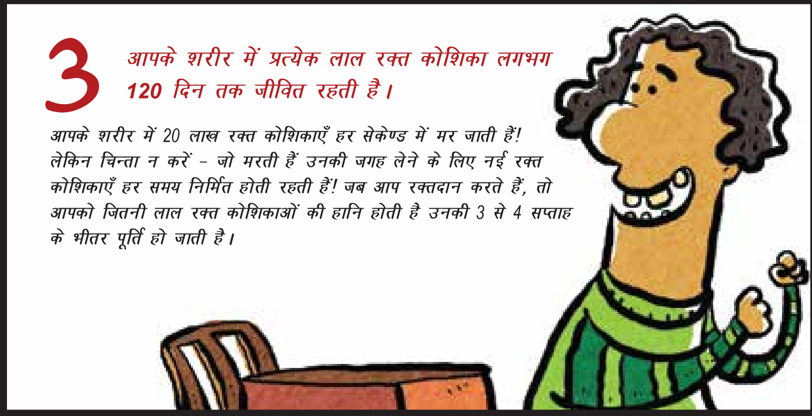


2 दो से तीन बूँद खून में लगभग एक अरब लाल रक्त कोशिकाएँ होती हैं!



3 आपके शरीर में प्रत्येक लाल रक्त कोशिका लगभग 120 दिन तक जीवित रहती है।

आपके शरीर में 20 लाख रक्त कोशिकाएँ हर सेकेण्ड में मर जाती हैं! लेकिन चिन्ता न करें - जो मरती हैं उनकी जगह लेने के लिए नई रक्त कोशिकाएँ हर समय निर्मित होती रहती हैं! जब आप रक्तदान करते हैं, तो आपको जितनी लाल रक्त कोशिकाओं की हानि होती है उनकी 3 से 4 सप्ताह के भीतर पूर्ति हो जाती है।



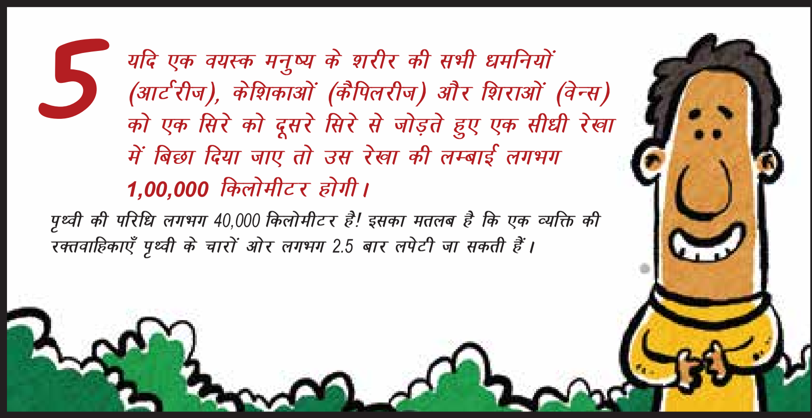
4 मनुष्यों में चार मुख्य प्रकार के ब्लड ग्रुप पाए जाते हैं (ए, बी, एबी तथा ओ)

कुत्तों के भी चार ब्लड ग्रुप होते हैं, जबकि बिल्लियों के ब्लड ग्रुप कम से कम तीन प्रकार के होते हैं। लेकिन इन सबमें गायें सबसे आगे हैं जिनके 800 से भी अधिक प्रकार के ब्लड ग्रुप होते हैं।



5 यदि एक वयस्क मनुष्य के शरीर की सभी धमनियों (आर्टरीज), केशिकाओं (कैपिलरीज) और शिराओं (वेन्स) को एक सिरे को दूसरे सिरे से जोड़ते हुए एक सीधी रेखा में बिछा दिया जाए तो उस रेखा की लम्बाई लगभग 1,00,000 किलोमीटर होगी।

पृथ्वी की परिधि लगभग 40,000 किलोमीटर है! इसका मतलब है कि एक व्यक्ति की रक्तवाहिकाएँ पृथ्वी के चारों ओर लगभग 2.5 बार लपेटी जा सकती हैं।



6 एक रक्त कोशिका एक मिनट से भी कम समय में आपके शरीर का पूरा चक्कर लगा सकती है। यह गति वाकई तेज है!



7 शरीर के आकार से हृदय के धड़कने की दर का उत्क्रमणीय (विपरीत) सम्बन्ध होता है - अर्थात जितना ज्यादा बड़े शरीर का जीव होता है, उसके दिल के धड़कने की दर उतनी ही कम होती है।

एक वयस्क व्यक्ति के हृदय के धड़कने की सामान्य औसत दर लगभग 70-75 धड़कनें प्रति मिनट होती है। संसार में सबसे बड़े जानवर, ब्लू व्हेल (जिसके हृदय का आकार एक छोटी कार के बराबर होता है) के हृदय के धड़कने की दर केवल 5 बार प्रति मिनट होती है। सबसे छोटे स्तनपायी में से एक, श्रू (छछूंदर) के दिल के धड़कने की दर लगभग 1000 बार प्रति मिनट होती है!



8 आपके दिल की धड़कन (जिसे चिकित्सक स्टैथोस्कोप का उपयोग करते हुए सुनते हैं) वास्तव में हृदय के वाल्वों (जो हृदय के अलग-अलग कक्षों के बीच में स्थित होते हैं) के खुलने और बन्द होने की आवाज होती है, जब वे रक्त को एक कक्ष से दूसरे कक्ष में भेजते हैं।

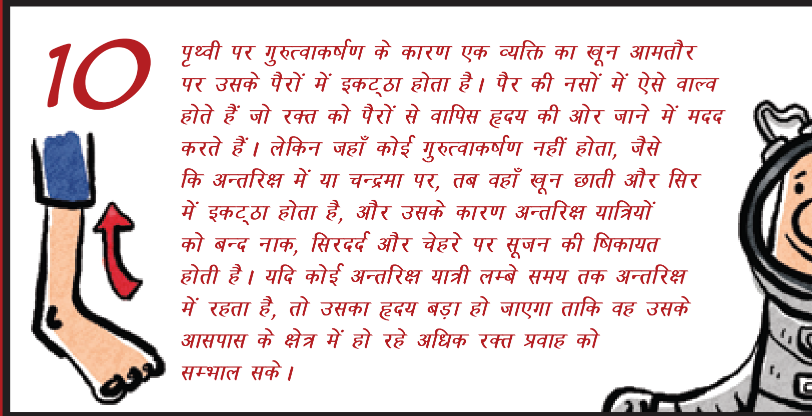


9 हम सभी जानते हैं कि रक्त आक्सीजन को फेफड़ों से ऊतकों तक ले जाता है और ऊतकों से कार्बन डाईआक्साइड को फेफड़ों तक लाता है। साथ ही वह पोषक तत्वों तथा हार्मोनों को भी शरीर के विभिन्न भागों तक पहुँचाता है और उन हिस्सों में उपजे अपशिष्ट पदार्थों को बाहर निकाले जाने के लिए किडनी तथा लिवर तक पहुँचाता है।

इन सबके अलावा रक्त एक और महत्वपूर्ण चीज का वाहक होता है - ऊष्मा। आपके शरीर के बिलकुल सिरे वाले हिस्से (जैसे कि हाथों और पैरों की उँगलियाँ) गरम बनी रहती हैं, क्योंकि शरीर के केन्द्र में (उदाहरण के लिए मांसपेशियों में) उत्पन्न की गई ऊष्मा उन उँगलियों तक खून के द्वारा ले जाई जाती है। दूसरी ओर हाथ, पैर, तथा शरीर के अन्दर लिवर, हृदय, मांसपेशियाँ और मस्तिष्क जैसे अंग जरूरत से ज्यादा गरम नहीं हो पाते क्योंकि उनसे ऊष्मा आपके खून द्वारा ही दूर ले जाई जाती है। इस प्रकार खून हीटर तथा कूलर दोनों का काम कर सकता है।



10 पृथ्वी पर गुरुत्वाकर्षण के कारण एक व्यक्ति का खून आमतौर पर उसके पैरों में इकट्ठा होता है। पैर की नसों में ऐसे वाल्व होते हैं जो रक्त को पैरों से वापिस हृदय की ओर जाने में मदद करते हैं। लेकिन जहाँ कोई गुरुत्वाकर्षण नहीं होता, जैसे कि अन्तरिक्ष में या चन्द्रमा पर, तब वहाँ खून छाती और सिर में इकट्ठा होता है, और उसके कारण अन्तरिक्ष यात्रियों को बन्द नाक, सिरदर्द और चेहरे पर सूजन की शिकायत होती है। यदि कोई अन्तरिक्ष यात्री लम्बे समय तक अन्तरिक्ष में रहता है, तो उसका हृदय बड़ा हो जाएगा ताकि वह उसके आसपास के क्षेत्र में हो रहे अधिक रक्त प्रवाह को सम्भाल सके।



श्रीकान्त के. एस. एक स्वतंत्र शोध परामर्शदाता हैं। उन्होंने इम्यूनोलोजी में डाक्टरेट की उपाधि हासिल की है। उनकी रुचि का प्राथमिक क्षेत्र होस्ट–पैथोजन्स (मेजबान और रोगाणुओं) के बीच की अन्तर्क्रियाओं का अध्ययन है। उनसे sriikis@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** सत्येन्द्र त्रिपाठी

i wonder...

Azim Premji University

गुणात्मक रूप से समझाना कठिन हो सकता है। इसलिए मैंने उसे इस इकाई में शामिल नहीं किया है। स्कैटरिंग का क्या मतलब है इसको समझाते हुए उसकी आंशिक व्याख्या करने का और यह बताने का कि सूर्य के प्रकाश में से नीला प्रकाश अन्य रंगों के प्रकाश की तुलना में अधिक छितराया जाता है, प्रयास किया जा सकता है।

निष्कर्ष

अन्त में यह कहा जा सकता है (हालाँकि शायद थोड़ी आशावादिता के साथ) कि इस एक इकाई का रसायनशास्त्र, जीवविज्ञान और भौतिकशास्त्र के बीच एक सेतु की तरह प्रभावशाली ढंग से उपयोग किया जा सकता है। साथ ही जब शिक्षक अन्य विषय प्रसंगों की विस्तार से चर्चा कर रहा हो, तब इस इकाई से उसका कार्य ज्यादा आसान बनाया जा सकता है।

एन.एस.सुन्दरेसन *रसायनशास्त्र के एक अवकाश प्राप्त शिक्षक हैं। उन्होंने स्कूल तथा कालेज, दोनों स्तरों पर पढ़ाया है। उन्होंने बॉम्बे यूनिवर्सिटी से अपनी पीएच.डी. की उपाधि हासिल की थी। उनसे kaone52@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।*
अनुवाद : *सत्येन्द्र त्रिपाठी*

विज्ञान की प्रकृति

अरविन्द कुमार

विज्ञान की प्रकृति को समझना अब व्यापक रूप से विज्ञान की शिक्षा से प्राप्त हुए ज्ञान की एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि की तरह देखा जाता है। इस लेख में हम स्कूली विज्ञान शिक्षा के पाठ्यक्रम में, 'विज्ञान की प्रकृति' को शामिल करने के तर्काधार, उसके विकसित हो रहे दृष्टिकोणों और इस विषय को सीखना सम्भव बनाने के लिए हमारे द्वारा अपनाए जा सकने वाले तरीकों की संक्षिप्त चर्चा करेंगे।

विज्ञान क्या है? यह आम चलन है कि विज्ञान की पाठ्यपुस्तकों में विषय प्रवेश वाले अध्याय में इस सवाल से शुरुआत की जाए, उस पर कुछ अनुच्छेदों में चर्चा की जाए और फिर जल्दी ही जिसे विज्ञान की मुख्य सामग्री माना जाता है उस पर आ जाएँ : अर्थात उसके प्रयोगसिद्ध तथ्य, नियम, सिद्धान्त आदि। आमतौर पर ऐसी किताबें कहेंगी कि विज्ञान में निहित प्रमुख बातें हैं : प्रकृति का पक्षपात रहित अवलोकन करना, सावधानी पूर्वक प्रयोग करना और उनसे तर्कसम्मत निष्कर्ष निकालना। इस तरीके से हम प्रकृति के नियमों पर पहुँचते हैं। हम प्रयोगसिद्ध नियमों को समझने के लिए परिकल्पनाएँ सुझाते हैं, जिनके आधार पर आगे बढ़कर हम ज्ञात भौतिक क्रियाकलापों को समझाने के लिए विस्तृत सिद्धान्तों को निर्मित करते हैं। ये सिद्धान्त नए क्रियाकलापों का पूर्वानुमान लगाते हैं। यदि पूर्वानुमानों की पुष्टि हो जाती है तो वह सिद्धान्त स्थापित हो जाता है। विज्ञान किसी अधिकारी सत्ता के आगे नहीं झुकता, वह अवलोकनों तथा प्रयोगों से प्राप्त किया गया वस्तुपरक ज्ञान होता है।

विज्ञान की प्रकृति के इस विवरण में बहुत कुछ अर्थपूर्ण लगता है, हालाँकि जब हम इस पर आगे चर्चा करेंगे तो यह सरलीकृत प्रतीत होगा। लेकिन पहले हमें यह पूछना चाहिए कि आखिरकार विज्ञान की प्रकृति को पढ़ाना जरूरी ही क्यों है, जबकि इस विषय के उससे 'ज्यादा महत्त्वपूर्ण' हिस्सों को पूरा करने के लिए ही इतना कम समय मिलता है।

'विज्ञान की प्रकृति (नेचर ऑफ साइंस – एन.ओ.एस.)' को क्यों पढ़ाएँ?

इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए हमें रुककर इस पर विचार करना होगा कि स्कूल में विज्ञान पढ़ाने का प्रयोजन क्या है। माध्यमिक स्कूल तक भारतीय स्कूली पाठ्यक्रम के अन्तर्गत विज्ञान एक अनिवार्य विषय होता है। इस स्तर के बाद बहुसंख्यक विद्यार्थी स्कूल छोड़कर आगे की औपचारिक शिक्षा

बन्द कर देते हैं। शेष में से भी जो शिक्षा के आगे के स्तरों तक जाते हैं, उनमें से बहुत से विद्यार्थी वाणिज्य, कलाओं तथा अन्य विषयों की पढ़ाई करते हैं। अन्ततः कक्षा 10 समाप्त करने वाले विद्यार्थियों में से बहुत थोड़े ही विज्ञान के विषयों की पढ़ाई जारी रखने का विकल्प चुनते हैं। इस संख्या का और भी बहुत थोड़ा हिस्सा ही उन विद्यार्थियों का होता है जो आगे चलकर वैज्ञानिक तथा अन्य ऐसे पेशेवर व्यक्ति बनते हैं जिन्हें अपने कार्यक्षेत्र में विज्ञान और उसके उपयोगों की प्रत्यक्ष आवश्यकता होती है। इस प्रकार अधिकांश लोगों को उनके व्यवसायों में वैज्ञानिक विषयवस्तु के किसी ऐसे ज्ञान की आवश्यकता पड़ने की सम्भावना नहीं होती, जैसा कि स्कूल में सीखा या सिखाया जाता है।

फिर हमने स्कूल के स्तर पर विज्ञान की शिक्षा को अनिवार्य क्यों बनाया हुआ है? स्पष्ट है कि इसका तभी कोई मतलब होगा जब स्कूल की विज्ञान शिक्षा का मुख्य प्रयोजन कुछ व्यापक हो और वह केवल पाठ्यक्रम की खास विषयवस्तु तक सीमित न रहता हो। स्कूल की विज्ञान शिक्षा के लक्ष्यों पर अक्सर अलग–अलग विचारधाराओं के दृष्टिकोणों से अन्तहीन बहसें चलती रही हैं। लेकिन बहुत थोड़े लोग इस बात से असहमत होंगे कि उसका एक प्रमुख लक्ष्य देश में विज्ञान की जानकारी रखने वाले नागरिकों का समुदाय बनाना है। विद्यार्थियों को बड़े होकर ऐसे नागरिक बनने की जरूरत है जिन्हें इस बात का एहसास हो कि विज्ञान का दायरा क्या है, नए विज्ञान को निर्मित करने में लगने वाली विधियाँ और प्रक्रियाएँ क्या होती हैं और विज्ञान का प्रौद्योगिकी तथा समाज से क्या सम्बन्ध है। यह उत्तरोत्तर रूप से आवश्यक होता गया है क्योंकि विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी का हमारे जीने के तरीकों पर गहरा प्रभाव पड़ रहा है। नागरिकों के लिए आधुनिक प्रौद्योगिकी से, उससे सम्भावित लाभों और जोखिमों से, हमारे स्वास्थ्य और पर्यावरण पर पड़ने वाले उसके प्रभावों आदि से थोड़ा परिचित होना जरूरी हो गया है, ताकि वे इस जानकारी के आधार पर उचित विकल्पों का चुनाव कर सकें और इन मुद्दों के बारे में अपनी परिपक्व राय बना सकें। कुछ लोग तर्क देंगे कि विज्ञान ने विचारवान युग को आरम्भ किया है और यह जीवन के बारे में एक तर्काधारित वैचारिक दृष्टिकोण को प्रोत्साहित कर सकता है (हालाँकि वर्तमान में यह बहुत दूर का लक्ष्य प्रतीत होता है)। ये और इनसे जुड़े हुए बहुत से उद्देश्यों की समग्र चर्चा कभी–कभी ‘विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी साक्षरता’ शीर्षक के अन्तर्गत की जाती है। इस शब्द के अनेक स्वरूप प्रचलित हैं और उनके कई रुझान और बारीक भेद हैं, लेकिन शायद यह कहना गलत नहीं होगा कि विज्ञान की प्रकृति को पढ़ाने का तर्काधार स्कूली विज्ञान शिक्षा के इस व्यापक उद्देश्य से घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ है।


फ्राँसिस बेकन, जिनके कार्य ने वैज्ञानिक पद्धति को स्थापित किया

क्या इसका मतलब यह है कि हम विज्ञान की ‘असली’ विषयवस्तु की कीमत पर विज्ञान की प्रकृति के शिक्षण को समाहित करें? ऐसा करने से क्या हम हमारे भविष्य के वैज्ञानिकों के ज्ञान की गुणवत्ता को खतरे में नहीं डालते? क्या इससे हमारा देश विज्ञान में अपनी प्रतिस्पर्धात्मक धार को नहीं खो देगा? और, आखिरकार विज्ञान की प्रकृति के शिक्षण का उन बहुसंख्यक विद्यार्थियों के लिए क्या कोई वास्तविक उपयोग होगा जिनके बारे में हम सोच रहे हैं?

ये चिन्ताएँ जो शिक्षकों (और वैज्ञानिकों) के द्वारा व्यापक रूप से महसूस की जाती हैं, स्वाभाविक हैं, क्योंकि स्कूल के विज्ञान पाठ्यक्रम में विज्ञान की प्रकृति की प्रासंगिकता और उसकी शिक्षण पद्धति के मसले अभी भी बहुत स्पष्ट नहीं हैं। पहली बात तो यह कि ऐसा सोचना सही नहीं है कि विज्ञान

ज्ञान–मीमांसा सम्बन्धी (ऐपिस्टिमिक) धारणाओं से हमारा तात्पर्य इस बारे में हमारे विचारों से होता है कि किस प्रकार से वैज्ञानिक ज्ञान की उत्पत्ति होती है और उसकी वैधता स्थापित की जाती है, अस्तित्व–मीमांसा सम्बन्धी (ऑन्टोलोजिकल) धारणाओं से हमारा मतलब मोटेतौर पर उन सभी वस्तुओं की बुनियादी श्रेणियों के बारे में हमारे विचारों से होता है जिनका कि प्रकृति में अस्तित्व होता है। उदाहरण के लिए, पारम्परिक शास्त्रीय भौतिकी कणों तथा विद्युतचुम्बकीय तरंगों (इलेक्ट्रोमैगनेटिक वेव्स) को अस्तित्व की दो स्पष्ट रूप से अलग श्रेणियाँ मानती हैं, पर यह भेद आधुनिक भौतिकशास्त्र में धुँधला हो जाता है।

की प्रकृति को समझना केवल ऊपर उल्लेख किए गए गैर–वैज्ञानिक समूहों के लिए सार्थक है, और यह कि भविष्य के वैज्ञानिकों को अपना ध्यान केवल उस अवधारणात्मक ज्ञान को हासिल करने पर केन्द्रित करने की जरूरत है जो कि उनके विषय का केन्द्रीय तत्व है। इसके विपरीत, शिक्षाविदों के बीच यह अधिकाधिक रूप से महसूस किया जा रहा है कि विज्ञान की प्रकृति को सीखना इस विषय के ज्ञान की समझ को और भी गहराई प्रदान कर सकता है। पिछले कुछ दशकों में, विज्ञान शिक्षा पर शोध करने वालों ने विद्यार्थियों की अपने विषय के बारे में उनकी ज्ञान–मीमांसा (ऐपिस्टिमिक) तथा अस्तित्व–मीमांसा (ऑन्टोलोजिकल) सम्बन्धी धारणाओं के विभिन्न स्तरों पर विस्तृत अध्ययन किए हैं। उन्होंने निष्कर्ष निकाला है कि इस विषय की पाठ्यवस्तु के बारे में उनकी आलोचनात्मक समझ पर इन धारणाओं का प्रभाव हो सकता है।

संक्षेप में, विज्ञान की प्रकृति को समझना न केवल विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी साक्षरता को बढ़ावा देने के व्यापक लक्ष्य के लिए प्रासंगिक है, बल्कि यह विज्ञान के विद्यार्थी के मन में अपने विषय के प्रति अधिक गहरी सराहना का भाव विकसित करने के लिए भी उतना ही प्रासंगिक है।

दूसरे, इसकी जो परिकल्पना है वह विज्ञान की विषयवस्तु को 'हल्का' करने की न होकर, उसे अन्य बातों के साथ–साथ विज्ञान की प्रकृति की भी शिक्षा देने के लिए कल्पनाशील ढंग से एक साधन की तरह इस्तेमाल करने की है। दूसरे शब्दों में, विज्ञान की प्रकृति की शिक्षा किताब में इसके लिए बनाई गई एक अलग इकाई में अमूर्त व्यापक सिद्धान्तों का उपदेश देने के द्वारा नहीं, बल्कि विज्ञान की विषयवस्तु के ताने–बाने में ही गूँथकर इसे उचित सन्दर्भ में सिखाया जाना है। इसे कैसे किया जा सकता है, यह देखने से पहले हमें मोटेतौर पर इस बात के लिए सहमत होना जरूरी है कि 'विज्ञान की प्रकृति' के सम्बन्ध में हमारे दृष्टिकोण क्या हैं।

विज्ञान की प्रकृति : विकसित होते दृष्टिकोण

पूरे वैचारिक इतिहास के दौरान विज्ञान की प्रकृति दार्शनिक छानबीन का विषय रही है और यह विवेचना अभी भी जारी है। जैसे–जैसे विज्ञान की प्रगति हुई है, विशेष रूप से पिछली चार सदियों में, वैसे–वैसे विज्ञान की प्रकृति के बारे में हमारे विचार भी विकसित हुए हैं। जब 16वीं तथा 17वीं शताब्दी में गैलीलियो, देकार्त, कैपलर और न्यूटन के खोज कार्यों के द्वारा आधुनिक विज्ञान को आकार दिया जा रहा था, तभी फ्राँसिस बेकन उसे प्रतिपादित कर रहे थे जिसे हम आज वैज्ञानिक पद्धति कहते हैं। मोटेतौर पर कहें तो इस लेख का प्रारम्भिक हिस्सा विज्ञान की प्रकृति के बारे में बेकन के विचारों को ही फिर से दोहराता है। बेकन के विचारों का सार यह है कि विज्ञान प्रकृति के पूर्वाग्रह रहित अवलोकनों से तर्कों तथा नियंत्रित प्रयोगों के आधार पर विकसित किया गया एक आगमनात्मक (इंडक्टिव) व्यापकीकरण है। बेकन ने अपनी दूरदृष्टि से इस नई पद्धति की प्रकृति के क्रियाकलापों का न केवल पूर्वानुमान लगाने की, बल्कि उन्हें नियंत्रित करने की ताकत को भी पहचान लिया था।

बीसवीं सदी के आरम्भ में, विज्ञान के दार्शनिकों के एक प्रभावशाली समूह ने इस वैज्ञानिक पद्धति की एक अधिक सटीक और मजबूत अभिव्यक्ति को

प्रतिपादित करने की जिम्मेदारी उठाई। संक्षेप में, वे किसी वक्तव्य या कथन को तभी अर्थपूर्ण मानते थे जब वह या तो तो अपने–आप स्पष्ट और प्रमाणित हो या उसे पुष्टि की जा सकने वाले रूप में प्रस्तुत किया जा सके। सुविधा के लिए, हम 'परमाणु', 'जीन (आनुवांशिक इकाई)', 'संयोजकता' जैसे शब्दों का इस्तेमाल कर सकते हैं, परन्तु अन्ततः सभी वैज्ञानिक कथनों को ऐसे वक्तव्यों में बदलना सम्भव होना चाहिए जिनका प्रत्यक्ष अवलोकन किया जा सके। इस कड़े मापदण्ड के अनुसार, अर्थहीन काव्य से भले ही कोई हानि न हो, लेकिन एक पराभौतिक कथन अर्थहीन और हानिकारक, दोनों होता है, क्योंकि वह सत्य होने का दावा करता है! हालाँकि इस दर्शन, जो तार्किक निश्चयवाद (लोजिकल पॉजिटिविज्म) कहलाता है (और जो अपने बाद के कुछ नरम स्वरूप में तार्किक अनुभववाद – लोजिकल एम्पिरिसिज्म – कहलाया), के प्रस्तावकों को समस्त विज्ञान को इस प्रकार से व्यक्त कर पाने की अपनी महत्त्वाकांक्षा को साकार करने में सफलता नहीं मिल सकी।

कार्ल पॉपर के दर्शन के पीछे भी वैज्ञानिक पद्धति का विश्लेषण करने की यही भावना थी, परन्तु कई दृष्टियों से उसका दर्शन तार्किक निश्चयवाद से बहुत भिन्न था। पॉपर को प्रेरित करने वाली आकांक्षा विज्ञान और छद्‍म या नकली विज्ञान के बीच अन्तर करने की थी। वे वक्तव्यों को झूठा साबित करने के अपने मानदण्ड (फाल्सिफिकेशन क्राइटीरियन) के लिए प्रसिद्ध हैं जो कहता है कि : कोई सिद्धान्त तब तक वैज्ञानिक नहीं होता जब तक कि उसका खण्डन करने का कोई तरीका उपलब्ध न हो। अच्छे वैज्ञानिक सिद्धान्त ऐसे दुविधारहित पूर्वानुमान देते हैं जिन्हें गलत भी सिद्ध किया जा सकता है। यदि किसी पूर्वानुमान की पुष्टि हो जाती है, तो आपने सिद्धान्त को प्रमाणित नहीं कर दिया होता है; न ही आपने केवल उसे अभी तक गलत सिद्ध नहीं किया होता है। यही वह मुद्दा है जहाँ छद्‍म विज्ञान भिन्न होते हैं – वे ऐसे कोई सुस्पष्ट पूर्वानुमान व्यक्त नहीं करते जिनका परीक्षण किया जा सके और जिनमें किसी अवलोकन की सुविधा हो। पॉपर की दलील थी कि 'विज्ञान को जोखिम उठाना चाहिए', साहसी पूर्वानुमान देना चाहिए और ऐसे समालोचनात्मक प्रयोग सुझाना चाहिए जिनमें किसी सिद्धान्त को गलत साबित कर सकने की सम्भावित क्षमता हो। पॉपर, आइंस्टीन के कार्य से बहुत प्रभावित थे। उनके विचार आमतौर पर वैज्ञानिकों के विचारों से मेल खाते हैं, इसलिए अक्सर उन्हें वैज्ञानिकों का दार्शनिक कहा जाता है।

इन प्रभावी विचारों की पैनी आलोचना करते हुए, 1950 के दशक के लगभग, क्वाइन ने तर्क दिया कि एक वैज्ञानिक सिद्धान्त आपस में जुड़ी ऐसी मान्यताओं और दावों का संजाल होता है जो समग्र रूप से अनुभव से सम्बन्धित होते हैं। परिणामस्वरूप, किसी सिद्धान्त के प्रत्येक वक्तव्य को अलग–थलग करके उसका परीक्षण करना या उसे गलत साबित करना सम्भव नहीं है। उन्होंने अर्थ और परीक्षण के एक सर्वांगीण सिद्धान्त की माँग उठाई।

जो दार्शनिक विचारधाराएँ विज्ञान का तार्किक आधार तलाश रहीं थीं, उन्होंने खोज की पृष्ठभूमि (उसका वह अन्तर्दृष्टि वाला सृजनात्मक चरण जो एक विशेष सामाजिक परिवेश का अंग होता है) को उसके औचित्य के सन्दर्भ (उन सिद्धान्तों का समालोचनात्मक दार्शनिक परीक्षण जिनके सही होने का दावा किया जा रहा हो) से स्पष्ट रूप से अलग रखा। पहले वाले पहलू को मनोविज्ञान/समाजशास्त्र के क्षेत्र का हिस्सा माना गया। इस भेद ने विज्ञान की कार्यप्रणाली को बहुत हद तक उनके दायरे के बाहर रखा। दूसरे शब्दों में, उनका प्रयास वास्तविक वैज्ञानिक पद्धति को निरूपित करने के बजाय यह बताने का था कि उसे क्या होना चाहिए।

1960 के दशक के आसपास, थॉमस कुह्न की (अब प्रसिद्ध हो चुकी) पुस्तक, 'द स्ट्रक्चर ऑफ साइंटिफिक रिवोल्यूशन्स (वैज्ञानिक क्रान्तियों की संरचना)' ने विज्ञान की प्रकृति के बारे में और विज्ञान की प्रगति कैसे होती है इसके बारे में हमारे विचारों में होने वाले बड़े रूपान्तर का सूत्रपात

किया। विज्ञान के इतिहास में मील के पत्थर जैसी कुछ प्रमुख उपलब्धियों (जैसे कि कोपरनिकस की क्रान्ति) का विश्लेषण करते हुए, कुह्न इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि वैज्ञानिक आमतौर पर किसी खास परिप्रेक्ष्य में काम करते हैं; वे किसी बिन्दु तक रूढ़िवादी बने रहते हैं और कुछ विसंगतियों (प्रयोग से मतभेदों) के सामने आने पर भी अपने तब के सिद्धान्तों को नहीं छोड़ते। परन्तु, जब विसंगतियाँ तीखी होती हैं और समय के साथ संचित होती जाती हैं, तब सामान्य विज्ञान में संकट उपस्थित हो जाता है और तत्कालीन परिप्रेक्ष्य पर सवाल उठाए जाने लगते हैं। उस संकट के दौरान तमाम तरह के वैकल्पिक विचार उभरने लगते हैं, जिनमें से कुछ सम्भावनाशील नए विचार एक नई आम सहमति को आकर्षित करने लगते हैं और ऐसा अक्सर कुछ प्रभावशाली प्रतिमानों के कारण होता है। इस तरह एक नया परिप्रेक्ष्य जन्म ले लेता है और सामान्य विज्ञान फिर लौट आता है, जिसमें वैज्ञानिक परिवर्तित परिप्रेक्ष्य के विस्तृत विवरणों और उसके उपयोगों को स्पष्ट करते हैं।

कुह्न के दर्शन की गौर करने लायक प्रमुख बात है कि परिप्रेक्ष्य का ऐसा परिवर्तन किसी विशुद्ध रूप से तार्किक प्रक्रिया द्वारा संचालित नहीं होता, इसमें वैज्ञानिक समुदाय के बीच बनी सामाजिक आम सहमति शामिल होती है। सामान्य विज्ञान में मौजूदा परिप्रेक्ष्य का अनुपालन हमारे कालेजों और स्नातकोत्तर शिक्षा संस्थानों में दिए गए प्रशिक्षण के द्वारा सुनिश्चित किया जाता है। पर सभी कुह्न से सहमत नहीं थे। वैज्ञानिक प्रगति के तार्किक आधार के महत्त्व को कम करने की कुह्न के विचारों में निहित प्रवृत्ति लाकोटोस को स्वीकार नहीं थी। उन्होंने अपने खुद के सिद्धान्त को प्रतिस्पर्धात्मक 'शोध कार्यक्रमों' की अवधारणा के आधार पर विकसित किया। फेयराबेन्ड ने इस विचार को ही सिरे से खारिज कर दिया कि विज्ञान के विकसित होने के तरीके में कोई सुस्पष्ट कार्यप्रणाली होती है। उनके दर्शन का सार अक्सर इस ध्यान खींचने वाली उक्ति से व्यक्त किया जाता है कि 'कुछ भी चलता है'। उनकी प्रसिद्ध किताब 'अगेन्स्ट मैथड (पद्धति के खिलाफ)' विज्ञान में सृजनात्मकता के होने का उल्लास मनाती है और कल्पना की स्वतंत्रता की वकालत करती है। इस प्रकार जहाँ कुह्न की दृष्टि से विज्ञान में निहित अव्यवस्था लाकोटोस को खतरनाक लगी, वहीं फेयराबेन्ड ने बिलकुल विपरीत कारण – उसके अनुसार वैज्ञानिक प्रगति के व्यवस्थित और यांत्रिक होने की कुह्न की धारणा – को आधार बनाकर कुह्न की आलोचना की। कुह्न की रूपरेखा में सामान्य विज्ञान की बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका थी, क्योंकि वह एक स्वीकृत परिप्रेक्ष्य में गहराई तक जाती है, जिसके कारण उन विसंगतियों को खोजना सम्भव हो पाता है, जिनके परिणामस्वरूप अन्ततः वह परिप्रेक्ष्य बदलता है। दूसरी ओर, फेयराबेन्ड सामान्य विज्ञान की दिमाग को कुंठित करने वाली बँधे–बँधाए ढर्रे की दैनिक गतिविधियों की आलोचना करते हैं। वे जोर देकर कहते हैं कि विज्ञान की प्रगति, कल्पना की ऐसी सृजनात्मक छलांगों के कारण होती है जो तत्कालीन विचारों को चुनौती देती हैं।

कुह्न के सिद्धान्त के जो भी और गुण हों, पर वह निश्चित रूप से 20वीं सदी के उत्तरार्ध में विज्ञान के दर्शन में एक समाजशास्त्रीय आयाम का समावेश करने के लिए जिम्मेदार था। दरअसल विज्ञान के सामान्य दर्शन को कुछ समाजशास्त्री अप्रासांगिक मानते थे। वे कहते थे कि हम विज्ञान की प्रकृति को केवल उस कार्यप्रणाली की समीक्षात्मक और विस्तृत जाँच–पड़ताल के द्वारा ही समझ सकते हैं जिसे वास्तव में वैज्ञानिक अपने कार्य में अपनाते हैं। यह नया बदलाव विज्ञान की प्रकृति पर चल रही बहस को कई अलग–अलग दिशाओं में ले गया है, जिनका हम पर्याप्त रूप से यहाँ वर्णन नहीं कर सकते। लेकिन अब हमारे पास निश्चित रूप से उन सामाजिक–सांस्कृतिक आदर्शों के बारे में एक बेहतर दृष्टिकोण है जो विज्ञान को विकसित होने में सक्षम बनाते हैं। उदाहरण के लिए, यह स्पष्ट दिखाई देता है कि विज्ञान की ऐसी मजबूत सामाजिक संस्थाओं का गठन (यूरोप में वैज्ञानिकों के संघ, जैसे कि रॉयल सोसायटी), जो खुले और लोकतांत्रिक विचार–विमर्श, शोध कार्यों की हमपेशा लोगों द्वारा समीक्षा और वैज्ञानिक नियमों के सामुदायिक स्वामित्व आदि

आदर्शों का पालन करती थीं, विज्ञान की प्रगति के लिए उतना ही महत्त्वपूर्ण था जितना कि अलग–अलग वैज्ञानिकों का कौशल था।

इन विचार–विमर्शों से धीरे–धीरे जो अन्तर्दृष्टियाँ निकली हैं, हम उन्हें सार रूप में प्रस्तुत कर सकते हैं। पहली बात है कि विज्ञान केवल अवलोकन और प्रायोगिक जानकारी के आधार पर तार्किक विधि से हासिल किया गया ज्ञान नहीं होता, बल्कि उसमें अक्सर ऐसे कल्पनाशील और क्रान्तिकारी नए विचार भी शामिल रहते हैं जो जरूरी नहीं कि उपलब्ध प्रत्यक्ष जानकारी से सूझे हों। उदाहरण के लिए, विज्ञान के कुछ सबसे सफल सिद्धान्तों का उद्भव सरलता, समरूपता और एकीकरण की प्रेरणा के सामान्य विचारों से हुआ है। दूसरी बात है कि हालाँकि प्रकृति के अवलोकन अक्सर विज्ञान के प्रारम्भिक बिन्दु होते हैं, परन्तु सभी अवलोकन निष्पक्ष नहीं होते – वे 'सिद्धान्त से लदे हुए' होते हैं; सिद्धान्त हमें स्पष्ट रूप से या अप्रत्यक्ष रूप से हमारा मार्गदर्शन करते हैं कि हमें कहाँ जाना है और क्या प्रयोग करना या अवलोकन करना है (जरूरी नहीं कि इससे विज्ञान की वस्तुपरकता का महत्त्व कम होता हो)।

तीसरी बात है कि अवलोकन और प्रायोगिक जानकारी सही सिद्धान्त को पूरी तरह निर्धारित नहीं करते; उनकी कई अलग–अलग सिद्धान्तों के साथ संगति बैठ सकती है। चौथी बात है कि विज्ञान पूर्ण रूप से एक संज्ञानात्मक व्यवहार नहीं होता, हालाँकि यह निश्चित रूप से प्रकृति के आनुभविक तथ्यों द्वारा सीमित होता है, पर इसमें वैज्ञानिकों के बीच बनने वाली कोई सामाजिक आम सहमति भी शामिल रहती है। इसे अपनी प्रगति के लिए सहारा देने वाले सामाजिक–सांस्कृतिक आदर्शों तथा परिस्थितियों की भी जरूरत होती है। पाँचवीं बात है कि विज्ञान, प्रौद्योगिकी तथा समाज आपस में जटिल तरीकों से गुँथे रहते हैं और वे परस्पर एक दूसरे को प्रभावित करते हैं तथा प्रभावित होते हैं। इस आखिरी बात से यह बात भी निकलती है कि वैज्ञानिक कार्यप्रणाली में सम्भावित भूलों और प्रौद्योगिकी के बगैर, समीक्षा के तथा अविवेकी उपयोग के हानिकारक परिणामों के प्रति हमें सजग रहना भी बेहद जरूरी है।

इस संक्षिप्त विवरण का उद्देश्य केवल इस विषय का परिचयात्मक जायजा प्रदान करना है, जाहिर है कि यह विज्ञान के दर्शन के अनेक सूक्ष्म पहलुओं को नहीं दर्शाता। उदाहरण के लिए, आप इस विषय की ज्यादा गहरी विवेचना के लिए तथा ऊपर उल्लिखित प्रसिद्ध कृतियों के सन्दर्भों के लिए गॉडफ्रे–स्मिथ की 'इंट्रोडक्शन टू फिलोस्फी ऑफ साइंस (2003)'[1] देखें।

विज्ञान की प्रकृति : क्या और कैसे पढ़ाना

यह देखते हुए कि विज्ञान की प्रगति पर हुई ऐतिहासिक बहस के बहुत से मुद्दे वर्तमान में भी जारी हैं, हमें सोचना है कि इसके बारे में स्कूली शिक्षा के अन्तर्गत विद्यार्थी क्या सीखें? जाहिर है कि हम इस विषय के जटिल दार्शनिक मुद्दों को हमारी कक्षाओं में नहीं ला सकते। इस बात पर काफी विचार किया गया है। आम भावना यह है कि विभिन्न दृष्टिकोणों के बड़े दायरे के बावजूद, विज्ञान की प्रकृति के सम्बन्ध में सामान्य रूप से स्वीकृत कुछ ऐसे नए केन्द्रीय विचार हैं जिन्हें कक्षाओं में सीखा जा सकता है। हम इसके लिए अमेरिका में विकसित न्यू जेनरेशन साइंस स्टैंडर्ड्स (NGSS, 2013)[2] को देखने की अनुशंसा करते हैं। निश्चित रूप से, अन्य स्थानों में भी इनके ही जैसे उद्देश्यों की वकालत की गई है, उदाहरण के लिए देखें पम्फ्रे (1991)[3], ऑस्बोर्न इत्यादि (2002)[4], और साथ ही टेलर एवं हंट (2014)[5]। इस विषय पर और भी अधिक गहरे दृष्टिकोण के लिए एरडुरान एवं डेघर की किताब (2014)[6] देखें। हमारी दृष्टि में इस बारे में मोटेतौर पर जो आम सहमति बनी है, उसे हम यहाँ सार रूप में दे रहे हैं। विज्ञान की प्रकृति की और विस्तृत जानकारी ऊपर उल्लिखित किताबों से हासिल की जा सकती है।

विज्ञान की प्रकृति के उद्देश्य (सार)

दायरा

विज्ञान अनुभव से प्राप्त होने वाले प्रमाणों के आधार पर भौतिक संसार का वर्णन करने और

उसकी व्याख्या करने का प्रयास करता है। कुछ क्षेत्र इसके दायरे के बाहर हो सकते हैं।

कार्यप्रणालियाँ

विज्ञान विभिन्न प्रकार के दृष्टिकोणों और कार्यप्रणालियों को अपनाता है, विज्ञान की कोई सब जगह लागू होने वाली एक कार्यप्रणाली नहीं होती।

विज्ञान केवल अनुभवों और अवलोकनों से नहीं निकलता। नई परिकल्पनाओं को जन्म देने और सिद्धान्तों को निर्मित करने में सृजनात्मकता और कल्पना भी समान रूप से महत्त्वपूर्ण होती है।

अक्सर किसी सिद्धान्त को निर्धारित करने के लिए अवलोकन तथा अनुभव ही पर्याप्त नहीं होते।

विज्ञान में केवल तार्किक निगमनात्मक निष्कर्ष ही नहीं बल्कि विशेषज्ञों के निर्णय भी शामिल रहते हैं।

सामाजिक पहलू

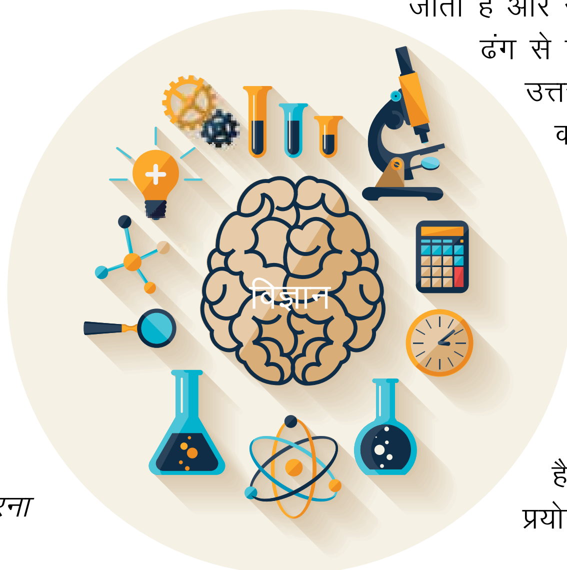
विज्ञान एक सहकारी बहु–सांस्कृतिक उद्यम है जिसमें असंख्य पुरुष और महिलाएँ अपना योगदान देते हैं। इनमें कुछ ऐसे विशिष्ट व्यक्ति होते हैं जो बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। खुली बहस, सहकर्मियों द्वारा समीक्षा और ज्ञान के साझा स्वामित्व के आदर्शों का पालन करने वाली सामाजिक संस्थाएँ इसके विकास के लिए बेहद जरूरी होती हैं।

विज्ञान और प्रौद्योगिकी के परिणामस्वरूप ऐसे मुद्दे सामने आ सकते हैं जिनका समाधान सामाजिक–सांस्कृतिक ढंग से किए जाने की जरूरत हो सकती है।

वैज्ञानिक ज्ञान

यह गतिशील होता है और नए अनुभवजन्य साक्ष्यों के आधार पर इसे संशोधित करना पड़ सकता है।

अन्त में हम सबसे महत्त्वपूर्ण किन्तु कठिन प्रश्न पर आते हैं, कि विज्ञान की प्रकृति को पढ़ाने के लिए क्या शिक्षण पद्धति अपनाई जाना चाहिए? यह धारणा नई नहीं है कि विज्ञान की शिक्षा में अकेली उसकी विषयवस्तु काफी नहीं है, जैसा कि 1960 के दशक से (और उसके पहले से भी) हो रहे पाठ्यक्रम के सुधारों के इतिहास से भी विदित होता है। 1970 के दशक के आसपास, कुछ शैक्षणिक सुधारों ने तो विज्ञान की विषयवस्तु से ज्यादा उसकी प्रक्रियाओं – अवलोकन करना, मापन करना, विश्लेषण करना, निहितार्थ निकालना, समझना, प्रयोग करना, पूर्वानुमान लगाना, सम्प्रेषण करना आदि पर जोर दिया। जल्दी ही इस दृष्टिकोण की आलोचनात्मक समीक्षाएँ होने लगीं। कुछ शिक्षाविदों ने इस बुनियादी मान्यता पर ही सवाल उठाए कि एक परिप्रेक्ष्य से दूसरे परिप्रेक्ष्य में स्थानान्तरित की जा सकने वाली, ऐसी सामान्य प्रक्रियाओं का कोई समूह होता है जो विज्ञान के सभी विषयों में साझा तौर पर लागू होती हों। उदाहरण के लिए, मिलर एवं ड्राइवर (1987)[7] की टिप्पणियाँ देखें। अभी कुछ समय सेज को सीखने और सिखाने के लिए एक खोजबीन–आधारित पद्धति के पक्ष में व्यापक सहमति बनती हुई दिखाई देती है। इसमें सन्देह नहीं कि इस रचनावादी दर्शन से प्रभावित इस पद्धति में ऊपर बताई गई विज्ञान की प्रक्रियाएँ निहित होती हैं, लेकिन यह उनसे और भी आगे जाती है और सवाल पूछने, समीक्षात्मक ढंग से विचार करने, प्रमाण–आधारित उत्तर देने, उनकी वैधता साबित करने, और उन्हें मौजूदा वैज्ञानिक ज्ञान से जोड़ने आदि को भी शामिल करती है। बुनियादी रूप से यह पद्धति विज्ञान को ऐसे तरीके से सीखने की वकालत करती है जो उस तरीके के ही समान होता है जिस तरह वैज्ञानिक अपने प्रयोगों पर काम करते हैं।



स्वाभाविक है कि छोटे बच्चों को दिए जाने वाले खोजबीन के काम अपेक्षाकृत सरल होते हैं, और अधिक परिपक्व विद्यार्थियों के लिए काफी जटिल और विस्तृत होते हैं, लेकिन उनमें जो एक विशेषता समान होती है, वह है कोई प्रश्न पूछना और उसके प्रमाण–आधारित समाधान और व्याख्या की खोज करना। उनके ध्यान के केन्द्र अलग–अलग हो सकते हैं, उनमें से कुछ विज्ञान, प्रौद्योगिकी तथा समाज से जुड़े मुद्दे हो सकते हैं, जबकि अन्य इस विषय से ही अधिक सम्बन्धित हो सकते हैं। खोजबीन की प्रक्रिया में खोजबीन के तरीके पर भी सवाल उठाए जा सकते हैं और इस तरह वह सहज ही विज्ञान की प्रकृति सिखाने के उद्देश्यों को समाहित कर लेती है। हम पाठकों को फ्लिक एवं लैडरमैन (2006)[8] की किताब में खोजबीन की पद्धति के और विज्ञान की प्रकृति से उसके सम्बन्ध के समालोचनात्मक विवरण को देखने का सुझाव देते हैं।

एक अन्य पद्धति, विज्ञान की प्रकृति के शिक्षण के लिए विज्ञान के इतिहास को एक साधन की तरह इस्तेमाल करती है। यह भी कोई नया विचार नहीं है, इस बारे में होल्टन एवं ब्रश (2001)[9] की बहुत बढ़िया किताब को देखें। इस पद्धति के पक्ष में कुछ प्रमुख बातें ये मानी जाती हैं – विज्ञान के इतिहास में मनुष्यों की गाथाएँ होती हैं, जो विज्ञान को जीवन्त बना देती हैं और विद्यार्थियों में रुचि बनाए रखती हैं, उसमें अक्सर विद्यार्थियों की स्वस्फूर्त अवधारणाओं से समानताएँ मिलती हैं और इस तरह वह पूर्वानुमान लगाने और विषयवस्तु तक सीमित उनके विचारों को संशोधित करने में सहायक होती है। यह जानना कि वर्तमान विज्ञान किस तरह इतिहास के विभिन्न कालों में प्रतिस्पर्धी विचारों से निकला, उनमें आलोचनात्मक सोच को बढ़ावा दे सकता है और आखिर में विज्ञान की प्रकृति को सीखने के लिए विज्ञान का इतिहास सबसे स्वाभाविक परिप्रेक्ष्य होता है। हम पाठकों को इस मुद्दे पर हाल ही में निकाली गई हैण्डबुक (मैथ्यूज 2014)[10] को देखने का सुझाव देते हैं।

जैसा कि लैडरमैन (2006)[11] ने जोर देते हुए तर्क दिया है, विज्ञान की प्रकृति सिखाने के उद्देश्यों को मुख्य रूप से ऐसे संज्ञानात्मक परिणामों की तरह देखा जाना चाहिए जिनको उचित ढंग से आँका जा सके। शिक्षण में इन उद्देश्यों को स्पष्ट रूप से दर्शाए जाने की जरूरत है, क्योंकि इसकी सम्भावना कम है कि वे अपने–आप निहितार्थ से आत्मसात कर लिए जाएँगे, चाहे हम खोजबीन वाली पद्धति अपनाएँ या इतिहास पर आधारित पद्धति अपनाएँ। यदि हमारा लक्ष्य विज्ञान की प्रकृति के बारे में विद्यार्थियों की समझ में सुधार करना है, तो खोजबीन के लिए दिए जाने वाले कार्यों और विज्ञान के इतिहास से ली गई ऐसी रोचक कथाओं, जो स्पष्ट रूप से विज्ञान की प्रकृति पर केन्द्रित हों, का एक परिपूर्ण संग्रह विकसित किया जाना जरूरी है।

आभार

मैं HBCSE(TIFR) के जे. रामदास, एस. चूनावाला, के. सुब्रमनियम को तथा कई अन्य समीक्षकों को इस लेख को आलोचनात्मक तरीके से देखने और इसमें सुधार के लिए उपयोगी टिप्पणियाँ देने के लिए धन्यवाद देते हुए आनन्दित हूँ।

Reference

1. Introduction to Philosophy of Science. Godfrey-Smith P. (2003). Chicago. The University of Chicago Press.
2. Next generation science standards: For states, by states. NGSS (2013). Appendix H www.nextgenscience.org
3. History of science in the National Science Curriculum: a critical review of resources and their aims. Pumfrey, S. (1991). British Journal of the History of Science. 24, 61–78.
4. EPSE Project3 Teaching pupils 'ideas-about-science'. Osborne, J., Ratcliffe, M., Bartholomew, H., Collins, S. & Duschl, R. (2002b). School Science Review, 84 (307), 29–33.
5. History and Philosophy of Science and the Teaching of Science in England. Taylor J.L. and Hunt A. (2014). Matthews M.R. (ed.) op.cit. 2045-2082.
6. Reconceptualizing the Nature of Science for Science Education. Erduran S. & Dagher Z.R (2014). Dordrecht, Netherlands. Springer.
7. Beyond processes. Millar, R. & Driver, R. (1987). Studies in Science Education, (14) 33–62.
8. Scientific Inquiry and Nature of Science. Flick L.B. and Lederman N.G. (eds.) (2006). Dordrecht,

Netherlands. Springer.

9. Physics, the Human Adventure. Holton G. and Brush S.G. 3rd ed. (2001). New Brunswick. NJ. Rutgers University Press.

10. International Handbook of Research in History, Philosophy and Science Teaching. Matthews M.R. (ed.) (2014). Dordrecht, Netherlands. Springer.

11. Syntax of Nature of Science within Inquiry and Science Instruction. Lederman N.G. (2006). In Flick L.B. and Lederman N.G. (eds.) (2006) op.cit, 301-317.

अरविन्द कुमार *जो पहले मुम्बई के होमी भाभा सेण्टर फॉर साइंस एजुकेशन (टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ फण्डामेंटल रिसर्च) में कार्यरत थे, अब मुम्बई के सेण्टर फॉर बेसिक साइंसेज में पढ़ाते हैं। उनकी मुख्य अकादमिक रुचियाँ सैद्धान्तिक भौतिकशास्त्र, भौतिकशास्त्र की शिक्षा, तथा विज्ञान शिक्षण में विज्ञान के इतिहास और दर्शन की भूमिका हैं। लेखक से* arvindk@hbcse.tifr.res.in *पर सम्पर्क किया जा सकता है।* ***अनुवाद*** *: सत्येन्द्र त्रिपाठी*

अपान वायु : सावधान!

अपान वायु वह गैस होती है जो हमारे पाचन तंत्र में, विशेष रूप से पेट तथा आँतों में, पाचन क्रिया के दौरान पैदा होती है और फिर मल द्वार से बाहर निकाली जाती है। मनुष्य की अपान वायु का 99% से भी अधिक नाइट्रोजन, आक्सीजन, हाइड्रोजन (पाचन मार्ग में मौजूद हाइड्रोजन का उपभोग करने वाले जीवाणु इसमें से कुछ को खर्च करके मीथेन तथा अन्य गैसें बना सकते हैं), कार्बन डाईआक्साइड और मीथेन से मिलकर बना होता है।

दूसरे विश्व युद्ध के दौरान, अमेरिका के लड़ाकू विमान अत्यधिक ऊँचाईयों पर उड़ते थे। अधिक ऊँचाई के परिणामस्वरूप (बाहर के) वायुमण्डल के दबाव में कमी हो जाती थी जिसके कारण विमान चालकों के आँतों में फँसी पाचन की गैसें फैलती थीं (ब्वॉयल के नियम के अनुसार), जिससे उन्हें दर्द भरी मरोड़ का अनुभव होता था। इसलिए ऐसे खाद्य पदार्थ जिनमें अपान वायु पैदा करने की क्षमता होती है (सूखी फलियों के दाने (बीन्स) तथा मटर, पत्ता गोभी परिवार की सब्जियाँ, कार्बन डाईआक्साइड घुले हुए (कार्बोनेटेड) पेय और बीयर आदि) चालकों के आहार से हटा दिए गए।



मीथेन एक ज्वलनशील गैस है (अर्थात वह बुंसेन बर्नर के लिए अच्छा ईंधन होती है), हालाँकि वह पश्चिमी जगत के केवल लगभग एक–तिहाई लोगों द्वारा पैदा की जाती है। अन्तरिक्ष यात्रा की स्पर्धा के प्रारम्भिक दौर में इसे लेकर कुछ चिन्ता जताई गई थी, कि अन्तरिक्ष यान चालकों के द्वारा उत्सर्जित मीथेन, यदि भूल–चूक से दुर्घटनावश प्रज्वलित हो जाए, तो उससे अन्तरिक्ष यान के भीतर विस्फोट हो सकता था। परन्तु आज तक ऐसी कोई घटना नहीं घटी है।

परन्तु अपान वायु में दुर्घटनावश हुए विस्फोट के कारण कम से कम एक शल्यचिकित्सा के मरीज की मृत्यु तो हुई है। उस मरीज की बड़ी आँत के मलाशय (कोलन) वाले भाग से एक इलेक्ट्रोड छू गया और उससे मलाशय में मौजूद हाइड्रोजन तथा मीथेन प्रज्वलित हो गईं। इस दुर्घटना में शल्य चिकित्सक भी विस्फोट के धक्के से कमरे की दीवार से जा टकराया।

द्वारा गीता अय्यर, स्रोत : साइंस एजुकेशन रिव्यू, वॉल्यूम 3 (2004), पृ.111–112 www.scienceeducationreview.com *से उनकी अनुमति पुनर्मुद्रित किया गया।*

गीता अय्यर *एक स्वतंत्र सलाहकार हैं, जो कई स्कूलों के साथ पाठ्यक्रम निर्मित करने के काम में और साथ ही विज्ञान एवं पर्यावरण शिक्षा के क्षेत्र में भी संलग्न हैं। पहले वे ऋषि वैली स्कूल में शिक्षक थीं और फिर पुणे के निकट सहयाद्री स्कूल (के.एफ.आई.) की प्रमुख रहीं। उन्होंने शिक्षा तथा पर्यावरण के क्षेत्रों में विभिन्न विषयों पर विस्तृत लेखन किया है। उनसे* scopsowl@gmail.com *पर सम्पर्क किया जा सकता है।* ***अनुवाद*** *: सत्येन्द्र त्रिपाठी*

मैक्रोफेज से एक मुलाकात

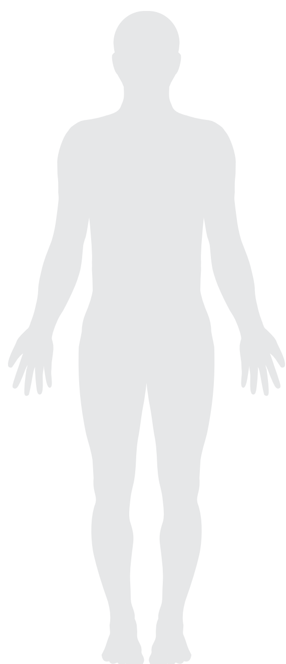
विग्नेश नारायणन एच.

मनुष्य का शरीर एक शाश्वत रणभूमि है। सभी प्रकारों और आकारों के हमलावरों से निरन्तर हमारी मुठभेड़ होती रहती है। क्या आपको मालूम है कि हमारे शरीर में ऐसी निजी सेनाएँ होती हैं जो बीमारियों के खिलाफ लड़ती हैं? इस सेना की भिन्न–भिन्न इकाइयाँ क्या हैं? वे कैसे काम करती हैं? वे कैसे लगभग तत्क्षण लड़ाई की अग्रिम पंक्ति तक पहुँच जाती हैं? इन सवालों और इनके अलावा और भी कई सवालों के उत्तर यहाँ मनुष्य के रोगरोधक तंत्र के एक सिपाही (कोशिका) की मुँह जबानी दिए जा रहे हैं।

"बन्द दरवाजे से होकर अपने जोखिम पर यहाँ प्रवेश करें जहाँ ऐसी असम्भव चीजें घट सकती हैं जिन्हें दुनिया ने पहले कभी न देखा हो!"

– चलती–फिरती तस्वीरों वाली टेलीविजन शृंखला 'डैक्सटर्स लैबोरेटरी' का शीर्षक गीत

क्या आपने कभी सोचा है कि आपके अपने शरीर के भीतर क्या चलता रहता है – यह कैसे होता है कि आप एक साथ एक ही समय में संतरे का कुछ रस गटक सकते हैं, ताजगी की ठण्डी लहरों को अपने गले के नीचे उतरता हुआ महसूस कर सकते हैं, यह पंक्ति पढ़ सकते हैं और अगले आई.पी.एल. क्रिकेट मैच के बारे में सोच सकते हैं? वैज्ञानिकों ने खोज की है कि हमारे शरीर की 75% कोशिकाएँ जीवाणुओं (बैक्टीरिया) की होती हैं और केवल 25% मानवीय होती हैं। क्या यह हमें मनुष्य से ज्यादा जीवाणु बना देता है? वह क्या है जो वास्तव में हमें वह बनाता है जो हम होते हैं? चलिए, हम कम से कम कुछ सवालों के उत्तर पता करते हैं।



आज मैं आपका परिचय अपने एक मित्र से करवाऊँगा। हम उसे 'बिग एम' कहेंगे, लेकिन मेरे ख्याल से आप उसे 'मैक्रोफेज (बृहतभक्षक कोशिका)' कह सकते हैं। मानव शरीर की दुनिया में, यह उन श्वेत रक्त कणों या 'लियुकोसाइट्स' का एक छोटा अंश निर्मित करता है जो आपके शरीर की प्रतिरक्षा व्यवस्था का एक हिस्सा होते हैं। आप उससे स्वयं बात कर सकते हैं। बस आपको इतना करना है कि अपने ट्रैकिया, जो आपकी वायु नलिका (विंड पाइप) भी कहलाता है, से होकर

नीचे जाएँ जब तक कि आप अपने एक फेफड़े तक नहीं पहुँच जाते (चौराहे पर दाएँ मुड़ जाएँ)। यह रास्ता एक आल्वियोलस या 'वायु थैली (एयर सैक)' पर समाप्त होता है, जो कि आपकी साँस के द्वारा ली जा रही आक्सीजन का गंतव्य स्थल है। वहाँ से ऊपर की ओर मुड़ें और केशिकाओं (कैपिलरीज, जो ऐसे छोटी रक्त वाहिकाएँ होती हैं जो आल्वियोली पर परत बनाए रखती हैं तथा आक्सीजन को आपके शरीर के दूसरे हिस्सों तक ले जाती हैं) में सिकुड़कर बाहर निकलें, फिर नरम गुलाबी ऊतकों से होते हुए यात्रा करें जब तक कि आप उरोस्थि (स्टरनम) तक न पहुँच जाएँ। उरोस्थि वह बड़ी हड्डी होती है जो आपकी छाती के बीच में होती है और आपकी पसलियों को पकड़कर इकट्ठी रखते हुए पसलियों के पिंजरे का मुख्य खम्भा बनाती है। उरोस्थि पर दो बार दस्तक दें और रक्त के मोनोसाइट को बुलाएँ। वह निश्चित रूप से आएगा। मैंने उससे पहले से कह रखा है कि आप उससे मिलने आएँगे। वह बिग एम का अच्छा मित्र है, और वह आपको उससे मिलाने ले जाएगा।

'ठक, ठक'

हलो, आइए! आपसे मिलकर खुशी हुई। आप रक्त की एक केन्द्रक वाली श्वेतकोशिका (मोनोसाइट) से मिलना चाहते हैं? यह लीजिए वह साक्षात रूप से, या मुझे कहना चाहिए कि प्रोटोप्लाज्म (जीवद्रव्य) के रूप में, आपके सामने खड़ी है! निश्चित रूप से, महोदय, मैं अपने ही बारे में बात कर रही हूँ। मेरा ही नाम मोनोसाइट है, और मैं सम्मानित महसूस कर रही हूँ कि आप उरोस्थि तक की लम्बी यात्रा करके मुझसे मिलने आए हैं। मैं आगे नीचे की ओर रहती हूँ, कठोर हड्डी के ऊतकों को पार करके ठीक केन्द्र में। जहाँ दीवारें नरम, खून बढ़िया और गरम और हर चीज चमकीली लाल होती है। हम उसे 'द मैरो (मज्जा)' कहते हैं। आप इस नीरस रंग के लिए क्षमा करें, पर यहाँ हर चीज लाल होती है। यह इसलिए है क्योंकि, जैसा कि आप जानते हैं, रक्त प्रवाह में मौजूद सभी लाल रक्त कोशिकाएँ यहीं उत्पादित होती हैं। सही कहें, तो केवल यहीं नहीं, बल्कि सारे शरीर की सभी हड्डियों की मज्जा में उत्पादित होती हैं। यह हमारे सबसे बड़े कारखानों में से एक है जहाँ 'रक्त निर्माण (हीमाटोपोएसिस)' की प्रक्रिया घटित होती है। यह एक जबर्दस्त रूप से जटिल चीज के लिए बनाया गया जबर्दस्त रूप से जटिल शब्द है। हीमाटोपोएसिस (जिसका उच्चारण हीम–आटो–पो–एस–सिस है) वह प्रक्रिया है जिसमें हमारे माता–पिता, जो चमत्कारी रूप से बहुगुणी कोशिकाएँ होती हैं – जो 'मल्टीपोटैंशियल हीमाटोपोएटिक स्टेम सेल्स' कहलाती हैं –उनका व्यवस्थित रूप से शृंखला में विभाजन (एक कोशिका बँटकर दो कोशिकाएँ बन जाती हैं) के बाद विभाजन होता है, और कोशिकाओं में विभेद निर्मित होते हैं (एक प्रकार की कोशिका – जैसे कि स्टेम सेल – दूसरे प्रकार की कोशिका बन जाती है – जैसे कि लियुकोसाइट) ताकि मेरी और मेरे सम्बन्धियों की उत्पत्ति हो सके। हम सब मिलकर रक्त कोशिकाएँ कहलाते हैं। हम, रक्त कोशिकाएँ, कई वर्गों में विभाजित की जाती हैं, जो स्वाभाविक है क्योंकि हमारे कई अलग–अलग कार्य होते हैं।

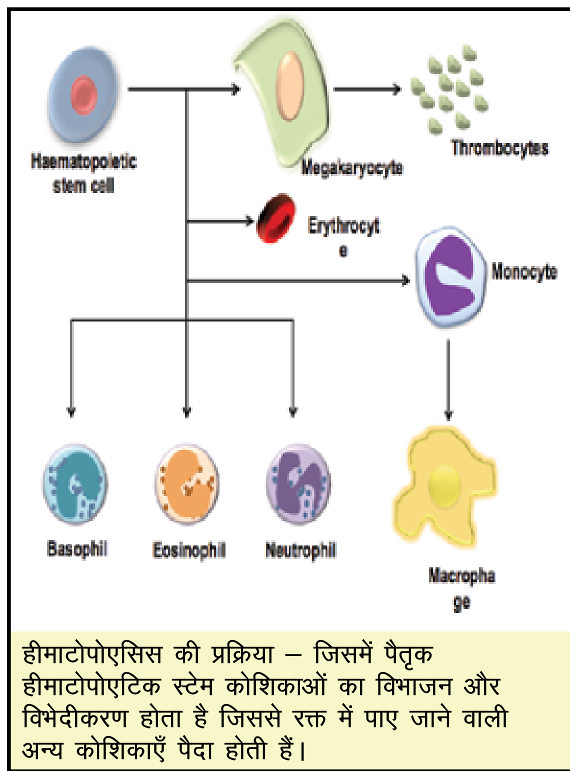
'थ्रोम्बोसाइट्स' या प्लेटेलैट्स (बिम्बाणु) का नाम ग्रीक शब्द *थ्रोम्बोस* पर आधारित है जिसका अर्थ खून का थक्का (ब्लड क्लॉट) होता है। वे सबसे छोटी रक्त कोशिकाएँ होती हैं, और उनका आकार लाल रक्त कोशिकाओं के आकार का सिर्फ 20 प्रतिशत होता है। प्लेटेलैट्स पूरे रक्त प्रवाह में फैले रहते हैं, और जहाँ भी रक्त वाहिकाओं (ब्लड वैसेल्स) को कोई क्षति होती है, वहाँ वे खून के थक्के बनाने के लिए तैयार रहते हैं। जब कोई घाव होता है, तब खून की हानि को रोकने के लिए या यदि किसी रक्त वाहिका में कोई दरार आ जाए तो आसपास के ऊतकों में खून का रिसना रोकने के लिए, यह बहुत महत्त्वपूर्ण होता है।

'ऐरिथ्रोसाइट्स' लाल रक्त कोशिकाएँ होती हैं। इन कोशिकाओं का विशाल संख्या में उत्पादन होता है, और उन्हीं के कारण पूरे शरीर का रंग भीतर से लाल होता है। उनके बिना मानव शरीर में जहाँ कहीं भी वसा (फैट) की अनेक कोशिकाएँ होती हैं, वहाँ के हर ऊतक का रंग सफेद या पीला या भूसे

के रंग का होगा। क्या आप जानते हैं कि किसी भी समय पर शरीर में लगभग 20–30 खरब लाल रक्त कोशिकाएँ होती हैं? इस संख्या में 20 के बाद 12 शून्य लगते हैं! हीमोग्लोबिन,जो लाल रक्त कोशिका के भीतर होता है, आयरन (लोहे) को बाँधता है, जो आक्सीजन के साथ बाँधे जाने पर लाल रंग देता है। वास्तव में, आयरन और आक्सीजन के बीच का यह बंध बनना ही वह तरीका है जिसके द्वारा आक्सीजन उन आल्वियोलर केशिकाओं, जिन्हें आपने फेफड़ों में देखा था, से शरीर के सभी अन्य अंगों तक ले जाई जाती है। जब ये लाल रक्त कोशिकाएँ हीमोग्लोबिन का समुचित संचय नहीं कर पातीं, तो उसके परिणामस्वरूप सारे शरीर में आक्सीजन की कमी हो जाती है और तब कई बीमारियाँ होती हैं।

अरे, कितनी देर हो गई! मैं बातों में बह गई। मैं सचमुच में क्षमा चाहती हूँ। हमारे बिग एम से मिलने से पहले, मुझे आपको बताने के लिए अभी भी बहुत कुछ बाकी है। दरअसल, बिग एम व्यवसायी व्यक्ति जैसे व्यस्त रहते हैं, उन्हें ऐसे प्रश्न अच्छे नहीं लगते जिनके उत्तर उन्हें मामूली या बहुत आसान मालूम पड़ते हैं। यहाँ उनसे बात करने आने वाले अधिकांश लोग वैज्ञानिक होते हैं जो स्वास्थ्य सेवाओं या बीमारियों जैसी बड़ी समस्याओं पर काम कर रहे होते हैं। अभी एक दिन, एक पीएच.डी. कर रहा विद्यार्थी आया था जो जानना चाहता था कि बिग एम किस तरह *ई. कोलाई* लिपोपोलीसैकराइड को खोज लेते हैं! मुझे खुद बिलकुल नहीं पता कि उसका क्या मतलब है, पर बिग एम–वह हर चीज जानता है! इसलिए, इसके पहले कि हम वाकई में उससे मिलें, मैं आपको उसके और मेरे शेष भाई–बंधुओं के बारे में सब कुछ बता दूँगा। हम कतई यह नहीं चाहेंगे कि जब आप उससे मिलें तो आप उससे पूछ बैठें कि वह कौन है!

बिग एम प्रतिरक्षा कोशिकाओं के एक परिवार का हिस्सा है, जिन्हें श्वेत रक्त कोशिकाएँ कहते हैं। आप उन्हें मेरे बड़े भाई की तरह मान सकते हैं, उसी कारण से अधिकांश लोग उनसे मिलाने के लिए ले जाने को मुझसे कहते हैं। अन्य कोशिकाएँ यह नहीं करेंगी, क्योंकि वे उनके 'साइटोटॉक्सिक' पोटैंशियल (कोशिकाओं को नुकसान पहुँचाने की सामर्थ्य) से डरती हैं। जब हम आगे बढ़ेंगे तो मैं आपको बताऊँगी कि उसका क्या मतलब है। हमारी वंशावली (फेमिली ट्री) में, पैतृक पक्ष में (याद कीजिए हमारे पिताओं की जो मल्टीपोटैंशियल हीमाटोपोएटिक स्टेम सेल्स कहलाते हैं) माईलॉयड लियुकोसाइट्स तथा लिम्फोसाइट्स होते हैं। माईलॉयड लियुकोसाइट्स में शामिल सदस्य हैं : मैं, तथा मैक्रोफेज अर्थात बिग एम और हमारे तीन रिश्ते के बंधु (कजिन्स) – न्यूट्रोफिल, ईसिनोफिल और बैसोफिल। मुझे यह कहते हुए गर्व है कि हमारा परिवार उस दिन से ही शरीर की पहली रक्षा पंक्ति रहा है जिस दिन शरीर का जन्म हुआ था। हमें लिम्फोसाइट्स कहलाने वाले विशिष्ट बलों से भी मदद मिली है, लेकिन वैसा केवल गम्भीर लड़ाइयों के दौरान ही हुआ है, जब हमारी ताकत शत्रु के आगे कम पड़ रही थी। क्या आप इस भूमि की सीमाओं पर, घर से इतनी दूर, रहने की और हमेशा इंतजार करने, निगरानी रखने और किसी भी क्षण हमला होने की आशंका करते रहने की कल्पना कर सकते हैं? बस, वही जीवन हम जीते हैं।



हीमाटोपोएसिस की प्रक्रिया – जिसमें पैतृक हीमाटोपोएटिक स्टेम कोशिकाओं का विभाजन और विभेदीकरण होता है जिससे रक्त में पाए जाने वाली अन्य कोशिकाएँ पैदा होती हैं।

मेरा बंधु, न्यूट्रोफिल, बाहर की दुनिया के आपके पैदल सिपाही के जैसा होता है। किसी भी मुठभेड़ में वह सबसे पहले भिड़ता है और अफसोस है कि शरीर की रक्षा के लिए अपनी जान देने वाला उसका ही परिवार सबसे पहला होता है। क्या आपने कभी मवाद (पस) देखा है – वह गाढ़ा, चिपचिपा, सफेद द्रव जो किसी भी खुले घाव या काट से बहकर बाहर निकलता है? बस, वही बड़ी संख्या में न्यूट्रोफिलों के मरने से बनता है, पर मरते–मरते वे दुश्मन के कई सैनिकों को अपने साथ ले जाते हैं। जब आपको कोई घाव लगा हो जिसमें से मवाद बहना शुरू हो जाए तो सावधान हो जाएँ, क्योंकि उसका मतलब है कि न्यूट्रोफिल मरने लगे हैं और अब शरीर को दूसरी रक्षा पंक्ति के सैनिकों को बुलाने की जरूरत है। घाव को साफ रखें और उसे एन्टीसेप्टिक (रोगाणु रोधक) से धोएँ अन्यथा हमलावर हमारी सीमाओं के और भीतर जा सकते हैं।

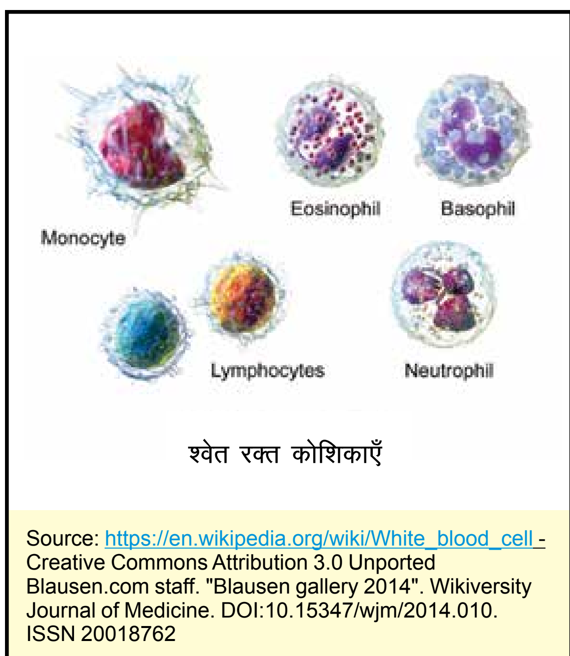


ऐन्थ्रेक्स बैक्टीरिया को घेरते हुए न्यूट्रोफिल

Volker Brinkmann – (November 2005). "Neutrophil engulfing Bacillus anthracis". PloS Pathogens 1 (3): Cover page. DOI:10.1371. Retrieved on 2009-01-04. Neutrophil engulfing anthrax bacteria, taken with a Leo 1550 scanning electron microscope. Scale bar is 5 micrometers. Creative Commons Attribution 2.5 Generic

क्या आपने कभी सोचा है कि किस तरह के आक्रमणकारी हमारे घर पर हमला करते हैं? करीब–करीब हर वह हमलावर, जिसके बारे में आप सोच सकते हैं, भोजन और आश्रय चाहता है! यदि आप उनको इंच भर भी जगह देंगे तो वे मील भर पर कब्जा कर लेंगे। अभी उस दिन हमारी मुठभेड़ एक विशाल नैमाटोड से हुई जिसने आदमी के भोजन में बहुत छोटे अण्डों के रूप में शरीर में प्रवेश किया था। खाना ठीक से पकाया नहीं गया था, और कीड़े के अण्डे बचे रह गए (ऐसा ज्यादातर मांस, जैसे कि सुअर का मांस या गौमांस में और गन्दे पानी में उगाई गई हरे पत्तों वाली सब्जियों में होता है)। तब मेरे भाई, ईसिनोफिल ने एकदम कार्यवाही की। ऐसे प्रोटीनों से लैस होने का लाभ उठाकर, जो कीट परजीवियों के लिए अत्यन्त विषैला होता है, उसने विषैले वैसीकिल्स (जहरीले पदार्थ भरी छोटी थैलियाँ!) कीड़ों पर छोड़े जिनसे वे तुरन्त मर गए। उसे वीरता पदक से पुरस्कृत किया गया और दो घण्टे का अवकाश दिया गया (हमारे जैसी छोटी कोशिकाओं के जीवन में 2 घण्टे काफी लम्बा समय होता है)! निश्चित ही हमारे परिवार में ऐसे भी सदस्य हैं जिन्हें ऐसे वीरता के काम नहीं सौंपे जाते और वे संख्या में कम होते हैं। मैं ईसिनोफिल के भाई, बैसोफिल की बात कर रहा हूँ। यहाँ बहुत थोड़े से बैसोफिल हैं और बैसोफिलों की संख्या हमेशा ईसिनोफिलों और न्यूट्रोफिलों से कम होती है। परन्तु, बैसोफिल एक बहुत महत्त्वपूर्ण काम करते हैं। वे 'सूजन और जलन (इनफ्लामेशन) के सन्देशवाहक' होते हैं। कोई सूजन या जलन एक एस.ओ.एस. संकेत या पुलिस नियंत्रण कक्ष को 1–0–0 पर दी गई संकट की सूचना जैसी होती है। जब भी आपके शरीर में खुजली चलने लगती है या लाल निशान उभर आते हैं या फिर आपकी नाक ही बहने लगती है और जोर का जुकाम हो जाता है, तब आपको पता होना चाहिए कि बंधु बैसोफिल अपना काम कर रहा है और शरीर की शक्तियों को रोग के खिलाफ लड़ने के लिए लामबन्द कर रहा है।

अच्छा, मेरे ख्याल से हमने मेरे परिवार की वंशावली का संक्षिप्त दौरा पूरा कर लिया है! यह ठीक ही है, क्योंकि हम अब करीब–करीब यकृत तक पहुँच गए हैं जहाँ बिग एम हमारा इंतजार कर



श्वेत रक्त कोशिकाएँ

Source: https://en.wikipedia.org/wiki/White_blood_cell - Creative Commons Attribution 3.0 Unported Blausen.com staff. "Blausen gallery 2014". Wikiversity Journal of Medicine. DOI:10.15347/wjm/2014.010. ISSN 20018762

रहा है। मैंने विनम्रता के कारण स्वयं मुझ गरीब, मोनोसाइट का वर्णन छोड़ दिया था। यह कहना कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी कि रक्त में मौजूद सभी कोशिकाओं में, मैं सबसे बड़ी हूँ। प्रधान कार्यालय ने मुझे दो जिम्मेदारियाँ सौंपी हैं, जो उससे ज्यादा हैं जितनी मेरे अधिकांश बंधु कर सकते हैं! हम मोनोसाइट्स चेतावनी मिलने पर एक क्षण में अपनी प्रकृति बदल सकते हैं। सामान्य दिनों में, मैं वैसी ही दिखती हूँ जैसा कि आप मुझे अभी देख रहे हैं, साफ और पारदर्शी, बगैर किसी परिभाषित आकार के (एक अमीबा की तरह, जो एक और परजीवी होता है जिसके खिलाफ भाई न्यूट्रोफिल को लगातार लड़ना पड़ता है)। मेरा यह 'आकाररहित आकार' तब बहुत उपयोगी होता है, जब मुझे रक्त वाहिकाओं जैसी तंग जगहों में से सिकुड़कर और कसकर जमे हुए ऊतकों में से रास्ता बनाकर निकलना पड़ता है। जब भी भाई बैसोफिल शरीर के किसी हिस्से में खतरे की चेतावनी देता है (क्या आपको इनफ्लामेशन की याद है?), मैं उसकी आवाज सुनकर पहुँचने वाली सबसे तेज कोशिका हूँ। हड्डियों, कार्टिलेज और वसा को तेजी से पार करते हुए एक वाहिका में घुसकर और दूसरी से बाहर निकलकर, मैं शरीर के जिस किसी भी हिस्से को मेरी जरूरत होती है उस तक पहुँचने का सबसे छोटा रास्ता तलाश सकती हूँ – जो कि मेरा पहला काम है।

मेरा दूसरा काम कहीं ज्यादा रोचक है। एक बार जब मैं सूजन या जलन की जगह पहुँच जाती हूँ, तो मैं शारीरिक रूपान्तरण की अपनी शक्तियों का उपयोग करके कुछ चकित करने वाला काम करती हूँ, भले ही मैं खुद ऐसा कह रही हूँ! मैं अभी आपको उसके बारे में नहीं बताऊँगी। उसके बजाय, हम जब अपनी मंजिल पर पहुँच जाएँगे तब मैं आपको उसका सजीव प्रदर्शन दिखाऊँगी। डायाफ्राम कहलाने वाली उस बड़ी झिल्ली के पीछे वह जगह है जहाँ हम जा रहे हैं और वह शरीर के सबसे महत्त्वपूर्ण और आवश्यक अंगों में से एक है – यकृत।

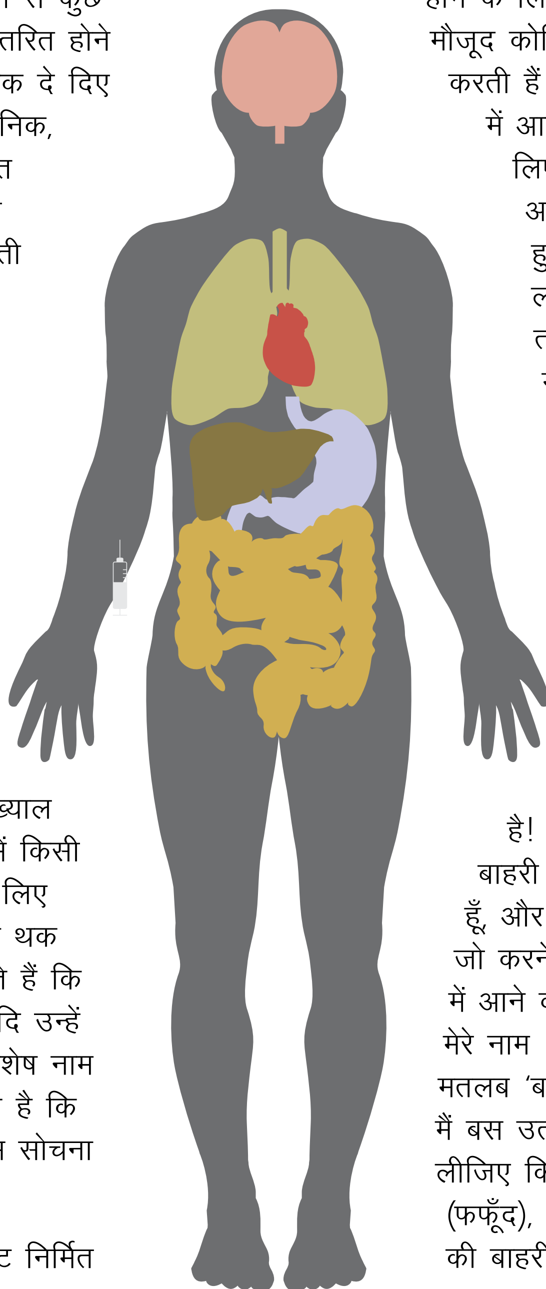
शायद आपको पता न हो, यकृत मानव शरीर का सबसे बड़ा अंग होता है (निश्चित रूप से, सिवाय त्वचा के जो हर जगह फैली रहती है!)। वह अनेक प्रकार के काम करता है – जैसे कि ऐसे नुकसानदायक पदार्थों को दूर करना जो शरीर को जहरीला बना सकते हैं ('डिटोक्सीफिकेशन – विष निकालना' कहलाने वाली प्रक्रिया), भोजन के विभिन्न प्रकार के अवयवों जैसे कि कार्बोहाइड्रेड्स और लिपिड्स का चयापचय (मैटाबोलाइजेशन) करना और साथ ही कोलेस्ट्रोल और अन्य प्रोटीनों तथा हार्मोनों का संश्लेषण करना। वास्तव में भ्रूण के पहले ट्राइमैस्टर (गर्भाशय के भीतर शिशु के जीवन के पहले तीन महीने) में लिवर लाल रक्त कोशिकाओं का उत्पादन भी करता है (जो कि वयस्क लोगों की हड्डी की मज्जा में उत्पादित होते हैं, जहाँ आपकी मुझसे मुलाकात हुई थी)!

अहा! आखिरकार हम अपनी मंजिल पर पहुँच ही गए!

तो गौर से देखिए! वह मैं ही हूँ जिससे मिलने के लिए आपने इतनी दूर की यात्रा की है! जैसा कि आप देख सकते हैं, जिस क्षण से हमने यकृत में प्रवेश किया है, तब से ही मैं आकार में बड़ी और बड़ी होती गई हूँ। यकृत के ऊतकों में मौजूद ऐसे सूक्ष्म रासायनिक संकेतों का इस्तेमाल करते हुए,

जिन्हें सिर्फ मैं ही देख सकती हूँ और उनका उत्तर दे सकती हूँ, मैं शरीर के सबसे महत्त्वपूर्ण सैनिकों में से एक में रूपान्तरित हो गई हूँ। मैं बिग एम, मैक्रोफेज, बन गई हूँ। आप चकित हो गए, है न? प्रतिदिन, मेरे जैसे हजारों मोनोसाइट्स अपनी नियति को साकार करने के लिए पूरे मानव शरीर के विस्तार की यात्रा करते हैं। हममें से कुछ यकृत में आते हैं, जैसे मैं आई हूँ, अन्य आँतों में जाते है, और दरअसल शरीर के हर उस ऊतक में जिसके बारे में आप सोच सकते हैं! हममें से कुछ को हमारे मैक्रोफेज में रूपान्तरित होने के बाद बहुत कठिन नाम तक दे दिए जाते हैं। मैं एक जर्मन वैज्ञानिक, जिसने पहली बार मुझे यकृत के भीतर खोजा था, के नाम पर कपफर कोशिका कहलाती हूँ। हड्डियों तथा मस्तिष्क में मौजूद मेरे मैक्रोफेज भाई क्रमशः औस्टियोक्लास्ट्स तथा माइक्रोगलिया कहलाते हैं। कुछ अन्य का कोई विशेष नाम नहीं होता, उदाहरण के लिए जो मैक्रोफेज आल्वियोली (विंड पाइप से होकर फेफड़ों में पहुँचने की यात्रा याद कीजिए?) में रहते हैं, वे आल्वियोलर मैक्रोफेज कहलाते हैं। मेरे ख्याल से, वैज्ञानिक भी हर बार हमें किसी नई जगह देखने पर, हमारे लिए नए–नए नाम सोचते–सोचते थक गए होंगे, क्योंकि आप देखते हैं कि हम हर जगह मौजूद हैं। यदि उन्हें हममें से प्रत्येक को कोई विशेष नाम देना पड़ता, तो मुझे विश्वास है कि उन्हें बीस से भी ज्यादा नाम सोचना पड़ते!

हर बार जब कोई मोनोसाइट निर्मित होता है, तो उसकी एक नियति होती है जो उसे शरीर के किसी खास ऊतक की ओर खींचती है। यह आकर्षण रसायनों के द्वारा क्रियान्वित होता है, जो हमारी कोशिका सतह पर के रिसेप्टर कहलाने वाले विशेष अणुओं से बँध जाते हैं। हमें जब भी इन रासायनिक अणुओं की उपस्थिति का अनुभव होता है, हम उस रसायन के स्रोत की ओर खींचे जाते हैं। इस तरीके से, हड्डी की कोशिकाएँ मोनोसाइट्स को हड्डी के ऊतकों में निवास करने, और औस्टियोक्लास्ट्स में रूपान्तरित होने के लिए बुलाती हैं। मस्तिष्क में मौजूद कोशिकाएँ ऐसे रसायनों का स्राव करती हैं जो मोनोसाइट्स का मस्तिष्क में आकर माइक्रोगलिया बनने के लिए स्वागत करते हैं। जब मुझे अपना पहला खिंचाव महसूस हुआ तब मैं बहुत छोटी था। लगभग जब मैं पैदा ही हुई थी, तभी मुझे पता चल गया थी कि मेरा घर यकृत था। और एक कपफर कोशिका में रूपान्तरित होने के द्वारा यकृत में मौजूद कोशिकाओं की रक्षा करना ही मेरी नियति थी।



मेरा काम सरल है। यह कोई छिपी हुई बात नहीं है कि मैं हमेशा भूखी होती हूँ – मेरी कमर को देखिए, कैसी फैली है! मैं यहाँ शरीर की किसी भी बाहरी एजेन्ट से रक्षा करने के लिए हूँ, और वह मैं उसी तरह करती हूँ जो करने में मैं पारंगत हूँ – मेरे रास्ते में आने वाली हर चीज को खा जाना। मेरे नाम (बृहतभक्षिका कोशिका) का ही मतलब 'बड़ा खानेवाला' होता है और मैं बस उतना ही करती हूँ। आप समझ लीजिए कि बैक्टीरिया (रोगाणु), फन्जाई (फफूँद), परजीवियों और जहरीले पदार्थों की बाहरी दुनिया से लड़ने के लिए,

रणनीतिक दृष्टि से यकृत शरीर के सबसे महत्त्वपूर्ण युद्ध स्थलों में से एक है। यहाँ यकृत में हम निरन्तर खून के साथ, ज्यादातर गट (अन्तड़ी) से, आने वाले पैथोजन्स (पैथोजन्स बीमारियाँ फैलाने वाले जीवरूप होते हैं) की झड़ी का सामना करते हैं। हमारा महत्त्व दर्शाने के लिए ही, हमारी भूमिका का अध्ययन करने वाले वैज्ञानिकों ने प्रयोगशाला के कुछ चूहों के सारी कपफर कोशिकाओं को निकालने के प्रयोग किए। उनके परिणामों ने उन्हें तो चौंका दिया, पर मेरे लिए वे पहले से काफी स्पष्ट थे। सभी चूहे मर गए। यही कारण है कि यहाँ इम्यून सिस्टम (प्रतिरक्षा तंत्र जो शरीर की सेना होता है) में एक कहावत है कि, *"आप फीमर (जो शरीर की सबसे लम्बी हड्डी जो जांघों में होती है) के बगैर तो जिन्दा रह सकते हैं, लेकिन यकृत में कपफर के बिना इसकी कोई सम्भावना नहीं होती।"*



एक मैक्रोफेज का बनाया गया चित्र जब उसे एक जगह स्थिर करके जीमैन्स डाई से रंग दिया गया हो।

मुझे यहाँ खूब संग–साथ मिलता है, क्योंकि यकृत शरीर का वह अंग हैं जिसमें मैक्रोफेजों की आबादी का घनत्व सबसे अधिक होता है। निश्चित ही, हमें अपनी संख्या विशाल रखना पड़ती है, क्योंकि तकरीबन हर वह चीज जो खून या खाने के माध्यम से शरीर में प्रवेश करती है (और ऐसी ढेरों चीजें होती हैं!) सीधे यकृत की ओर आती हैं, जहाँ हम उनका इंतजार करते रहते हैं। आइए, मैं आपको वह प्रक्रिया समझा दूँ जिसके द्वारा हम आपकी उस सबसे रक्षा करते हैं जो नुकसानदायक है और बीमारी पैदा करता है। जैसे ही हम किसी अनजान वस्तु (शायद कोई रोगाणु) को देखते हैं, हम 'फैगोसाइटोसिस' कहलाने वाली एक प्रक्रिया में उसे सब तरफ से घेरकर आच्छादित कर लेते हैं। एकबारगी हमारे भीतर आ जाने पर फिर हमलावरों के बचने की कोई सम्भावना नहीं रहती। हम उन्हें हमारे शरीर के भीतर बनी विशेष थैलियों, जो फैगोसोम्स कहलाती है, में कैद कर लेते हैं। फिर फैगोसोम्स में ऐसे एन्जाइमों और अम्लों का जोरदार घातक प्रवाह आता है जो हमला करने वाले रोगाणु के लगभग हर अंग को तोड़कर खोल लेते हैं और उसे पचा जाते हैं! जब हमारा सामना किसी ऐसे दुश्मन से होता है, जिसे मारना खासतौर पर मुश्किल होता है, तो हम 'ऑक्सीडेटिव बर्स्ट–आक्सीकरण करने वाला विस्फोट' कहलाने वाली प्रक्रिया के द्वारा, अभिक्रिया करने वाले आक्सीजन तथा नाइट्रोजन के रेडिकलों (ऐसे अणु जो बहुत आवेशित और तीव्र अभिक्रिया करने वाले होते हैं) का एक हानिकारक मिश्रण पैदा करते हैं। यदि हमारे अम्ल उन्हें नहीं मार पाते, तो यह आक्सीकरण विस्फोट निश्चित ही मार डालेगा। हाँ, यह जरूर है कि आक्सीकरण का विस्फोट हमें भी क्षति पहुँचाता है और इस आत्मघाती बमबारी की रणनीति को हम केवल सचमुच में कठोर युद्धों में अपनाते हैं। अभिक्रिया करने वाले आक्सीजन और नाइट्रोजन के रेडिकल आसपास के ऊतकों में फटते हैं और आसपास मौजूद सभी मानवीय शारीरिक कोशिकाओं को मार डालते हैं। यही कारण है कि किसी बीमारी से छुटकारा पाना अक्सर बहुत थकाने वाला होता है, वह शरीर को कमजोर कर देता है। इसलिए हमेशा अच्छी तरह विश्राम करने और पूरी तरह स्वस्थ होने का ध्यान रखें, ताकि आपके शरीर को युद्ध में हुई क्षति को सुधारने का समय मिले, क्योंकि तकरीबन हर दिन आपकी रोगरोधक प्रतिरक्षा व्यवस्था द्वारा कोई युद्ध लड़ा जा रहा होता है।

अब, कृपया मुझे आज्ञा दें, मुझे जाकर कुछ बैक्टीरियों को खाना है! कथा कहने वाले सज्जन आपको बाहर का रास्ता दिखा देंगे।

कहिए, क्या हम तंत्रिका तंत्र के आढ़े–टेढ़े रास्तों पर रोलर–कोस्टर जैसी तेज सवारी यात्रा करें? या हृदय की वाहिकाओं में से धीमी गति से बहते जाएँ? अगली मुलाकात तक याद रखिए कि हर दिन के हर पल, प्रतिरक्षा तंत्र में मौजूद बिग एम और उसके मित्र आपके लिए लड़ रहे हैं।



__विग्नेश नारायण एच.__ इण्डियन इंस्टीट्यूट ऑफ साइंसेज, बेंगलुरु में पीएच.डी. के विद्यार्थी हैं। शोधकार्य तथा लोकप्रिय विज्ञान लेखन के प्रति उनका गहरा लगाव है। उनकी विशेषज्ञता का क्षेत्र जीवविज्ञान है और उसमें भी उनका विशेष जोर रोगों की मॉलीक्यूलर बायोलोजी तथा माइक्रोबायोलोजी पर है। आप उनसे vigneshnh@mrdg.iisc.ernet.in पर सम्पर्क कर सकते हैं। __अनुवाद :__ सत्येन्द्र त्रिपाठी

भारत का मंगल ग्रह परिक्रमा अभियान

आनन्द नारायण

भारत के लिए वह गर्व का क्षण था जब भारतीय अन्तरिक्ष अनुसन्धान संगठन (इण्डियन स्पेस रिसर्च ऑर्गेनाइजेशन) ने मंगल ग्रह परिक्रमा अभियान (मार्स ऑर्बिटर मिशन – MOM) का प्रक्षेपण किया, जो अभी तक का ऐसा सबसे पहला अभियान है जिसने सफलतापूर्वक मंगल ग्रह की एक कक्षा में अपना उपग्रह स्थापित किया। मंगल ही क्यों? वह क्या बात है जो सौर मण्डल में हमारे दूसरे पड़ौसी ग्रहों की तुलना में मंगल को हमारे लिए ज्यादा खास बनाती है? किसी अन्य ग्रह की खोजबीन करने के द्वारा हम क्या हासिल करने की आशा करते हैं? यह लेख अन्तर्ग्रहीय अनुसन्धानों से सम्बन्धित ऐसे कुछ सवालों की छानबीन करता है और साथ ही व्यवहार में अन्तरिक्ष विज्ञान की कार्यप्रणाली के बारे में समझ भी निर्मित करता है।

भारत ने 24 सितम्बर, 2014 को अन्तरिक्ष अनुसन्धान के क्षेत्र में अपनी यात्रा का एक प्रमुख पड़ाव हासिल किया। इस दिन भारत के पहले अन्तर्ग्रहीय अभियान एम.ओ.एम. के उपग्रह ने मंगल की कक्षा में प्रवेश किया। इस सफलता ने भारतीय अन्तरिक्ष अनुसन्धान संगठन (इण्डियन स्पेस रिसर्च ऑर्गेनाइजेशन – इसरो) को अमेरिकी, यूरोपीय तथा रूसी अन्तरिक्ष संस्थाओं की बिरादरी में शामिल कर दिया, जो अकेली ऐसी संस्थाएँ हैं जिन्होंने पहले ऐसी ही उपलब्धि हासिल की हैं।

इसरो ने एम.ओ.एम. तथा उसकी 65 करोड़ किलोमीटर की यात्रा का वर्णन एक वैज्ञानिक अभियान के रूप में उतना नहीं किया जितना कि एक प्रौद्योगिकी प्रदर्शन अभियान के रूप में किया। भारत ने ऐसा पहले कभी नहीं किया था। प्रौद्योगिक रूप से हमसे अधिक विकसित जापान और चीन जैसे देशों ने किसी दूसरे ग्रह की कक्षा में उपग्रह स्थापित करने के प्रयास किए थे, पर वे असफल रहे थे।

अन्तर्ग्रहीय यात्रा एक पेचीदा और जोखिमभरा उद्यम होता है। हमसे दस लाख किलोमीटर दूर स्थित एक ग्रह तक अन्ततः पहुँचने के यात्रापथ को निर्धारित करना कोई छोटा जोखिम नहीं होता। यह तथ्य, कि हम एक गतिमान प्रक्षेपण स्थल (पृथ्वी) पर स्थित हैं, और हमारा लक्ष्य ग्रह भी हमारे सापेक्ष गति कर रहा है, यात्रापथ के निर्धारण में निहित गणनाओं को और भी अधिक जटिल बना देता है।

एम.ओ.एम. और उसके पहले चन्द्रयान अभियान की सफलता के द्वारा इसरो ने सुदूर गहन

अन्तरिक्ष में संचार तथा अन्तरिक्ष यान की गति के दिशा नियंत्रण की अपनी प्रौद्योगिकीय क्षमताओं को बखूबी प्रदर्शित किया है। उसके साथ ही उसने अन्तर्ग्रहीय यात्राओं में समर्थ एक विश्वसनीय उपग्रह वाहक के रूप में ध्रुवीय उपग्रह प्रक्षेपण वाहन (पोलर सैटेलाइट लान्च व्हीकल –पी.एस.एल.वी.) की प्रतिष्ठा को भी स्थापित किया है।

इस एक अकेले अभियान की सफलता से हम अनेक वैज्ञानिक सबक सीख सकते हैं। यह लेख उनमें से कुछ को प्रस्तुत करता है।

1. मंगल ही क्यों?

पृथ्वी से दूरी की दृष्टि से मंगल की अपेक्षा शुक्र हमारे अधिक निकट है। फिर इसरो ने अपने पहले अन्तर्ग्रहीय अभियान के लिए शुक्र के बजाय मंगल को क्यों चुना?

इसके दो मुख्य कारण हैं :

1. वैज्ञानिक अनुसन्धान की दृष्टि से शुक्र की तुलना में मंगल से पृथ्वी की साझा विशेषताएँ अधिक हैं। उन भूगर्भीय तथा जैविक प्रक्रियाओं को समझने के लिए जिन्होंने मंगल तथा पृथ्वी के विकास को आकार दिया हो सकता है, मंगल हमें भरपूर अवसर प्रदान करता है। साथ ही पृथ्वी से परे जीवन की खोज करने के लिए भी मंगल एक उत्कृष्ट विकल्प की तरह सामने आता है।
2. शुक्र की तुलना में, बहुत ऊँचाई वाली परिक्रमा कक्षा से मंगल की सतह और उसके उतार–चढ़ावों के स्वरूप की विशेषताओं का अध्ययन करना अधिक आसान है।

1.1 अतीत में पृथ्वी का सहोदर

मंगल की जाँच–पड़ताल करने का सबसे जबर्दस्त कारण यह है कि कई दृष्टियों से अपने अतीत में मंगल की पृथ्वी से नजदीकी समानताएँ थीं। पृथ्वी के ही समान मंगल भी अपनी धुरी के चारों ओर लगभग उतनी ही (24 घण्टे की) अवधि में एक बार घूमता है। इसका मतलब है कि मंगल पर भी दिन और रात का चक्र पृथ्वी के जैसा ही होता है।

पृथ्वी के ही समान, मंगल पर भी ऋतुएँ होती हैं क्योंकि इसकी घूमने की धुरी 25 डिग्री के कोण पर झुकी रहती है। जब इसके एक ध्रुव पर सर्दी की ऋतु होती है तो वहाँ बर्फ जम जाती है और बड़ा आकार ले लेती है। पर गर्मियों की ऋतु में जब उसे लम्बी अवधियों तक अधिक सीधी सूर्य की रोशनी मिलती है, तो यह बर्फ का विस्तृत शिखर पिघल जाता है।

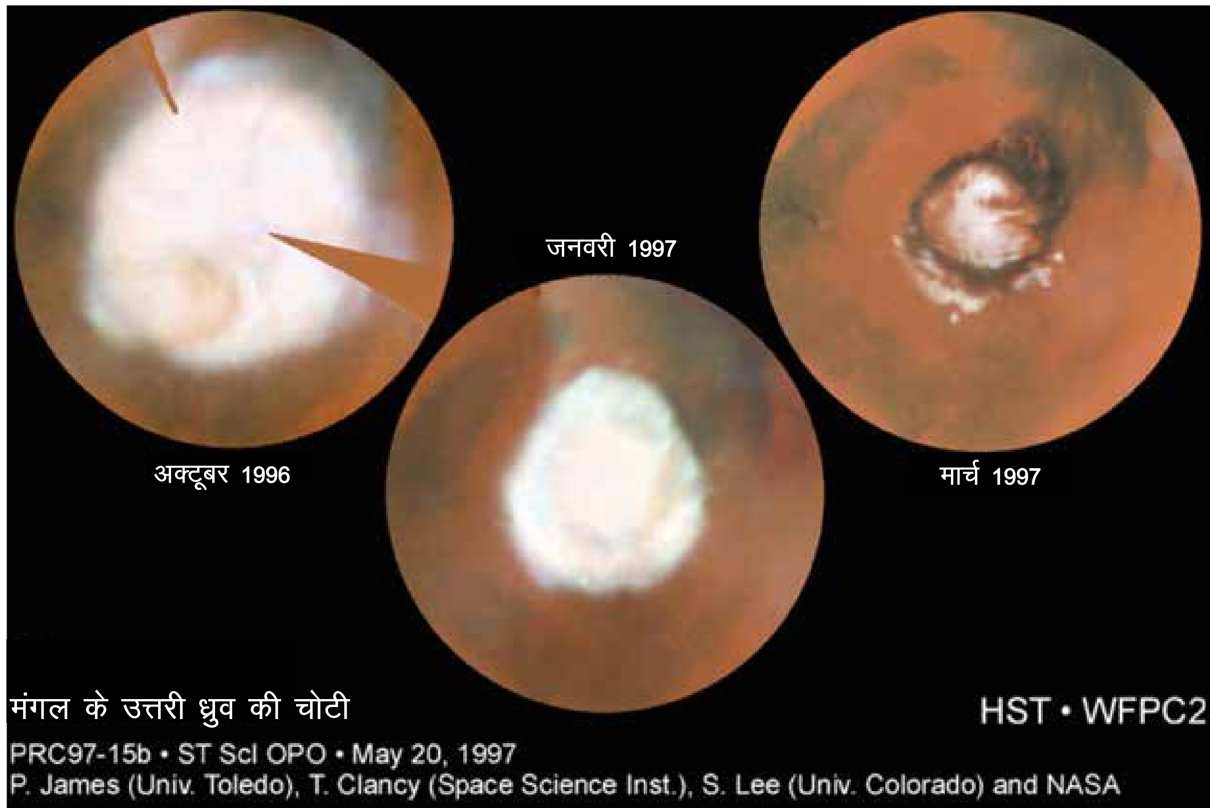
सामने के पृष्ठ पर दिया गया मंगल का चित्र हबल अन्तरिक्ष दूरदर्शी (स्पेस टेलिस्कोप) से लिया गया है। वह दर्शाता है कि किस तरह सर्दी और गर्मी की ऋतुओं में मंगल के उत्तरी ध्रुव पर बर्फ की मोटी परत बढ़ती और घटती है।

वर्तमान में मंगल की सतह सूखी है, लेकिन इस ग्रह पर ऐसे कई भूगर्भीय प्रमाण मिले हैं जो यह संकेत देते हैं कि कभी उसके ऊपर पानी द्रव अवस्था में बहा करता था। उपग्रह से ली गई तस्वीरों में इस ग्रह के कई स्थानों पर प्रवाह से बनी घुमावदार नहरों जैसी संरचनाएँ दिखाई देती हैं। ये नहरें बहुत कुछ पृथ्वी के सूखे नदी तलों, झीलों के डेल्टाओं (मुहानों की भूमि) और जलमार्गों जैसी दिखती हैं जो बहते हुए पानी द्वारा सतह को काटकर बना दी जाती हैं। भूवैज्ञानिकों की परिकल्पना है कि सुदूर अतीत में किसी समय, मंगल पर जलवायु की परिस्थितियाँ द्रव अवस्था में पानी के होने के लिए उपयुक्त थीं। सम्भव है कि तब मंगल की सतह का लगभग एक–तिहाई भाग समुद्रों से भरा रहा हो।

अब स्वाभाविक प्रश्न उठता है कि आखिरकार यह सारा पानी कहाँ चला गया?

इसका कोई निश्चित उत्तर नहीं हैं, हालाँकि इस ग्रह का छोटा आकार मंगल के गोल पिण्ड में हुए रूपान्तरों (एक हल्के गरम और गीले ग्रह से उस ठण्डे और सूखे पर्यावरण वाले ग्रह में बदलना जो हमें आज दिखाई देता है) का एक बड़ा कारण हो सकता है।

वर्तमान में मंगल का वायुमण्डल बहुत पतला है और अधिकांश रूप से वह कार्बन डाईआक्साइड



(CO_2) का बना है। उसका वायुमण्डल इतना पतला है कि मार्स की सतह पर उसका दबाव, पृथ्वी की समुद्री सतह पर वायुमण्डलीय दबाव के केवल लगभग 1/100 वें भाग के बराबर है। हो सकता है कि अतीत में परिस्थितियाँ काफी भिन्न रही हों।

बहुत सम्भावना इस बात की है कि अतीत में मंगल पर CO_2 (जो गर्मी को सोखने वाली ग्रीनहाउस गैस है) का घना वायुमण्डल रहा हो, जिसके कारण उसकी सतह का तापमान पानी को द्रव अवस्था में मौजूद रहने के लिए पर्याप्त गरम हो। समय बीतने के साथ, सौर हवाओं (सोलर विंड्स – सूर्य से निकले आवेशित कणों की सतत धारा जो एक सेकेण्ड में कई सौ किलोमीटर की गति से प्रवाहित होती है) के शक्तिशाली धक्कों ने धीरे–धीरे मंगल के वायुमण्डल से गैसों को हटा दिया होगा। छोटा ग्रह होने के कारण मंगल का चुम्बकीय क्षेत्र बहुत कमजोर था और सोलर हवाओं से ढाल की तरह ग्रह की रक्षा कर सकने के लिए उस प्रकार पर्याप्त नहीं था जैसा कि पृथ्वी का चुम्बकीय क्षेत्र अपने वायुमण्डल की रक्षा करता है। इसके अलावा मंगल की सतह के कम गुरुत्वाकर्षण का भी नतीजा था कि वह उन गैसों को पकड़े नहीं रख सका जो धीरे–धीरे उड़कर अन्तरिक्ष में जा रही थीं।

मंगल के वायुमण्डल के क्षीण होने की इस प्रक्रिया के दृश्यात्मक विवरण के लिए नासा की गोडार्ड वीडियो प्रस्तुतियों को निम्न वैबसाइटों पर देखें :
https://www.youtube.com/watch?v=ogcaSmofPo4

तथा

https://www.youtube.com/watch?v=0_iz5Nt0Qc8

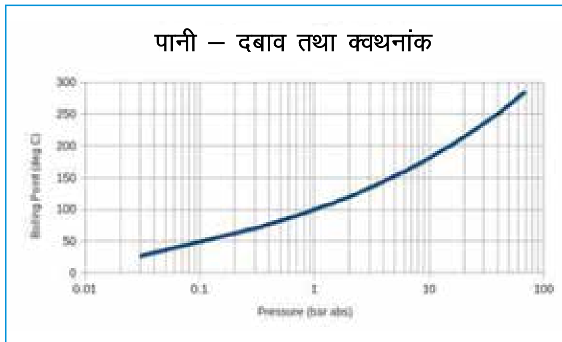
जब वायुमण्डल का घनत्व कम हुआ होगा, तब द्रव अवस्था में मौजूद पानी सीधे–सीधे वाष्प में परिवर्तित होता गया होगा। जिस तापमान पर पानी द्रव अवस्था से वाष्प अवस्था में बदलता है उसे उसका क्वथनांक (ब्वॉयलिंग प्वाइंट) कहते हैं। और वह दबाव पर निर्भर करता है जैसा कि यहाँ एक ग्राफ में दर्शाया गया है। जैसे–जैसे मंगल पर वायुमण्डलीय दबाव कम हुआ होगा, उसके परिवेश का तापमान उसकी सतह पर मौजूद पानी का

वायुमण्डल की हानि को कैसे नापा जाता है?

वर्तमान दौर में मंगल पर जो भी थोड़ा–सा वायुमण्डल शेष रह गया है, उसमें मौजूद ड्यूटीरियम तथा हाइड्रोजन की प्रचुरता के अनुपात (D/H) का मापन करके, वैज्ञानिक उसके क्षय होने की दर का आकलन करने की कोशिश कर रहे हैं। हाइड्रोजन की तुलना में दोगुना भारी होने के कारण ड्यूटीरियम हाइड्रोजन की तुलना में ज्यादा धीमी गति से कम होगा। मंगल के वायुमण्डल में D/H के प्रारम्भिक अनुपात का वास्तविक रूप से सम्भव अनुमान लगाकर और इस अनुपात का वर्तमान मान मापकर, अतीत में वायुमण्डल के क्षीण होने की दर का आकलन किया जा सकता है।

वाष्पीकरण करने के लिए पर्याप्त ऊँचा रहा होगा। इस प्रकार से उत्पादित पानी की समस्त वाष्प बाहरी अन्तरिक्ष में निकल गई होगी।

हालाँकि मंगल के धरातल का अधिकांश पानी वाष्प बनकर उड़ चुका है, वैज्ञानिकों का अनुमान



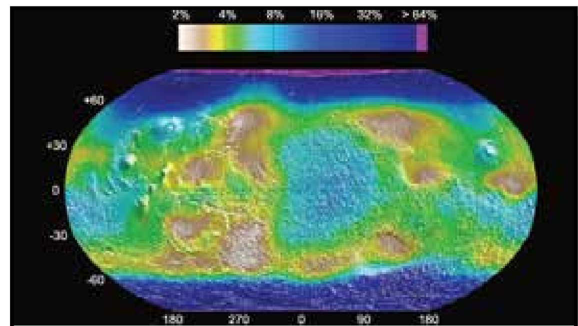
है कि मंगल की सतह से कई हजार मीटर नीचे उसके अन्दर द्रव अवस्था में पानी के खासे बड़े भण्डार अभी भी मौजूद हो सकते हैं। इस पानी के महत्त्वपूर्ण अंश इस ग्रह के ध्रुवीय क्षेत्रों में लगभग 60 डिग्री उत्तर तथा दक्षिण के अक्षांश के परे स्थित हैं, जैसा कि अगले चित्र में दर्शाया गया है।

जीवन को जैसा हम यहाँ पृथ्वी पर जानते हैं, उसके प्रकट होने तथा उसके विकास के लिए पानी को नितान्त आवश्यक माना जाता है।

द्रव अवस्था को लाँघते हुए, सीधे बर्फ से वाष्प बनना

वह तापमान जिस पर बर्फ पानी में बदलता है उसे पानी का गलनांक (मैल्टिंग पाइंट) कहते हैं और जिस तापमान पर पानी वाष्प में बदलता है उसे उसका क्वथनांक (बॉयलिंग पाइंट) कहते हैं। अवस्था परिवर्तन के ये दोनों तापमान परिवेश के वायुमण्डलीय दबाव पर निर्भर करते हैं। कम दबाव की स्थितियों में गलनांक तथा क्वथनांक, दोनों ही घट जाते हैं। मंगल की सतह पर दबाव पृथ्वी के समुद्री धरातल पर के वायुमण्डलीय दबाव के 1% से भी कम है। ऐसे कम दबाव की स्थितियों के अन्तर्गत जब ध्रुवीय बर्फ के शिखर पिघलते हैं, तो बर्फ में मौजूद CO_2 तथा H_2O दोनों ही सीधे अपने वाष्प रूप में परिवर्तित हो जाते हैं। इस प्रक्रिया को उत्सादन (सबलिमेशन) कहते हैं।

इसलिए मंगल पर पानी खोजना या उसकी मौजूदगी का कोई प्रमाण खोजना, मंगल के सभी अभियानों का एक प्रमुख लक्ष्य रहा है।



मंगल के पानी का मानचित्रः यह मंगल के गोल पिण्ड की मिट्टी का मानचित्र है जो उसमें निहित पानी की मात्रा की निचली सीमाएँ दर्शाता है। इन मात्राओं के अनुमान वहाँ हाइड्रोजन की विपुलता के आधार पर निर्धारित किए गए हैं, जिसे नासा के मार्स ऑडेसी अन्तरिक्षयान के गामा किरणों के स्पैक्ट्रोमीटर कक्ष में उसके न्यूट्रोन स्पैक्ट्रोमीटर घटक के द्वारा नापा गया है। पानी–द्रव्यमान अनुपातों के सर्वाधिक मान, 30 प्रतिशत से अधिक से लेकर 60 प्रतिशत से काफी ज्यादा तक, उसके ध्रुवीय क्षेत्रों में अर्थात उत्तर या दक्षिण में 60 डिग्री अक्षांशों के परे स्थित हैं। आभार : नासा।



मंगल के गोले का सर्वेक्षण करने वाला (मार्स ग्लोबल सर्वेयर) रोबोट युक्त अन्तरिक्ष यान, जो वर्तमान में मंगल की परिक्रमा कर रहा है, से लिया गया फोटोग्राफ। ग्रह की सतह पर अनेक नालियाँ दिखाई दे रही हैं जो पृथ्वी पर मौजूद प्रवाह मार्गों के ही समान हैं। ये निशान अतीत में मंगल पर पानी के प्रवाह का परिणाम हो सकते हैं। फोटो आभार : जेपीएल, नासा



यूरोपियन स्पेस एजेंसी के मार्स एक्सप्रेस यान पर लगे हाई रिजोल्यूशन स्टीरियो कैमरे से लिया गया मंगल की सतह का फोटोग्राफ। इस तस्वीर में, किसी समय ग्रह की सतह पर बहने वाले पानी द्वारा बनाई गई प्रवाही नालियों के साथ ही, हम कुछ खड्डों को भी देख सकते हैं जो सम्भवतः क्षुद्र ग्रहों के मंगल से टकराने के कारण बने होंगे। आभार : ईएसए/डीएलआर/एफयू बर्लिन (जी. न्यूकम)

1.2 विहंगम दृष्टि से दिखाई देने वाला नीचे का दृश्य

शुक्र की अपेक्षा मंगल को अधिक वांछनीय लक्ष्य बनाने का एक अन्य मजबूत कारण है कि एकबारगी अन्तरिक्ष यान के मंगल की एक कक्षा में स्थापित हो जाने के बाद, इस ग्रह की सतह की बनावट और उसकी विशेषताओं के बारे में जानकारी एकत्रित करना काफी सुविधाजनक होता है।

शुक्र पर बहुत घना वायुमण्डल है। शुक्र की सतह पर उसके वायुमण्डल के कारण पड़ने वाला दबाव, पृथ्वी के समुद्र की सतह के वायुमण्डलीय दबाव से 90–100 गुना अधिक होने का अनुमान है। घने बादलों की कई परतें उसकी सतह को एक मोटे कम्बल की तरह घेरे रहती हैं। अधिक ऊँचाई पर उस ग्रह की परिक्रमा करने वाले किसी अन्तरिक्ष यान पर लगे उपकरण इस अपारदर्शी आवरण में से झाँककर एक स्पष्ट विहंगम दृश्य देख नहीं देख सकेंगे। किसी भी परिक्रमा अभियान की वैज्ञानिक सम्भावनाओं के मार्ग में यह एक बड़ी बाधा है।

शुक्र का वायुमण्डल सतह पर उतरने वाले अन्तरिक्ष यानों के लिए अनुकूल नहीं है। शुक्र के वायुमण्डल में भारी मात्राओं में मौजूद CO_2 ने ग्रह को गरमाने का शक्तिशाली प्रभाव (ग्रीनहाउस इफैक्ट) पैदा कर दिया। शुक्र की सतह पर औसत तापमान 450 डिग्री सेन्टीग्रेड है, जो इसे सौर मण्डल का सबसे गरम, यहाँ तक कि बुध से भी अधिक गरम, ग्रह बना देता है। वहाँ बहुत ताकतवर हवाएँ भी रहती हैं जो 300 किलोमीटर प्रति घण्टे या उससे भी अधिक गति से चलती हैं। उनके कारण वायुमण्डल बहुत उथल–पुथल वाला होता है। ऐसी कठिन और प्रतिकूल परिस्थितियों के चलते सतह पर उतरने वाले यानों पर लगे उपकरणों के लिए किसी भी अवधि तक उचित ढंग से अपना काम कर सकना बहुत कठिन होता है।

इसकी तुलना में मंगल, उसके पतले धुँए जैसे वायुमण्डल में से झाँककर नीचे सतह तक का पूरा दृश्य देख सकने की सुविधा प्रदान करता है।

प्रक्षेपण की समय–खिड़की

प्रक्षेपण का समय एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण निर्णय होता है जो कई कारकों के आधार पर निर्धारित होता है। प्रक्षेपण की एक आदर्श तारीख वह होती है जब अन्तरिक्ष यान को उसके नियोजित यात्रा पथ पर भेजने के लिए सबसे कम मात्रा में प्रोपैलेंट

(राकेट को तीव्र गति से धकेलने वाला ईंधन) की जरूरत होती है। ईंधन पूरे अभियान के वजन को बढ़ा देता है और ईंधन बहुत खर्चीला भी होता है।

प्रक्षेपण की दिशा अभियान की लागतों पर प्रभाव डालने वाली एक महत्त्वपूर्ण कारक होती है। हम अपने भोलेपन में सोच सकते हैं कि बाह्य अन्तरिक्ष में किसी लक्ष्य तक जाने के लिए सबसे सक्षम तरीका पृथ्वी से राकेट को सीधे इच्छित दिशा में प्रक्षेपित कर देना है। लेकिन सीधी रेखा जैसा यात्रा पथ ऊर्जा को खर्च करने का बहुत अक्षम और खर्चीला तरीका है।

अन्तरिक्ष यान की पूरी यात्रा में से, उसके प्रारम्भिक चरणों में ही उसके राकेट का सर्वाधिक ईंधन खर्च हो जाता है, जब प्रक्षेपण वाहन उठने की और तीव्र गति से पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण क्षेत्र से निकल भागने की कोशिश कर रहा होता है। इस चरण में कुछ विकल्पों को चुनकर बहुत–सा ईंधन बचाया जा सकता है।

1. पृथ्वी सूर्य के चारों ओर 1,00,000 किलोमीटर प्रति घण्टा (लगभग 30 किमी/सेकेण्ड) की गति से चक्कर लगा रही होती है। यदि प्रक्षेपण वाहन की गति को बढ़ाते हुए उसी दिशा में धकेल दिया जाए जिसमें पृथ्वी सूर्य का चक्कर लगा रही हो तो उससे वाहन की गति में बड़ी प्रारम्भिक बढ़त मिल जाएगी (वैसी ही जैसी बढ़त हमें तब मिलती है, जब हम किसी चलते हुए वाहन में से कूदते हैं और जिसके कारण हम कुछ गति से उसी दिशा में कुछ दूर तक दौड़ते रहते हैं)।
2. पृथ्वी अपनी धुरी पर पश्चिम से पूर्व की ओर घूमती है। भूमध्य रेखा पर, पृथ्वी की सतह 1600 किलोमीटर प्रति घण्टे की रफ्तार से घूम रही होती है। भूमध्य रेखा पर स्थित किसी प्रक्षेपण स्थल से यदि राकेट को पूर्व की दिशा में प्रक्षेपित किया जाए, तो पृथ्वी के घूमने की गति का लाभ मिलने से उस राकेट का वेग बढ़ जाता है।

इसलिए, पृथ्वी के घूमने (स्पिन) की और सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाने की उसकी दिशा में ही प्रक्षेपण करने से, प्रक्षेपण वाहन अपनी ऊँचाई बढ़ाने के प्रयास में इन गतियों का सर्वाधिक लाभ ले सकता है।

मंगल पर अन्य आकर्षण

मंगल के गोल पिण्ड की धूल भरी आँधियाँ : उपग्रह और दूरदर्शी से लिए गए अवलोकनों ने दर्शाया है कि बड़े पैमाने पर चलने वाली धूल भरी आँधियाँ मंगल पर बार–बार घटने वाली घटनाएँ हैं। वे कुछ घण्टों में ही निर्मित हो जाती हैं और कुछ दिनों के ही भीतर पूरे ग्रह पर छा जाती हैं। एकबारगी जब ये धूल भरी आँधियाँ बन जाती हैं, तो फिर ग्रह की

प्रक्षेपण का उचित अवसर दर्शाने वाला रेखाचित्र

पृथ्वी की कक्षा
अनुसन्धान उपकरण के पहुँचने के समय मंगल की स्थिति
V_e = 29.7 km/s
मंगल की कक्षा
V_m = 24.1 km/s
अनुसन्धान उपकरण के प्रक्षेपण के समय मंगल की स्थिति
पृथ्वी की कक्षा
V_e = 29.7 km/s
मंगल की कक्षा
V_m = 24.1 km/s
अनुसन्धान उपकरण के प्रक्षेपण के समय मंगल की स्थिति

सतह के कमजोर गुरुत्वाकर्षण बल के कारण, उस धूल को वापिस बैठने में कई सप्ताह लग जाते हैं। यह स्पष्ट नहीं है कि बहुत पतला वायुमण्डल होने के बावजूद ये आँधियाँ इतनी विराट कैसे हो जाती हैं और कैसे इतने लम्बे समय तक मंगल पर बनी रहती हैं।



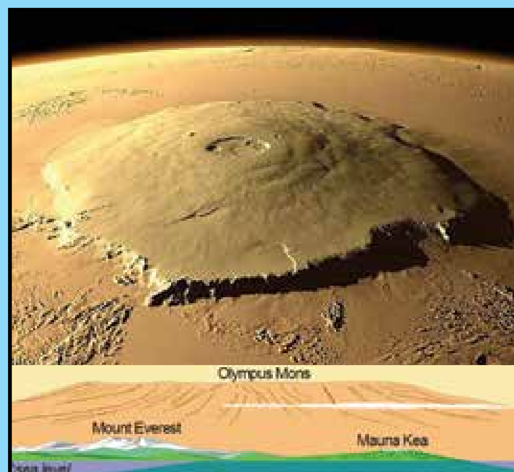
विशाल कैनियन्स (घाटियाँ) : सौर मण्डल में सबसे बड़ी कैनियन (घाटी) मंगल पर ही है। मैरीनर वैली (इसका नाम मैरीनर 9 अन्तरिक्ष यान के नाम पर पड़ा जिसने इस घाटी को खोजा था) कहलाने वाली यह विशाल घाटी, मंगल की मध्य रेखा के किनारे–किनारे चलती है। यह लगभग 4000 किलोमीटर लम्बी है अर्थात उतनी ही लम्बी जितना एशिया महाद्वीप है। यह घाटी अतीत में आई बाढ़ों के कई शेष चिन्ह दर्शाती है, जिनमें गहरी प्रवाह नालियाँ भी हैं जो किसी समय ऊपर की सतह से इस खाई में तेजी से बहकर आने वाले पानी द्वारा काटकर बनाई गई हो सकती हैं।



(i) मंगल की मैरीनर घाटी तथा; (ii) चित्रकार के द्वारा दर्शाई गई मैरीनर घाटी : मंगल की मध्य रेखा के किनारे दिखने वाला खाई का क्षेत्र ही मैरीनर घाटी है, जो सौर मण्डल की सबसे बड़ी घाटी है। अगला चित्र एक चित्रकार द्वारा चित्रित मैरीनर घाटी की छवि है। आभार : नासा।



ज्वालामुखीय पर्वत : सौर मण्डल में सबसे विशाल पर्वत होने का गौरव भी मंगल को ही प्राप्त है। इसके विराट पर्वत माउण्ट ओलम्पस की चोटी की ऊँचाई 22 किलोमीटर है और आधार का घेरा 600 किलोमीटर का है। यह पृथ्वी के सबसे ऊँचे पर्वत माउण्ट एवरेस्ट से तीन गुना बड़ा है। मंगल पर बड़ी संख्या में बुझ चुके ज्वालामुखीय पर्वत मौजूद हैं और उनमें भी माउण्ट ओलम्पस सबसे ऊँचा है। मंगल पर ओलम्पस मोन्स नाम का एक ढाल ज्वालामुखी (शील्ड वोल्केनो) भी है। उग्रतापूर्वक पिघली हुई राख और लावा उगलने के बजाय, ढाल ज्वालामुखी पिघले हुए पदार्थ के धीरे–धीरे उनकी ढलानों पर नीचे बहते हुए जम जाने के कारण निर्मित होते हैं।



मंगल का माउण्ट ओलम्पस 1 : सौर मण्डल की सबसे ऊँची चोटी माउण्ट ओलम्पस मंगल पर है। नासा के एक उपग्रह से लिया गया यह चित्र अब बुझ चुके इस ज्वालामुखीय पर्वत को नजदीक से दिखाता है। आभार : नासा

प्रक्षेपण वाहन तथा ले जाया जाने वाला एम.ओ.एम. उपकरण समूह (पेलोड)

हर उपग्रह या अन्तरिक्ष यान को वांछित कक्षा में धकेलकर ले जाने और स्थापित करने के लिए एक प्रक्षेपण वाहन की आवश्यकता होती है। आमतौर पर प्रक्षेपण वाहन मानव–रहित राकेट होते हैं। मंगल ग्रह परिक्रमा अभियान (मार्स ऑर्बिटर मिशन–एम.ओ.एम.) को ध्रुवीय उपग्रह प्रक्षेपण वाहन (पोलर सैटेलाइट लॉन्च व्हीकल–पी.एस.एल.वी.) के द्वारा प्रक्षेपित किया गया। पी.एस.एल.वी. में शक्तिशाली ईंधन (प्रोपैलेंट) भण्डार वाले चार अलग–अलग खण्ड होते हैं, जो उड़ान के विभिन्न चरणों में प्रज्वलित होकर काम करते हैं। उपग्रह को पेलोड (ले जाया जाने वाला भार) कहा जाता है। पी.एस.एल.वी.में यह पेलोड राकेट के चौथे और आखिरी खण्ड से जुड़ा रहता है (दिए गए फोटोग्राफ को देखें)।

उपग्रह को एक ऊष्मा कवच (कई पदार्थों से निर्मित एक मजबूत परत जो दो अर्ध–भागों में बँटी रहती है जिनको बाद में जोड़ दिया जाता है) के भीतर बन्द किया जाता है। इस ऊष्मा कवच में भीतर ताप और ध्वनि को सोखने वाली परतों के गद्देनुमा पैड लगे रहते हैं। जब राकेट आवेग हासिल करता है तो उसके जो बाहरी भाग पृथ्वी के वायुमण्डल के सीधे सम्पर्क में आते हैं, वे उनके और वायुमण्डल के बीच के घर्षण के कारण कई हजार डिग्री के तापमान तक गरम हो जाते हैं। ऊष्मा कवच अवरोध बनकर इस वायुगतिकीय ताप (ऐरोडायनेमिक हीटिंग) से उपग्रह की रक्षा करता है।

राकेट का हर खण्ड उसकी उड़ान के दौरान अलग–अलग समय पर प्रज्वलित होता है, पूरा जलकर चुक जाता है और फिर अलग होकर गिर जाता है। सबसे आखिर में पी.एस.एल.वी.राकेट के चौथे खण्ड से वह ऊष्मा कवच वाला हिस्सा अलग होता है जिसके भीतर पेलोड रहता है। यह अलग होना सामान्यतया उड़ान प्रारम्भ होने के 3 मिनट के भीतर होता है जब राकेट 130 किलोमीटर की ऊँचाई हासिल कर लेता है।



पी.एस.एल.वी.–सी 25 का फोटोग्राफ, यह वह राकेट है जो मंगल परिक्रमा अभियान को ले गया था। इस राकेट की ऊँचाई 45 मीटर है, व्यास 3 मीटर है और वजन लगभग 300 टन है। यह राकेट 1500 किलोग्राम भार तक के पेलोड को जियोसिंक्रोनस ऑर्बिट (पृथ्वी के समान गति से घूमने वाली कक्षा, जो पृथ्वी के सापेक्ष स्थिर रहती है) में स्थापित कर सकता है।
©: इसरो

मंगल ग्रह परिक्रमा अभियान के उपग्रह में पाँच वैज्ञानिक उपकरण लगे हुए हैं। ये पाँच उपकरण तीन ऐसे व्यापक विषय क्षेत्रों का अध्ययन करने के लिए हैं जिन सभी का सम्बन्ध मंगल की जलवायु तथा उसकी भूगर्भीय संरचना को बेहतर ढंग से समझने से है। पेलोड के इन उपकरणों और उनके वैज्ञानिक उद्देश्यों का नीचे वर्णन किया गया है।

1. लीमैन ऐल्फा फोटोमीटर, जिसे संक्षेप में लैप कहा जाता है, में एक ऐसा संसूचक (डिटैक्टर) है जो अल्ट्रवायलैट फोटोनों (पराबैंगनी प्रकाश कणों) की मौजूदगी को पकड़ सकता है। इस उपकरण में मंगल के वायुमण्डल में ड्यूटीरियम और हाइड्रोजन की प्रचुरता का मौजूदा अनुपात मापने की क्षमता



मंगल परिक्रमा अभियान का अन्तरिक्ष यान (चित्र में वह सोने की परत से ढँका हुआ दिखाई दे रहा है) जिसे पी.एस.एल.वी.–सी 25 के चौथे खण्ड से जोड़ा जाता है और जो यहाँ ऊष्मा कवच के भीतर बन्द होने के लिए तैयार है। © : इसरो

होती है। यह माप इसका एक अनुमान प्रदान करेगा कि मंगल का वायुमण्डल कितनी तेजी से क्षीण हो रहा है।

2. मार्शियन ऐक्सोस्फैरिक न्यूट्रल कम्पोजीशन ऐनालाइजर, जो मेनका (एम.ई.एन.सी.ए.) भी कहलाता है, एक मास (द्रव्यमान) स्पेक्ट्रोमीटर उपकरण है जो मंगल के वायुमण्डल में मौजूद विभिन्न अणुओं के द्रव्यमानों को माप सकता है और वायुमण्डल की रासायनिक संरचना का भी विश्लेषण कर सकता है।

3. मंगल पर मीथेन की उपस्थिति पकड़ने वाला एक उपकरण (मीथेन सैंसर) : इसे मंगल के वायुमण्डल में मीथेन के अणुओं की थोड़ी–सी भी मौजूदगी की तलाश करने के लिए लगाया गया है। यह एक अरब अणुओं में मीथेन के एक अणु जितने अत्यधिक कम सान्द्रण स्तर तक उस गैस की उपस्थिति को भी पकड़ सकता है। मंगल पर मीथेन की मौजूदगी का प्रमाण मिलना उस पर सूक्ष्मजीवों (माइक्रोब) के रूप में जीवन की उपस्थिति का संकेत दे सकता है। पृथ्वी पर मौजूद मीथेन का खासा बड़ा हिस्सा जैविक स्रोतों से पैदा हुआ है। कुछ सूक्ष्म–जीवन रूप, जो मीथेनोजेन्स कहलाते हैं, अपनी पाचन की रसक्रिया के परिणामस्वरूप मीथेन पैदा करते हैं। यदि मंगल का वातावरण भी सूक्ष्मजीवों के जीवन को सहारा देता है तो वहाँ पर भी मीथेन का ऐसा जैविक स्रोत होना सम्भव है।

4. मंगल के लिए एक कलर कैमरा : यह एक 2000 x 2000 पिक्सेल का ऐरे (लैंसों की शृंखला वाला) कैमरा है जो, उन्हीं ऊर्जा स्तरों पर जिन पर सामान्य रूप से मनुष्य की आँखों को चीजें दिखाई देती हैं, मंगल की सतह की हाई रिजोल्यूशन वाली तस्वीरें ले सकता है। कैमरे से ली गई तस्वीरों से हम मंगल की सतह पर मौजूद आकारों और विशेषताओं को 25 किलोमीटर की दूरी तक के पैमाने पर देख सकते हैं।

5. थर्मल इन्फ्रारैड इमेजिंग स्पेक्ट्रोमीटर : इस उपकरण का प्रयोजन मंगल की सतह पर मौजूद खनिजों का मानचित्र बनाना है। इस काम को यह उस थर्मल रेडियेशन (अर्थात ऊष्मा के विकिरण) को पकड़कर करता है, जिसे सूर्य के प्रकाश से तपी हुई मंगल की सतह उत्सर्जित करती है। स्पेक्ट्रोमीटर में प्रवेश करने वाले इन्फ्रारैड प्रकाश को फोटोन ऊर्जाओं के छोटे–छोटे हिस्सों में अलग कर दिया जाता है और उनमें से हर ऊर्जा पर एक चित्र निर्मित होता है।

निष्कर्ष

मंगल ग्रह का अनुसन्धान एक चल रही गाथा है। जब आप इस लेख को पढ़ रहे हैं, तब भी कक्षा में परिक्रमा करने वाले कई उपग्रह और रोबोट मंगल का सर्वेक्षण कर रहे हैं। वे मंगल के वायुमण्डल, उसकी जलवायु, सतह के उतार–चढ़ावों, और उसकी मिट्टी के संघटन के बारे में विस्तृत जानकारी प्रदान कर रहे हैं, साथ

ही वे पूरे समय मंगल पर पानी और सूक्ष्मजीवन रूपों की मौजूदगी की भी खोज कर रहे हैं। सितम्बर 2014 से भारत का मंगल ग्रह परिक्रमा अभियान भी इस सामूहिक प्रयास में शामिल हो गया है।

सौर मण्डल के सभी ग्रहों और अन्य छोटे पिण्डों में से, अभी एक पृथ्वी ही है जिसने जीवन को सहारा दिया है। हमारा ग्रह कैसे जीवन के लिए एक सुरक्षित शरण–स्थल के रूप में विकसित हुआ, इसकी प्रक्रिया अभी भी पूरी तरह नहीं समझी गई है। इसका उत्तर पाने की एक सम्भावना मंगल जैसे ग्रहों की जाँच–पड़ताल करने में दिखाई देती है, जो किसी समय जीवन के रह सकने लायक संसार थे, पर जो धीरे–धीरे उस स्थिति से दूर चले गए।

मंगल के बारे में और भी बहुत कुछ पढ़ने के लिए इस वैबसाइट को देखें :
http://mars.nasa.gov/allaboutmars/



अन्तर्ग्रहीय अभियानों के प्रकार

अन्तर्ग्रहीय अन्तरिक्ष यान निम्न तीन में से किसी एक श्रेणी के या एक से अधिक श्रेणियों के अन्तर्गत आते हैं : (क) उड़ते हुए पास से गुजर जाने वाले (फ्लाईबाई) अन्तरिक्ष यान, (ख) कक्षा में चक्कर लगाने वाले अन्तरिक्ष यान (ऑर्बिटर्स), (ग) धरातल पर उतरने वाले अन्तरिक्ष यान (लैंडर्स)

(क) फ्लाईबाई अन्तरिक्ष यान : ये ऐसे अभियान होते हैं जिनका यात्रा पथ उन्हें अन्त में लक्ष्य ग्रह से दूर ले जाता है। वे कभी भी किसी ग्रह की परिक्रमा कक्षा में कैद नहीं हो जाते। उन्हें अपेक्षित जानकारी एकत्रित करने का एकमात्र अवसर तब मिलता है, जब वे उन आकाशीय पिण्डों के पास से गुजरते हैं जिनमें अभियान की दिलचस्पी होती है। उनका विशेष लाभ यह है कि उसी अन्तरिक्ष यान को एक से अधिक चीजों (ग्रहों, चन्द्रमाओं, क्षुद्र ग्रहों आदि) के बारे में जानकारी हासिल करने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है, बशर्ते कि अन्तरिक्ष यान का यात्रा पथ उसे उस पिण्ड के पास तक ले जाए। प्रारम्भिक अन्तर्ग्रहीय अभियान प्रमुख रूप से फ्लाईबाई ही थे। उनके कुछ उदाहरण हैं : वॉएजर 1,2, मैरीनर 1–10, पायोनियर 10 एवं 11।

(ख) ऑर्बिटर्स : ये ऐसे अन्तरिक्ष यान होते हैं जो ग्रहों की या ग्रहों के चन्द्रमाओं की एक परिक्रमा कक्षा में प्रवेश करते हैं। बाद के वर्षों के कई मंगल अभियान, जैसे कि मार्स ग्लोबल सर्वेयर, मार्स ऑडेसी और मेवन (एमएवीईएन), ऑर्बिटर्स की श्रेणी में ही आते हैं। इसरो का चन्द्रयान तथा मंगल परिक्रमा अभियान भी इसी श्रेणी में आते हैं।

(ग) लैंडर्स : ये ऐसे अन्तरिक्ष यान होते हैं जिन्हें किसी ग्रह की सतह पर उतरने के लिए उपयुक्त बनाया जाता है। लैंडर्स पर अक्सर कैमरे लगे रहते हैं जो सतह के स्तर पर उसके उतार–चढ़ावों और आकारों की तस्वीरें ले सकते हैं। उन पर ऐसे उपकरण भी होते हैं जो ग्रह की सतह से मिट्टी या चट्टान के नमूने लेकर उनका वहीं विश्लेषण करने में सक्षम होते हैं। लैंडर का ही एक अतिरिक्त स्वरूप रोवर (इधर–उधर घूमने वाला उपकरण) होता है, जो वास्तव में एक रोबोट नुमा अन्तरिक्ष यान होता है, जिसकी रचना इधर–उधर घूमते हुए, ग्रह के अधिक बड़े क्षेत्र का सर्वेक्षण करने के लिए की जाती है।

लैंडर्स को आमतौर पर ऑर्बिटर्स से उतारकर संचालित किया जाता है। जुड़वाँ रोवर्स, स्पिरिट तथा अपार्चुनिटी, इनके उत्तम उदाहरण हैं।

मंगल के अनुसन्धान का इतिहास

मनुष्य के द्वारा मंगल ग्रह का अनुसन्धान बहुत पहले 1960 के दशक में आरम्भ हुआ था। 1960 और 1970 के बीच के दस सालों में, तब के सोवियत रूस तथा अमेरिका के द्वारा इसके लिए 12 प्रयास किए गए। लगातार कई असफलताओं के बाद, नवम्बर 1964 में अमेरिका का अन्तरिक्ष यान मैरीनर 4 पहला ऐसा (फ्लाईबाई) अन्तरिक्ष यान था जो सफलतापूर्वक मंगल के निकट से गुजरा।

तब से ऐसे अभियानों का सिलसिला चलता रहा है, जिनमें से कुछ बहुत सफल और कुछ निराशाजनक रहे हैं। नीचे दी गई तालिकाएँ मंगल के अनुसन्धानों के समयबद्ध सिलसिले के इतिहास को संक्षेप में प्रस्तुत करती हैं। *(जानकारी साभार : किरन मोहन, लिक्विड प्रोप्लशन सिस्टम्स सेण्टर, इसरो)*

Decade	No of Attempts	No of Success/ Partial Success	No of Failures
1960s	12	3	9
1970s	11	6 (Including 1st orbiter)	5
1980s	2	1	1
1990s	8	3	5
2000s	8	7	1
2010s	3	1	2
Total	**44**	**21 (47%)**	**23(53%)**

1960 – 1970

Mission	Country	Date of Launch	Mission Type	Status
Mars 1M No.1	USSR	10 Oct 1960	Flyby	Launch Failure
Mars 1M No.2	USSR	14 Oct 1960	Flyby	Launch Failure
Mars 2MV-4 No.1	USSR	24 Oct 1960	Flyby	Launch Failure
Mars 1	USSR	1 Nov 1960	Flyby	Some data collected. Lost contact before reaching Mars, flyby at approx. 1,93,000 km
Mars 2MV 3 No.1	USSR	4 Nov 1960	Lander	Failed to leave Earth's orbit

Mission	Country	Date of Launch	Mission Type	Status
Mariner 3	USA	5 Nov 1964	Flyby	Failure during launch disrupted trajectory
Mariner 4	USA	28 Nov 1964	Flyby	Success
Zond 2	USSR	30 Nov 1964	Flyby	Communication lost before Mars transfer
Mariner 6	USA	25 Feb 1969	Flyby	Success
Mariner 7	USA	27 Mar 1969	Flyby	Success
Mars 2M No.521	USSR	27 Mar 1969	Orbiter	Launch Failure
Mars 2M No.522	USSR	2 April 1969	Orbiter	Launch Failure

1970 – 1980

Mission	Country	Date of Launch	Mission Type	Status
Mariner 8	USA	8 May 1971	Orbiter	Launch Failure
Kosmos 419	USSR	10 May 1971	Orbiter	Launch Failure
Mars 2	USSR	19 May 1971	Orbiter, Lander, Rover	Orbiter-Success (27/11/1971) Lander & Rover Crashed on to Mars Surface
Mars 3	USSR	28 May 1971	Orbiter, Lander, Rover	Orbiter-Success (2/12/1971) Lander & Rover partial success as it soft landed, but transmission lost within 15 minutes (First Successful touch down)

Mission	Country	Date of Launch	Mission Type	Status
Mariner 9	USA	30 May 1971	Orbiter	Success (first successful Orbiter 13/11/1971)
Mars 4	USSR	21 July 1973	Orbiter	Close Flyby only
Mars 5	USSR	25 July 1973	Orbiter	Partial Success Entered Orbit but failed within 9 days
Mars 6	USSR	5 August 1973	Lander	Partial success. Data returned during descent but not after landing on Mars

Mission	Country	Date of Launch	Mission Type	Status
Mars 7	USSR	9 Aug 1973	Lander	Landing probe separated prematurely; entered a Sun centered orbit. Failure
Viking 1	USA	20 Aug 1975	Orbiter, Lander	Success
Viking 2	USA	9 Sep 1975	Orbiter, Lander	Success

1980 – 1990

Mission	Country	Date of Launch	Mission Type	Status
Phobos 1	USSR	7 July 1988	Orbiter, Lander	Contact Lost during transfer orbit
Phobos 2	USSR	10 July 1988	Orbiter, Landers	Orbiter Successfully entered orbit and returned data Lost contact just before deploying landers

1990 – 2000

Mission	Country	Date of Launch	Mission Type	Status
Mars Observer	USA	25 Sep 1992	Orbiter	Lost contact before arrival on Mars
Mars Global Surveyor	USA	7 Nov1996	Orbiter	Success
Mars 96	USA	16 Nov 1996	Orbiter, Lander, Penetrator	Launch Failure
Mars Pathfinder	USA	4 Dec 1996	Lander, Rover	Success (First successful Rover)
Nozomi (Planet-B)	Japan	3 July 1998	Orbiter	Never Entered Orbit

Mission	Country	Date of Launch	Mission Type	Status
Mars Climate Orbiter	USA	11 Dec 1998	Orbiter	Crashed on surface. Error in the computer program used for correction thrusters
Mars Polar Lander	USA	3 Jan 1999	Lander	Crash landed on surface
Deep Space 2			Hard Landers	

2000 – 2010

Mission	Country	Date of Launch	Mission Type	Status
2001 Mars Odyssey	USA	7 April 2001	Orbiter	Success
Mars Express / Beagle 2	ESA	2 June 2003	Orbiter, Lander	Orbiter Success, Landing failure for Lander
MER-A Spirit	USA	10 June 2003	Rover	Success
MER-B Opportunity	USA	7 July 2003	Rover	Success
Rosetta	ESA	2 March 2004	Gravity assist to comet	Success
Mars Reconnaissance Orbiter	USA	12 Aug 2005	Orbiter	Success
Phoenix	USA	4 Aug 2007	Lander	Success
Dawn	USA	7 July 2003	Gravity assist to Vesta	Success

2010 – Till Now

Mission	Country	Date of Launch	Mission Type	Status
Fobos-Grunt	Russia	8 Nov 2011	Lander, Sample Return	Failed to leave Earth orbit. Fell back to Earth
Yinghuo-1	China		Orbiter	
Curiosity	USA	26 Nov 2011	Rover	Success
Mars Orbiter Mission	India	5 Nov 2013	Orbiter	Success
MAVEN	USA	18 Nov 2013	Orbiter	Success

Further reading

1. http://www.isro.gov.in/pslv-c25-mars-orbiter-mission - For details on the orbiter mission, the launch vehicle, ground segment operation, and plenty of images from the preparatory stages of the mission.
2. http://mars.nasa.gov/ - for details on the planet and the history of Mars exploration by NASA.
3. http://www.marsquestonline.org/ - for a variety of multimedia based learning activities on Mars suitable for school students.
4. http://phoenix.lpl.arizona.edu/mars101.php - the NASA Phoenix mission site has a detailed write-up on the search for water on Mars and the possibility of finding life.
5. http://www.jpl.nasa.gov/news/news.php?release=2012-305 - on Curiosity finding evidence water on Mars, finding ancient streambed gravels



***आनन्द नारायणन** इण्डियन इंस्टीट्यूट ऑफ स्पेस साइंस एण्ड टैक्नोलोजी में एस्ट्रोफिजिक्स (अन्तरिक्ष–भौतिकी) पढ़ाते हैं। उनका शोधकार्य यह समझने पर केन्द्रित है कि किस तरह बेरियोनिक पदार्थ गैलेक्सियों के बाहर बड़े पैमाने पर वितरित हुआ है। वे नियमित रूप से ऐस्ट्रोनोमी से सम्बन्धित शैक्षणिक और सार्वजनिक विज्ञान प्रसार गतिविधियों में अपना योगदान देते हैं। बीच–बीच में, दक्षिण भारत के सांस्कृतिक इतिहास की छानबीन करने के लिए उन्हें अक्सर यात्राएँ करना पसन्द है। **अनुवाद :** भरत त्रिपाठी*

जे.बी.एस.हाल्डेन

"विज्ञान की एक महान 'बदमाश' हस्ती"

टी. वेंकटेश्वरन

वह क्या बात थी जिसने जे.बी.एस.हाल्डेन को 20वीं सदी के सबसे सम्मानित वैज्ञानिकों में से एक बना दिया? पर साथ ही, उन्हें "ए ग्रेट रास्कल ऑफ साइंस" क्यों कहा गया? विज्ञान को दिए गए उनके योगदान क्या हैं और वे किस प्रकार के व्यक्ति थे? यह लेख हमें 20वीं सदी के सबसे दिलचस्प और पारंगत वैज्ञानिकों में से एक हस्ती के उल्लेखनीय जीवन से परिचित करवाता है।



ऑक्सफोर्ड, यू.के. में 1914 में जे.बी.एस.हाल्डेन
Source: Public domain. Image downloaded from http://students.washington.edu/gw0/modernsynthesis/images/haldane.png and converted to JPG
Original uploader was Bunzil at en.wikipedia.

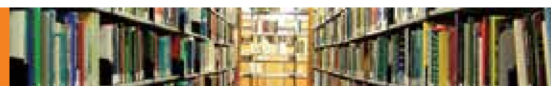
तनाव भरे माहौल में काम करना

वह 1940 का दशक था। संसार द्वितीय विश्वयुद्ध के संकट में फँसा हुआ था। वह कोई साधारण लड़ाई नहीं थी। दोनों ओर विशाल सेनाओं का सामना हथियारों की नई पीढ़ी (कँटीले तारों से लेकर, त्वरित गोलों की बारिश करने वाले तोपखानों (आर्टिलरी) और एक मिनट में 600 गोलियाँ बरसाने वाली मशीनगनों आदि तक) से हो रहा था। इन सभी नए हथियारों ने युद्ध की प्रकृति ही बदल दी थी। सभी पक्षों के सैनिक एक–दूसरे का वध कर रहे थे। युद्ध से हो रहा विध्वंस सभ्यता की बुनियादों के लिए ही खतरा बन गया था। हवाई हमले और पनडुब्बियाँ लड़ाई को जैसे हर घर के दरवाजे तक ले आई थीं। और इतिहास में पहली बार, मरने वाले सिपाहियों से नागरिक हताहतों की संख्या कहीं ज्यादा हो गई थी।

ब्रिटेन तथा उसके मित्र राष्ट्रों की पनडुब्बियाँ पानी के नीचे जर्मन हमलों के खतरों का सामना कर रही थीं। जब कोई पनडुब्बी किसी माइन (बारूदी सुरंग) से टकराती थी तो उसमें सवार लोगों के सामने छलाँग लगाकर पानी में कूदने

और फिर तैरकर सतह पर आने के अलावा कोई अन्य विकल्प नहीं होता था। अक्सर जब वे समुद्र की गहराइयों से ऊपर उठते थे, तो साँस लेने के लिए गोताखोरी के उपकरण का इस्तेमाल करते थे। लेकिन गोताखोरी के इन उपकरणों में सब कुछ ठीक–ठाक नहीं था। उनका उपयोग करने वालों में से अनेकों की कई कारणों से मौत हो जाती थी, जिनमें नाइट्रोजन नारकोसिस (नाइट्रोजन के आंशिक दबाव का बढ़ना) से लेकर कार्बन डाईआक्साइड से विषाक्त होना तक शामिल थे। आक्सीजन वैसे तो मानव जीवन के लिए आवश्यक होती है, परन्तु पानी के नीचे वह जीवन के लिए खतरा बन जाती है। गोताखोरों को विशुद्ध आक्सीजन की साँस न लेने और आक्सीजन से विषाक्त होने के लक्षणों (हाथों और पैरों की उँगलियों में झनझनाहट होना, मांसपेशियों का फड़कना, छटपटाहट के दौरे आना, बेहोश हो जाना और फिर मौत) के प्रति सजग रहने की सलाह दी जाती थी।

स्पष्ट रूप से आक्सीजन की विषाक्तता (टॉक्सीसिटी), उसको सहन करने की मानवीय सीमाओं और आक्सीजन टैंकों के लिए गैसों के उपयुक्त मिश्रण आदि पहलुओं को पूरी तरह से समझे जाने की जरूरत थी। एक व्यक्ति को उन शारीरिक खतरों का समाधान खोजने की जिम्मेदारी दी गई, जिनका सामना गोताखोरों और नष्ट होती पनडुब्बियों से बच निकलने की कोशिश करने वाले लोगों को करना पड़ता था। उस व्यक्ति ने भारी दबाव वाले कक्षों में विविध अनुपातों के गैस मिश्रणों के साथ प्रवेश करने के लिए स्वयं को स्वेच्छा से प्रस्तुत किया, ताकि वह "दबाव के अन्तर्गत जीवन" जीने के मौकों पर मनुष्य की सहनशक्ति के सही–सही लचीलेपन और सीमाओं की खोजबीन करने का प्रयास कर सके। यह अलग बात है कि वह इस प्रक्रिया में मरते–मरते बचा। उसने पाया कि भारी वायुमण्डलीय दबाव पर विशुद्ध आक्सीजन में साँस लेने के परिणामस्वरूप आदमी 5 मिनट के भीतर ही छटपटाने लगता है। उसने एक ऐसा आदर्श नाइट्रोजन–आक्सीजन मिश्रण विकसित करने में मदद की, जिसने आक्सीजन की विषाक्तता और नाइट्रोजन नारकोसिस (गहराई में गोताखोरी करने के दौरान चेतना में होने वाला एक परिवर्तन), दोनों का जोखिम कम कर दिया। इन पथ प्रवर्तक अध्ययनों ने न केवल युद्ध के दौरान अनेक लोगों की जान बचाई, बल्कि उनसे सुरक्षित स्कूबा गोताखोरी के उपकरणों का विकास करने में भी सहायता मिली, जिसके कारण मनुष्यों के लिए समुद्र की गहराइयों की खोजबीन करना सम्भव हो सका।



जे.बी.एस.हाल्डेन द्वारा लिखित कुछ महत्त्वपूर्ण किताबें

1. डेडालस; और साइंस एण्ड द फ्यूचर (1924)
2. पोसिबिल वर्ल्डस एण्ड अदर ऐसेज
3. द इनइक्वालिटी ऑफ मैन एण्ड अदर ऐसेज (1932)
4. साइंस एण्ड द सुपरनैचुरल : करस्पोंडैंस विद अर्नोल्ड लूना (1935), शीड एण्ड वार्ड, इन्का.
5. द मार्क्सिस्ट फिलोस्फी एण्ड द साइंसेज (1939)
6. माय फ्रैंड मिस्टर लीकी (1937)
7. ऐवरीथिंग हैज अ हिस्ट्री (1951)

(अन्तिम दो किताबें ई–बुक्स के रूप में विज्ञान प्रसार डिजिटल लाइब्रेरी से निःशुल्क डाउनलोड के लिए उपलब्ध हैं। देखें www.vigyanprasar.gov.in).

बहुमुखी प्रतिभा के धनी

यह धुनी व्यक्ति जे.बी.एस. (जॉन बर्डन सैंडरसन) हाल्डेन थे। जो एक प्रसिद्ध ब्रिटिश जेनेटिसिस्ट (आनुवांशिकी वैज्ञानिक) तथा विकासमूलक (एवोल्यूशनरी) जीवविज्ञानी और 20वीं सदी के महानतम वैज्ञानिकों में से एक हैं। एक प्रतिभाशाली गणितज्ञ, जीवविज्ञानी, समाजवादी, नास्तिक,

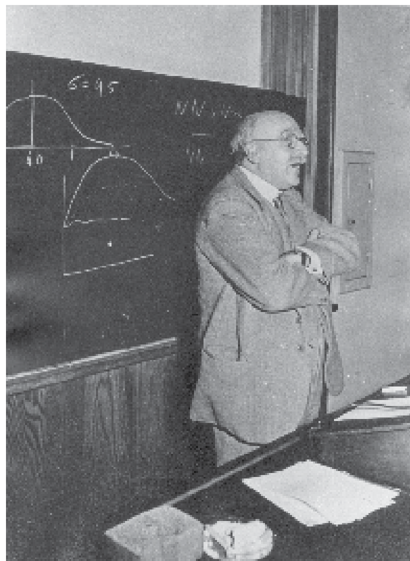
भौतिक पदार्थवादी और विज्ञान को लोकप्रिय बनाने वाले श्रेष्ठ प्रचारक हाल्डेन को एक विलक्षण व्यक्ति की तरह प्रशंसा मिली। मानव भाषा–विज्ञान से लेकर जनसंख्या आनुवांशिकी तक उनका काम आज भी अध्येताओं की रुचि को जगाता है और उन्हें प्रेरित करता है। इन विट्रो फर्टिलाइजेशन (टैस्ट ट्यूब बेबीज) का सुझाव देने वाले वे पहले व्यक्ति थे। अनेक वैज्ञानिक शब्द, जैसे कि सिस, ट्रान्स (पार), कपलिंग (युग्म बनाना), रिपल्शन (विकर्षण), और डार्विन (विकास की इकाई के रूप में) उनके द्वारा निर्मित किए गए। वे पहले व्यक्ति थे जिन्होंने पशुओं की हूबहू प्रतिकृति निर्मित करने की सम्भावना का वर्णन करने के लिए 'क्लोन' शब्द का इस्तेमाल किया। इस बात की ओर ध्यान दिलाते हुए कि जीवाश्म ईंधन हमेशा उपलब्ध नहीं रहेंगे, हाइड्रोजन की शक्ति का उपयोग करने वाले नवीकरणीय ऊर्जा के स्रोतों का सुझाव देने वाले भी वे पहले व्यक्ति थे।

जे.बी.एस.हाल्डेन का जन्म ऑक्सफोर्ड, इंग्लैण्ड में 5 नवम्बर 1892 को एक सम्भ्रान्त स्काटिश परिवार में हुआ था। अपने बचपन के बारे में उन्होंने लिखा है कि, "बचपन में मेरा पालन किसी धर्म की आस्थाओं का अनुसरण करते हुए नहीं हुआ, बल्कि ऐसे परिवार में हुआ जहाँ आस्था का स्थान विज्ञान और दर्शन ने ले लिया था। जब मैं लड़का था तब तत्कालीन चिन्तन तक मेरी मुक्त पहुँच थी, इसलिए आज मुझे न तो आइंस्टीन बेबूझ लगते हैं और न ही फ्रायड चौंकाते हैं।'' इसलिए, अचरज की बात नहीं कि उन्हें पहले ईटन में और बाद में उच्च अध्ययन करने के लिए ऑक्सफोर्ड में प्रवेश मिला, जहाँ से उन्होंने 1914 में गणित, क्लासिक्स (ग्रीक तथा लैटिन साहित्य) और दर्शन में एम.ए. की उपाधि प्राप्त की। 1914 से 1919 तक उन्होंने प्रथम विश्वयुद्ध में सैनिक अफसर की तरह काम किया। उसके बाद हाल्डेन कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी में बायोकैमिस्ट्री में रीडर रहे (1922–32), फिर लन्दन यूनिवर्सिटी में जैनेटिक्स के प्रोफेसर रहे (1933–37)। 1930 में वे रॉयल इंस्टीट्यूशन, लन्दन में फुलेरियन प्रोफेसर ऑफ फिजियोलोजी बने।

उन्होंने गणित का अध्ययन किया था, पर जब उन्होंने 1901 में मेण्डल के आनुवांशिकी सिद्धान्तों के बारे में एक भाषण सुना तो आनुवांशिकी के प्रति उनकी रुचि जागी। इसी समय दौरान मेण्डल के नियमों को फिर से खोजा जा रहा था और वे डार्विन के विकास के सिद्धान्त के विपरीत माने जाते थे। हाल्डेन ने आर.ए.फिशर तथा सीवैल राइट के साथ मिलकर न केवल यह दिखाया कि दोनों सिद्धान्तों में तालमेल बिठाया जा सकता था, बल्कि उन्होंने जनसंख्या आनुवांशिकी का सिद्धान्त भी विकसित किया, जो आज भी विकास के बारे में किसी भी गम्भीर चिन्तन का आधार होता है। 1912 में उन्होंने आनुवांशिकी सम्बन्ध (जैनेटिक लिंकेज) पर अपना पहला शोधपत्र प्रकाशित किया, और उसके बाद हीमोफिलिया (अति रक्तस्राव) तथा कलर ब्लाइण्डनैस (रंग अंधता) की आनुवांशिकी पर शोध किया। उनकी किताब 'द काजेज ऑफ एवोल्यूशन' जनसंख्या आनुवांशिकी के क्षेत्र में एक ऐतिहासिक योगदान थी। विज्ञान की अनेक प्रथम उपलब्धियों में, उन्होंने आनुवांशिकी इकाई के जीवरसायनशास्त्र (बायोकैमिस्ट्री ऑफ जीन ऐक्शन) तथा एन्जाइम अभिक्रियाओं के आनुवांशिक नियंत्रण की खोजबीन की, जीन्स के लिए परिवर्तन दरों की गणना की, मानवीय क्रोमोसोम्स के लिए लिंकेज मैप्स (सम्बन्ध मानचित्रों) का निर्माण किया और विरासत के विभिन्न तरीकों को समझने के लिए मानवीय वंशावलियों का विश्लेषण किया। कैम्ब्रिज में रहते हुए (1922–33) उन्होंने प्राकृतिक चुनाव (नैचुरल सिलेक्शन) का एक गणितीय प्रतिरूप निर्मित किया।

उन्होंने एन्जाइमों के अपने अध्ययन के आधार पर, तथा कुछ शानदार गणित का उपयोग करते हुए एन्जाइम अभिक्रियाओं की दरों की गणना की और (जी.ई.ब्रिग्स के साथ मिलकर) यह दिखाया कि एन्जाइम की अभिक्रियाएँ ऊष्मागतिकी (थर्मोडायनेमिक्स) के नियमों का पालन करती हैं। रक्त की क्षारीयता (एल्केलिनिटी) पर किया गया हाल्डेन का कार्य अब पाठ्यपुस्तकों में आधारभूत सामग्री बन गया है। हाल्डेन तथा

ए.आई.ओपेरिन ने अलग–अलग स्वतंत्र रूप से, आदिकाल के पूर्व–जैविक आक्सीजन रहित (प्री–बायोटिक ऐनेरोबिक) वातावरण में जीवन की उत्पत्ति की एक सम्भावित प्रक्रिया भी प्रस्तुत की।



समाजवादी

हाल्डेन केवल एक शानदार वैज्ञानिक ही नहीं थे, बल्कि उनकी गहरी मानवतावादी प्रतिबद्धताएँ भी थीं। एक करुणावान मानव कल्याण के आकांक्षी व्यक्ति की तरह वे चारों ओर बढ़ती बेरोजगारी, विपन्नता और गन्दगी देखकर बेहद चिन्तित होते थे। प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान वे एक समाजवादी बन गए। 1930 के दशक में उन्होंने व्लादीमीर लेनिन की रचनाओं को पढ़ना आरम्भ किया और वे मार्क्सवाद के समर्थक बन गए तथा 1942 में ब्रिटिश कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य हो गए। उनकी रचना 'द मार्क्सिस्ट फिलोस्फी एण्ड द साइंसेज (1938)' तथा एंगल्स की "डायलेक्टिक्स ऑफ नेचर" के अँग्रेजी संस्करण के लिए लिखी गई उनकी प्रस्तावना को उत्कृष्ट चिन्तन माना जाता है। हाल्डेन ने लिखा कि "यदि डार्विनवाद के बारे में उनकी (एंगल्स की) टिप्पणियाँ व्यापक रूप से विदित होतीं तो कम से कम मैं तो बहुत से भ्रामक सोचविचार से बच जाता।'' उन्होंने 1950 के दशक में पार्टी छोड़ दी, लेकिन मार्क्सवादी दर्शन को जीवन भर अपनाए रखा।

हाल्डेन विज्ञान तथा वैज्ञानिकों की सामाजिक जिम्मेदारी पर बहुत जोर देते थे। उनका तर्क था कि विज्ञान को साधारण लोगों की समझ में आने लायक ढंग से प्रस्तुत करना एक वैज्ञानिक का कर्तव्य है। उन्होंने आम लोगों के लिए विज्ञान की सरल व्याख्या करने वाले अनेक निबन्ध लिखे। वामपन्थी पत्रिका 'डेली वर्कर' के सम्पादक मण्डल के अध्यक्ष का पद स्वीकार करके, उन्होंने उसमें वैज्ञानिक विषयों पर, उनकी जटिल अवधारणाओं को स्पष्टता और विनोद के साथ समझाते हुए और साथ ही अक्सर राजनीतिक टिप्पणियाँ भी करते हुए, 300 से भी अधिक लेख लिखे।

उनके कुछ लोकप्रिय निबन्ध 'पोसिबिल वर्ल्डस' (1927) नामक संग्रह में प्रकाशित हुए। एक निबन्ध 'ऑन बीइंग वन्स ओन रैबिट (स्वयं अपना खरगोश होने के बारे में)', में वे प्रयोगशाला में खुद पर किए गए प्रायोगिक परीक्षणों के अनुभवों का वर्णन करते हैं। गणित से मिलने वाली स्पष्टता के बारे में उनका कहना था कि, "एक औंस बीजगणित एक टन शाब्दिक तर्क के बराबर है।'' एक अन्य स्थान पर (फैक्ट एण्ड फेथ) उन्होंने लिखा कि, "वैज्ञानिक की तरह मेरा कार्य नास्तिकतावादी है। यह कहने का मतलब है कि जब मैं किसी प्रयोग को निर्मित करता हूँ, तो मैं मानकर चलता हूँ कि कोई ईश्वर, देवदूत या शैतान उसकी प्रगति में हस्तक्षेप नहीं करेगा और मुझे अपने पेशेवर कार्यों में जैसी भी सफलता मिली है, उससे मेरी यह मान्यता जायज साबित हुई है। इसलिए, संसार के क्रियाकलाप के सम्बन्ध में भी यदि मैं नास्तिकवाद को न मानूँ तो मैं बौद्धिक रूप से बेईमान होऊँगा।'' उनका तर्क था कि, "धार्मिक मिथकों के खिलाफ मुख्य आपत्ति यह है कि एक बार निर्मित हो जाने के बाद उन्हें नष्ट करना बहुत कठिन होता है। रसायनशास्त्र को प्रदाहन (फ्लोजिस्टन) सिद्धान्त का भूत उस तरह नहीं सताता जैसे कि ईसाइयत को ऐसे ईश्वर की अवधारणा सताती है जो खून से सनी बलियों के लिए लालायित रहता है....रसायनशास्त्री मानते हैं कि जब कोई रासायनिक अभिक्रिया होती है, तो अभिकारकों का भार नहीं बदलता। यदि यह बहुत करीबी ढंग से सही न हो तो अधिकांश रासायनिक सिद्धान्त अर्थहीन होगा। लेकिन इसे गलत सिद्ध करने के लिए निरन्तर प्रयोग किए जा रहे हैं। जाहिर है कि इसे सही साबित नहीं किया

जा सकता, क्योंकि हम कितनी ही शुद्धता और बारीकी से तौलें, फिर भी इसमें त्रुटि इतनी ज्यादा छोटी हो सकती है कि हम उसका अवलोकन नहीं कर सकते। रसायनशास्त्री तब भी ऐसे प्रयोगों का स्वागत करते हैं और उन्हें अपवित्र या यहाँ तक कि निर्रथक भी नहीं मानते।''

सही आकार

हाल्डेन के सबसे अधिक सराहे गए निबन्धों में से एक है 'ऑन बीइंग द राइट साइज (सही आकार का होने पर)' जो 1928 में प्रकाशित हुआ। उसमें वे पूछते हैं कि चूहे छोटे क्यों होते हैं और व्हेलें बड़ी क्यों होती हैं? फिर और भी व्यापक प्रश्न करते हुए वे पूछते हैं कि क्या आकार महज एक संयोग होता है, या उसका कोई ठीक कारण होता है? "आप किसी खदान की नीचे जाने वाली 1000 फुट गहरी खाई में एक चूहे को गिरा सकते हैं। तली में पहुँचने पर उसे हल्का–सा झटका लगता है और फिर वह उठकर चल देता है। हालाँकि चूहा किसी इमारत की 11वीं मंजिल से भी सुरक्षित नीचे गिर सकता है, पर वह गिरने पर शायद मर जाएगा; एक आदमी मर जाता है और एक घोड़ा छितरा जाता है।" कोई विशालकाय कीट क्यों नहीं होते? उन्होंने लिखा कि, "कीटों के फेफड़े नहीं होते। उसके बजाय, उनके शरीर में छेदों और नलिकाओं की ऐसी व्यवस्था होती है जो आक्सीजन को उनके शरीर के भीतर की कोशिकाओं तक पहुँचने देती है। लेकिन यह निष्क्रिय श्वसन व्यवस्था आजकल के कीटों के आकार से बड़े किसी भी जीव के लिए काम नहीं करती। कीट लगभग उतने बड़े हो चुके हैं जितने वे हो सकते हैं, और हम बगैर इस डर के सो सकते हैं कि कोई दो सौ पौंड वजनी चींटी किसी दिन दरवाजा तोड़ते हुए भीतर आ जाएगी।'' हाल्डेन के शब्दों में, "बड़े आकार के पशु छोटे आकार के पशुओं से इसलिए ज्यादा बड़े नहीं होते क्योंकि वे ज्यादा जटिल होते हैं। वे ज्यादा जटिल इसलिए होते हैं कि वे ज्यादा बड़े होते हैं।'' आगे चलकर हाल्डेन समझाते हैं कि चिड़ियों का आकार उतना क्यों होता है जितना वह होता है, क्यों छोटे जानवर बर्फ जमे हुए ठण्डे क्षेत्रों में नहीं रह सकते और क्यों बड़े जानवरों की विशाल आँखें नहीं होतीं। इस किताब में दिए गए उनके उदाहरण वर्ग–घन नियम (स्क्वायर–क्यूब लॉ) पर आधारित हैं, हालाँकि वे इस शब्दावली का इस्तेमाल नहीं करते।

गैलीलियो ने अपनी किताब, 'डायलाग कन्सर्निंग टू न्यू साइंसेज (दो नए विज्ञानों के बारे में संवाद)', में इस ओर ध्यान दिलाया है और समझाया है कि वस्तुओं का मनमाना आकार नहीं हो सकता। जब एक वस्तु के आकार को बड़ा किया जाता है, तब उसका क्षेत्रफल आकार के गुणक के वर्ग से ही बढ़ता है, जबकि उसका आयतन उस गुणक के घन से बढ़ता है। इस प्रकार उदाहरण के लिए, यदि हमारे पास दो ऐसे घन अ तथा ब हैं, कि घन ब का हर किनारा (साइड) घन अ के सम्बन्धित किनारे से दस गुना बड़ा है तो जहाँ ब की सतह का क्षेत्रफल अ की सतह के क्षेत्रफल का केवल 100 गुना होगा, वहीं उसका आयतन ए के आयतन से 1000 गुना होगा।

जीवन और मृत्यु दोनों विज्ञान के लिए

1957 में, 65 वर्ष की आयु में हाल्डेन तथा उनकी पत्नी हैलेन स्परवे (जो स्वयं भी एक उत्कृष्ट आनुवांशिकी वैज्ञानिक थीं), अँग्रेज–फ्रांसीसी सेनाओं द्वारा स्वेज नहर पर किए गए साम्राज्यवादी हमले से इतने विक्षुब्ध हुए कि उसके विरोध में वे भारत आकर बस गए। यहाँ आरम्भ में पी.सी. महालनोबिस के आमंत्रण को स्वीकार करते हुए, वे इण्डियन स्टैटिस्टीकल इंस्टीट्यूट (आई.एस.आई.), कलकत्ता से जुड़ गए। बाद में उन्होंने भुवनेश्वर में एक इंस्टीट्यूट फॉर बायोलोजी एण्ड जैनेटिक्स की स्थापना की। हाल्डेन को भारतीय संस्कृति की गहरी समझ थी और वे भारतीय दर्शन के भी गहरे अध्येता थे। उन्हें संस्कृत का भी अच्छा ज्ञान था। अप्रैल 1961 में वे भारतीय नागरिक बन गए। स्वतंत्र भारत से अपनी पहचान जोड़ते

हुए, वे अन्तर्राष्ट्रीय गोष्ठियों में कुरता–पायजामा पहनकर जाते थे और संसार भर के वैज्ञानिकों को विकासशील देशों के साथ काम करने के लिए आमंत्रित करते थे।

जीवन की ही तरह, उन्होंने अपनी मृत्यु का सामना भी विनोद और बहादुरी के साथ किया। उन्होंने लिखा कि, "मैं प्रकृति का एक हिस्सा हूँ और आकाशीय बिजली की चमक से लेकर पर्वतों की शृंखला तक, तमाम अन्य प्राकृतिक चीजों की तरह मैं भी अपने समय तक रहूँगा और फिर समाप्त हो जाऊँगा। यह आने वाली घटना मुझे चिन्तित नहीं करती, क्योंकि जब मैं मरूँगा तब भी मेरा कुछ काम तो नहीं मरेगा।'' कैंसर से ग्रस्त, अस्पताल के अपने बिस्तर पर पड़े हुए उन्होंने एक जबर्दस्त विनोदपूर्ण कविता लिखी, जो उनकी असाध्य बीमारी का ही मजाक उड़ाती थी। हिन्दी में उसका गद्य रूपान्तर इस प्रकार है :

"... मैं जानता हूँ कि कैंसर अक्सर मारता है,
लेकिन यह तो कारें और नींद की गोलियाँ भी करती हैं
और यह इतनी तकलीफ देता है कि आदमी को पसीना आ जाए
लेकिन ऐसा तो खराब दाँत और बिना चुके कर्जे भी करते हैं
मुझे भरोसा है कि हँसी की थोड़ी खुराक
अक्सर आदमी के इलाज को गति देती है
इसलिए चलो हम मरीज अपने बस भर वही करें
और हमें अच्छा करने में शल्य–चिकित्सकों की मदद करें।"

दिसम्बर 1, 1964 को उनका देहान्त हो गया। उनकी वसीयत के अनुसार उनका शरीर शोध एवं शिक्षण के लिए रंगाराया मेडिकल कालेज, काकीनाडा भेज दिया गया। हाल्डेन ने अपनी वसीयत में लिखा कि, "मेरा शरीर मेरे जीवनकाल में दोनों कार्यों के लिए उपयोग किया गया। मेरी मृत्यु के बाद मेरा अस्तित्व रहे या न रहे, मेरे लिए शरीर का फिर कोई उपयोग नहीं रह जाएगा। अतः मेरी इच्छा है कि वह दूसरों के द्वारा उपयोग किया जाए।'' रिचर्ड मिलनर ने ठीक ही कहा कि, "जे.बी.एस.हाल्डेन विज्ञान की सबसे महान 'बदमाश' हस्तियों में से एक, स्वतंत्र, तीखे, मेधावी, विनोदी और पूरी तरह से अनोखे व्यक्ति थे।"



__टी.वी.वेंकटेश्वरन__ विज्ञान प्रसार, डिपार्टमेंट ऑफ साइंस एण्ड टैक्नोलोजी, नई दिल्ली में कार्यरत वैज्ञानिक हैं। उन्हें 25 लोकप्रिय विज्ञान पुस्तकें तथा 300 विज्ञान लेख लिखने का श्रेय जाता है। वे विज्ञान के टीवी कार्यक्रमों को संचालित करते हैं, प्रशिक्षण कार्यक्रमों के स्रोत व्यक्ति हैं और पत्रिकाओं के लिए भी लिखते हैं। उनकी शोध की रुचियों में तमिल में लोकप्रिय विज्ञान का इतिहास और विशेष रूप से आधुनिक भारतीय खगोलशास्त्री चिन्तामणि रघुनाथाचारी शामिल हैं। वे कहते हैं कि, ''वे भाग्यशाली हैं कि उनके अनुराग का क्षेत्र ही उनका व्यवसाय है – वे किताबें पढ़ सकते हैं, फिल्में देख सकते हैं और विद्यार्थियों तथा शिक्षकों से संवाद कर सकते हैं – और उसे 'काम' कह सकते हैं तथा उसके लिए वेतन पा सकते हैं।'' उन्हें यात्रा करना, कर्नाटक संगीत सुनना और अनोखे व्यंजन बनाना अच्छा लगता है। उनका एक गुप्त दुर्गुण गुप्तचरी के रोमांच से भरे जासूसी उपन्यास पढ़ना है। उनसे tvv123@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।
__अनुवाद__ : भरत त्रिपाठी



प्रकाश का अवलोकन करना: छायाएँ और प्रतिबिम्ब

राजाराम नित्यानन्द

क्या छायाएँ पूरी तरह से अँधकारमय होती हैं? क्या कुछ छायाएँ अन्य छायाओं से ज्यादा अँधकारमय होती हैं? एक मोबाइल फोन के कैमरे तथा मनुष्य की आँख में क्या चीज समान होती है? क्या कोई प्राकृतिक पिन–होल (छोटे से छेद वाला) कैमरा होता है? यदि हम चाहते हैं कि हमें अपना दाहिना हाथ वैसा ही दिखाई दे जैसा वह दूसरों को दिखता है, तो हमें कितने दर्पणों की जरूरत होती है? इस लेख में लेखक ने कई ऐसे सरल तरीकों की खोज की है जिनके द्वारा छायाओं और प्रतिबिम्बों का उपयोग करते हुए, प्रकाश के शिक्षण में दैनिक जीवन के अवलोकनों को अवधारणाओं से जोड़ा जा सकता है।

विज्ञान के किसी भी विषय के बारे में उत्सुकता, प्रेरणा और एक बुनियादी समझ निर्मित करना हमेशा एक चुनौती होती है। इस हेतु विशेष रूप से बनाए गए उपकरणों के माध्यम से प्रौद्योगिकी – कम्प्यूटर एनीमेशन्स और प्रदर्शनों – का इस्तेमाल करना आजकल एक लोकप्रिय चलन है। यह चलन, विद्यार्थियों के कम उम्र से ही जनसंचार माध्यमों और इंटरनेट के सम्पर्क में आने से उनमें उपजे हर चीज से परिचित होने और जल्दी ही ऊब जाने के एहसास से उन्हें निकालने का प्रयास करता है। अब यह भारत में हमारे अपने स्कूलों में भी अपनाया जाने लगा है।

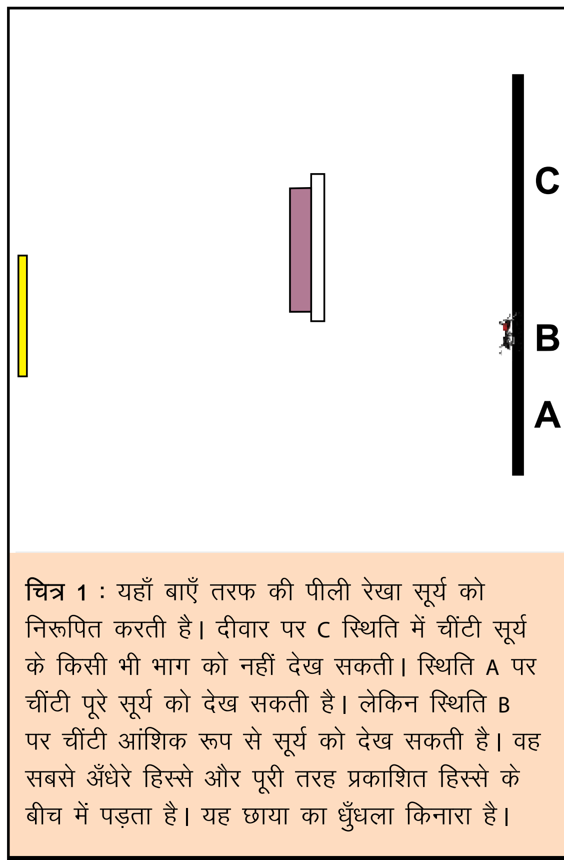
इसमें कोई शक नहीं कि सीखने के रोचक अनुभव निर्मित करने में प्रौद्योगिकी की अपनी उपयोगिता है। लेकिन यह लेख तो सबसे प्राचीन प्रौद्योगिकी – सजीव (अर्थात कृत्रिम या आभासी नहीं) अवलोकन – के बारे में है। सीधे सरल अवलोकनों का प्रयोजन, दूसरे कमतर विकल्पों की तरह तब इस्तेमाल किया जाना नहीं है जब इंटरनेट पर ऑनलाइन के या प्रयोगशाला के संसाधनों का अभाव हो। वह तो उन विद्यार्थियों के लिए भी मूल्यवान है जिनकी आभासी संसाधनों तक पहुँच है, क्योंकि अन्ततः विज्ञान वास्तविक संसार के बारे में होता है। प्रत्यक्ष, स्वयं किए गए अनुभव उन अधिक अमूर्त अवधारणाओं और विषयों से विद्यार्थी को जुड़ने में मदद करते हैं, जिन्हें बाद के वर्षों में स्कूल विज्ञान के अन्तर्गत पढ़ना जरूरी होता है। ऐसे जीवन्त जुड़ाव के बिना उन विद्यार्थियों को भी जो मौजूदा स्कूली व्यवस्थाओं में अच्छा प्रदर्शन करते हैं, जो कुछ वे किताबों और व्याख्यानों से सीखते हैं उसे नई परिस्थितियों में उपयोग करना कठिन मालूम पड़ सकता है। यहाँ तक कि यदि कोई सिद्धान्त पहले

सीखता है, तब भी उसे व्यवहार में लागू होते हुए देखने और अवलोकनों का इस्तेमाल करते हुए उससे सम्बन्ध जोड़ने के द्वारा उसकी बेहतर समझ बनाने में उसे मदद मिलती है। यहाँ सुझाए गए अवलोकन केवल माध्यमिक स्कूलों के विद्यार्थियों के लिए ही नहीं हैं, बल्कि वे उन सभी के लिए हैं, जिनमें शिक्षक भी शामिल हैं, जिन्होंने उन्हें आजमाकर नहीं देखा है!

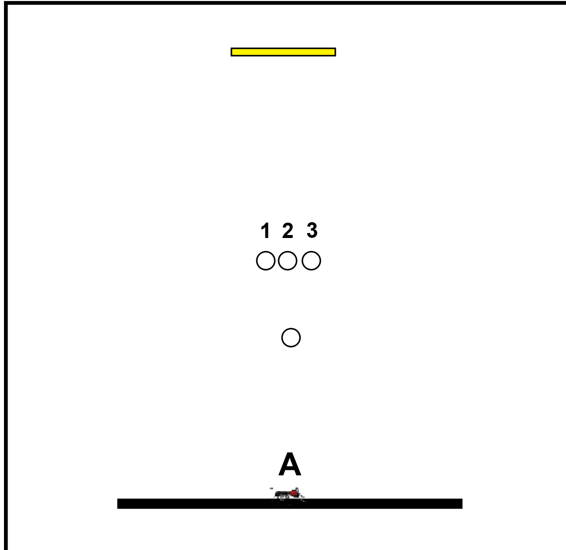
स्कूल के विज्ञान पाठ्यक्रम में प्रकाश का विषय काफी जल्दी आ जाता है। यह स्वाभाविक भी है क्योंकि दृष्टि हमारी सबसे शक्तिशाली इन्द्रियों में से एक है। शिक्षकों के लिए प्रकाश का अध्यापन, उसे ऐसे अवलोकनों से जोड़ते हुए विद्यार्थियों में उत्साह जगाने का अवसर प्रदान करता है जिन्हें विद्यार्थी स्वयं कर सकते हैं और उनके बारे में विचार कर सकते हैं। यह लेख प्रकाश के दो बुनियादी विषय–प्रसंगों, छायाओं तथा प्रतिबिम्बों की व्याख्या करता है। ये प्रसंग सभी पाठ्यपुस्तकों में होते हैं। उनमें आमतौर पर किरणों को दर्शाने वाले रेखाचित्र होते हैं जो प्रकाश का उसके स्रोत से सीधी रेखाओं में यात्रा करना दिखाते हैं। यह तभी एक आभासी या कृत्रिम अनुभव बन जाता है – क्योंकि विद्यार्थी हमेशा ऐसे चित्रों का सम्बन्ध उससे नहीं जोड़ पाते जो वे वास्तव में देखते हैं, परन्तु वे यह जानते हैं कि परीक्षाओं और साक्षात्कारों मे उन रेखाचित्रों को फिर से बनाना जरूरी होता है।

छायाएँ : पूरी तरह अँधकारमय नहीं होतीं!

किसी वस्तु (मान लीजिए कि एक डस्टर) की छाया के बारे में सोचने का एक तरीका है यह कल्पना करना कि एक छोटा जीव, जैसे कि एक चींटी, दीवाल पर बैठा है। अब सूर्य, डस्टर और चींटी की स्थितियों को समझने के लिए यहाँ दिए गए चित्र को देखें। हम पूछ सकते हैं कि यदि वह चींटी सूर्य तथा डस्टर के सापेक्ष अलग–अलग स्थानों पर स्थित होती तो वह क्या देखती। यदि दीवार पर कोई बिन्दु काला है, तो इसका मतलब है कि वहाँ बैठी हुई चींटी के लिए सूर्य के प्रकाश को वस्तु द्वारा पूरी तरह रोक दिया गया है। पर जब हम दीवार पर के इस बिन्दु से दूर हटते हैं, तो हम गौर करते हैं कि डस्टर की छाया की किनारी तीखी नहीं है। यह अवलोकन उस प्राकृतिक घटना का उदाहरण है, जिसे पैनम्बरा (उपछाया) कहते हैं। 'पैनम्बरा' बस एक नाम है! क्या यह कहना बेहतर नहीं होगा कि जब चींटी दीवार पर रेंगती हुई डस्टर की छाया के किनारे से आगे निकलती है, तो वह उस क्षेत्र से निकलती है जहाँ सूर्य पूरी तरह बाधित है, और ऐसे क्षेत्र में आ जाती है जहाँ वह आंशिक रूप से बाधित है (पैनम्बरा)। अन्त में वह ऐसे क्षेत्र में चली जाती है जहाँ से वह पूरे सूर्य को देख सकती है? (ऐसी किसी वास्तविक छाया के अन्दर जाकर हटते हुए निकलने और सचमुच में खुद सूरज को सीधे देखने के बजाय, इसकी कल्पना करना ही बुद्धिमानी होगी, क्योंकि सूर्य को सीधे देखना आँख को नुकसान पहुँचा सकता है।)



चित्र 1 : यहाँ बाएँ तरफ की पीली रेखा सूर्य को निरूपित करती है। दीवार पर C स्थिति में चींटी सूर्य के किसी भी भाग को नहीं देख सकती। स्थिति A पर चींटी पूरे सूर्य को देख सकती है। लेकिन स्थिति B पर चींटी आंशिक रूप से सूर्य को देख सकती है। वह सबसे अँधेरे हिस्से और पूरी तरह प्रकाशित हिस्से के बीच में पड़ता है। यह छाया का धुँधला किनारा है।

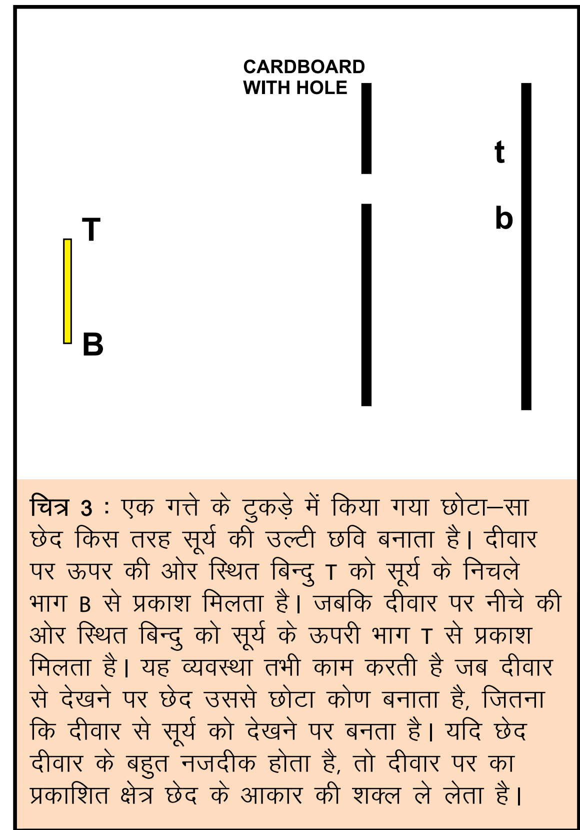


चित्र 2 : दो पेन्सिलों की छायाओं का ओवरलैप। जब हटाई जाने वाली पेन्सिल बाईं ओर स्थिति 1 पर, या स्थिति 3 पर होती है, तो स्थान A पर बैठी चींटी सूर्य के ज्यादा बड़े हिस्से को ढँका हुआ देखती है। लेकिन जब वह पेन्सिल स्थिति 2 पर होती है तो पेन्सिलें एक–दूसरे को ढँक लेती हैं और उसे सूर्य का अधिक हिस्सा दिखाई देता है। यह स्थिति A पर, जहाँ छायाओं का ओवरलैप होता है, होने वाली प्रकाश में वृद्धि को समझाता है।

अगला प्रयोग तो वैज्ञानिकों को भी अचरज में डाल देता है। दोपहर के नजदीक, सूर्य की रोशनी में दो पेन्सिलों को इस तरह पकड़कर रखें कि उनकी छाया जमीन पर पेन्सिलों से एक मीटर से अधिक दूर पड़े। अब एक पेन्सिल को दूसरी के ऊपर लाकर, हम उनकी छायाओं को एक के ऊपर दूसरी, इस तरह चढ़ा सकते हैं, और फिर पेन्सिलों की स्थिति बदलकर छायाओं को अलग भी कर सकते हैं। विस्मित करने वाली बात यह है कि, एक–दूसरे पर पूरी चढ़ने (ओवरलैप) के ठीक पहले और बाद में छाया ज्यादा गहरी होती है और पूरा ओवरलैप होने पर जैसे उसमें थोड़ी रोशनी आने से वह हल्की हो जाती है! हम पेन्सिलों को आपस में काटते हुए (क्रास का निशान बनाते हुए) भी रख सकते हैं, तब छाया का सबसे गहरा हिस्सा उनके काटने की जगह पर नहीं होता बल्कि उसके दोनों ओर होता है। इसे चित्र 2 में, जमीन पर बैठी हुई एक चींटी के दृष्टिकोण से समझाया गया है। इस प्रकार यह छायाओं के बारे में विचार करने का एक उपयोगी तरीका है!

छायाओं के बीच में क्या होता है?

अब हम छाया के विपरीत एक घटना को देखें। जब प्रकाश एक गत्ते के टुकड़े में किए गए छेद में से गुजरता है, तो हमें छाया के भीतर एक चमकदार प्रकाशित क्षेत्र मिलता है। यदि हम वर्गाकार छेद करें तो हम एक वर्गाकार चमकदार क्षेत्र देखने की, एक त्रिभुजाकार छेद से ऐसा त्रिभुजाकार क्षेत्र देखने की इत्यादि अपेक्षा करते है। और यही हमको दिखता भी है जब हम गत्ते के टुकड़े को दीवार के पास रखते हैं। जब छेद छोटा होता है (मान लीजिए 3 मिलीमीटर के आकार का) तो जब हम दीवार से कार्डबोर्ड को दूर हटाते हैं तो एक मजेदार घटना घटती है। लगभग आधा मीटर की दूरी पर, प्रकाश का टुकड़ा अधिक गोलाकार दिखाई देने लगता है; लगभग एक मीटर की दूरी पर हम लगभग वृत्ताकार चकती जैसा क्षेत्र देखते है, भले ही छेद त्रिभुज के आकार का रहा हो! इसके अलावा, चमकदार क्षेत्र का आकार भी बढ़ता जाता है।



चित्र 3 : एक गत्ते के टुकड़े में किया गया छोटा–सा छेद किस तरह सूर्य की उल्टी छवि बनाता है। दीवार पर ऊपर की ओर स्थित बिन्दु T को सूर्य के निचले भाग B से प्रकाश मिलता है। जबकि दीवार पर नीचे की ओर स्थित बिन्दु को सूर्य के ऊपरी भाग T से प्रकाश मिलता है। यह व्यवस्था तभी काम करती है जब दीवार से देखने पर छेद उससे छोटा कोण बनाता है, जितना कि दीवार से सूर्य को देखने पर बनता है। यदि छेद दीवार के बहुत नजदीक होता है, तो दीवार पर का प्रकाशित क्षेत्र छेद के आकार की शक्ल ले लेता है।

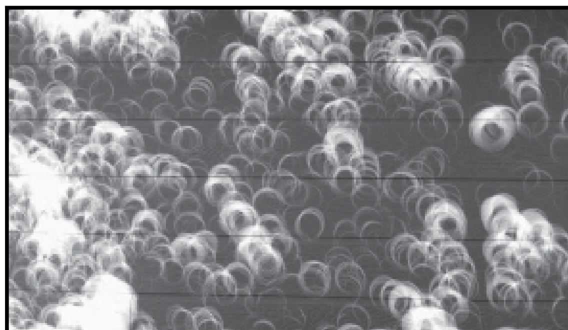
वृत्ताकार टुकड़ा सूर्य की छवि होता है। यह अवलोकन चित्र 3 में दिखाए गए पिनहोल कैमरा का बुनियादी सिद्धान्त है।

इस सरल खिलौने को विद्यार्थी स्वयं अपने लिए बना सकते हैं। सभी अवलोकन करने के लिए हमारे बुनियादी उपकरण यानी मनुष्य की आँख के काम करने की प्रक्रिया से परिचय करवाने के लिए भी यह एक अच्छा तरीका है। आँख प्रकाश को संग्रह करने वाला सुन्दर अंग है जो प्रत्येक दिशा से आने वाले प्रकाश की चमक और रंग को दिखाता है। इसे ही हम तस्वीर या छवि कहते हैं। वास्तव में मोबाइल फोन का कैमरा जिससे अनेक विद्यार्थी परिचित होंगे, पुराने फिल्म–आधारित कैमरों की तुलना में मनुष्य की आँख के ज्यादा समान होता है। उसमें एक चिप होती है जो आँख के परदे के जैसे होती है। तारें इस चिप को एक कम्प्यूटर से जोड़ती हैं, काफी कुछ वैसे ही जैसे कि प्रकाश की तंत्रिका (ऑप्टिक नर्व) परदे को मस्तिष्क से जोड़ती है! उसके अलावा फोन के कैमरे में एक सॉफ्टवेयर होता है जो उल्टी तस्वीर को सीधा कर देता है। हमारे मस्तिष्क में भी ऐसी ही क्षमता होती है।

वास्तव में पिनहोल कैमरे का यह प्रयोग प्रकृति द्वारा हमारे लिए स्वाभाविक रूप से तब किया जाता है, जब हम किसी पेड़ की छाया को देखते हैं। जैसा कि चित्र 4 अ दर्शाता है, हमें अक्सर वहाँ रोशनी के गोलाकार धब्बे दिखाई देते हैं। हालाँकि पत्तियों के बीच की खाली जगह, जिनमें से सूर्य चमकता है, अनियमित आकार की होती है, पर फिर भी ऐसा होता है। सूर्य के आंशिक ग्रहण के दौरान, जो लगभग हर दशक में एक बार भारत में अधिकांश जगहों पर देखा जा सकता है, ये गोले हँसिए के आकार के बाल चन्द्र (क्रेसेंट) जैसे बन जाते हैं, जिससे स्पष्ट होता है कि हम वास्तव में छवियाँ देख रहे होते हैं। 26 दिसम्बर, 2019 वह अगली तारीख है, जब भारत में आंशिक ग्रहण देखा जा सकेगा। और उसके बाद अगला आंशिक ग्रहण 21 जून, 2020 को होगा, अगर तब मानसून के बादल न हुए तो इसे देखा जा सकेगा। चित्र 4 ब अमेरिका में देखे गए 20 मई, 2012 के ग्रहण की छायाओं के समूह का एक चमत्कारी दृश्य दिखाता है। इस उदाहरण में चन्द्रमा ने सूर्य के अँगूठी के आकार के हिस्से को देखने योग्य छोड़ दिया है।



चित्र 4 अ : एक पेड़ की छाया में प्रकाश के गोलाकार धब्बे, जो प्राकृतिक पिनहोल्स (पत्तियों के बीच की खाली जगह) के द्वारा बनाई गई सूर्य की छवियाँ हैं।



चित्र 4 ब : मई 20, 2012 के ग्रहण के दौरान ली गईं सूर्य की पिनहोल तस्वीरें। स्रोत : कार्सन सिटी, नेवादा में ली गईं ग्रहण लगे सूर्य की तस्वीरें।

छायाओं का एक अन्य रोचक पहलू तब उजागर होता है, जब हम चन्द्रमा को दूरबीन से देखते हैं (हालाँकि चन्द्रमा का प्रकाश सूर्य के प्रकाश से बहुत कमजोर होता है, परन्तु फिर भी हमको उसकी चमक से सावधान रहना चाहिए)। पूरे चाँद की तस्वीर (चित्र 5 अ) में कोई छायाएँ नहीं दिखाती। परन्तु, आधे चाँद की तस्वीर (चित्र 5 ब) में पर्वतों और खड्डों की स्पष्ट छायाएँ नजर आती हैं। यह इन दोनों में से ज्यादा दिलचस्प तस्वीर है, हालाँकि कवियों ने पूरे चाँद की तारीफों के पुल बाँधे हैं। हम सब जानते हैं कि जब सूर्य क्षितिज पर नीचे होता है, तब छायाएँ लम्बी होती हैं और वे तब गायब हो जाती हैं जब सूरज ठीक सिर पर होता है। इसलिए यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि पूरे चाँद के केन्द्र के पास हमें छायाएँ नहीं दिखाई देतीं। यदि कोई वहाँ बैठा होता तो सूर्य उसके सिर के ठीक ऊपर होता। पूरे चाँद की किनार के पास, उसके पर्वत छायाएँ बनाते तो हैं, पर जिस दिशा में सूर्य होता है, उस दिशा से वे दिखाई नहीं देतीं! पर आधे चाँद के साथ यह समस्या नहीं होती और हमारे देख सकने के लिए छायाएँ पर्याप्त स्पष्ट होती हैं।

छायाओं से सम्बन्धित ये सिर्फ कुछ ऐसे उदाहरण हैं जिनका इस्तेमाल अवलोकन और विचार–विमर्श



चित्र 5 अ : पूरे चन्द्रमा की एक तस्वीर। गौर करें कि हमें कोई छायाएँ दिखाई नहीं पड़तीं, हालाँकि वहाँ पहाड़ और घाटियाँ हैं।



चित्र 5 ब : आधे चाँद की एक तस्वीर। अँधेरे और प्रकाशित भागों के बीच की सीमा के नजदीक स्पष्ट दिख रही छायाओं पर गौर करें। वहाँ स्थित किसी प्रेक्षक को सूर्य क्षितिज के पास दिखाई देगा, इसलिए छायाएँ लम्बी होंगी।

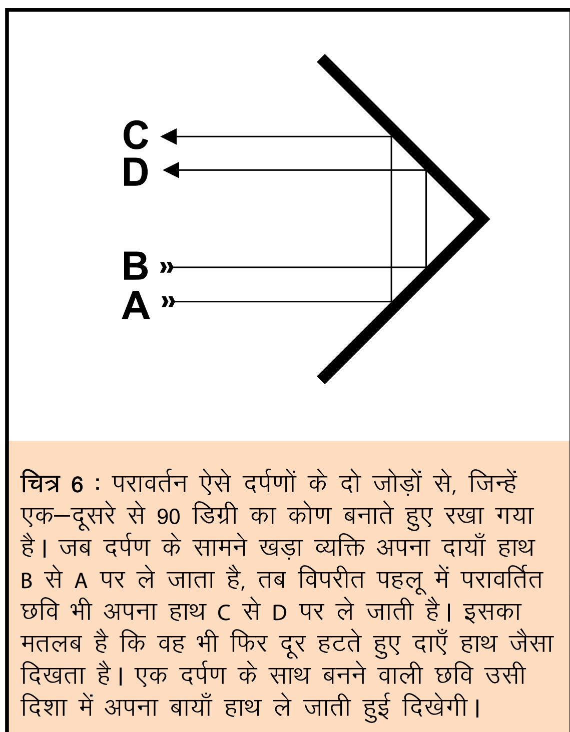
को प्रेरित करने के लिए किया जा सकता है। ऐसे उदाहरणों का प्रयोजन पाठ्यपुस्तक और कक्षा में होने वाले शिक्षण की जगह लेना नहीं है, बल्कि पढ़ाई गई अवधारणाओं को समझने के लिए कुछ उत्साह पैदा करना है। उच्च कक्षाओं में ये प्रयोग बेहतर ढंग से इस बात को सराहने में हमारी मदद कर सकते हैं कि किस तरह से प्रकाश किरणों, जैसी सरल किन्तु व्यापक अवधारणाएँ हमारे आसपास की बहुत–सी चीजों को समझने में हमें समर्थ बनाती हैं।

दर्पणों से प्रयोग करना

अब हम दर्पणों की ओर मुड़ते हैं। दपर्ण अधिकांश बच्चों को तब तक आकर्षित करते रहते हैं, जब तक वे बड़े नहीं हो जाते और दर्पणों को सामान्य वस्तुओं की तरह नहीं लेने लगते। हममें से अधिकांश लोग यह जानते हैं कि दर्पण हमें जो व्यक्ति दिखाता है उसका बायाँ हाथ हमारे दाएँ हाथ जैसा होता है। इस परिवर्तन को एक दुर्भाग्यपूर्ण नाम, 'लेटरल चेंज (पहलू का परिवर्तन)' दे दिया जाता है। यह दुर्भाग्यपूर्ण इसलिए है, क्योंकि वास्तव में जो चीज दर्पण में उलट जाती है, वह वह दिशा होती है जिसमें व्यक्ति देख रहा होता है! बाकी दोनों दिशाएँ समान बनी रहती हैं। उदाहरण के लिए, हमारे ऊपरी तथा निचले भाग

आपस में नहीं बदलते। हमारी भाषा बाएँ और दाएँ को उस दिशा के सापेक्ष परिभाषित करती है जिस दिशा में व्यक्ति देख रहा होता है, लेकिन वह ऊपर और नीचे को पृथ्वी के सापेक्ष परिभाषित करती है। यह केवल भाषा का मुद्दा नहीं है, बल्कि यह जीवन–मरण का भी सवाल हो सकता है। किसी मरीज का आपरेशन करने वाले शल्य चिकित्सक को निश्चित रूप से यह स्पष्ट होना चाहिए कि "बायाँ" कहते समय उसका क्या मतलब है, मरीज का बायाँ या खुद शल्य चिकित्सक का बायाँ?!

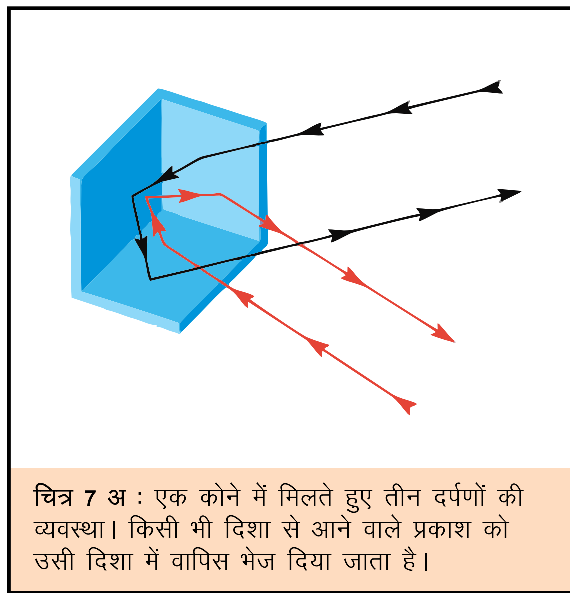
यह सच है कि एक अकेला दर्पण हमें वैसा नहीं दिखाता जैसे कि हम दूसरों को दिखते हैं। यह बात खासतौर पर उस व्यक्ति को साफ हो जाती है जो साड़ी जैसा वस्त्र पहने होता है जो कि एक कन्धे पर से होकर जाती है; या ऐसी कमीजें पहने हो जिनमें ऊपर एक तरफ जेब होती है। स्वयं को वैसा देखने के लिए, जैसा कि दूसरे आपको देखते हैं, दो दर्पणों का उपयोग करें जिन्हें एक–दूसरे से 90 डिग्री का कोण बनाते हुए रखा गया हो। यदि आपने ऐसे दर्पणों में पहले नहीं देखा है, तो वह आपके लिए एक विचित्र अनुभव हो सकता है। जब आप अपना दायाँ हाथ अपने से दूर ले जाते हैं, तो



चित्र 6 : परावर्तन ऐसे दर्पणों के दो जोड़ों से, जिन्हें एक–दूसरे से 90 डिग्री का कोण बनाते हुए रखा गया है। जब दर्पण के सामने खड़ा व्यक्ति अपना दायाँ हाथ B से A पर ले जाता है, तब विपरीत पहलू में परावर्तित छवि भी अपना हाथ C से D पर ले जाती है। इसका मतलब है कि वह भी फिर दूर हटते हुए दाएँ हाथ जैसा दिखता है। एक दर्पण के साथ बनने वाली छवि उसी दिशा में अपना बायाँ हाथ ले जाती हुई दिखेगी।

आपकी छवि भी अपना दायाँ हाथ अपने से दूर ले जाती है! इसे समझने का एक सरल तरीका चित्र 6 में दिया गया है।

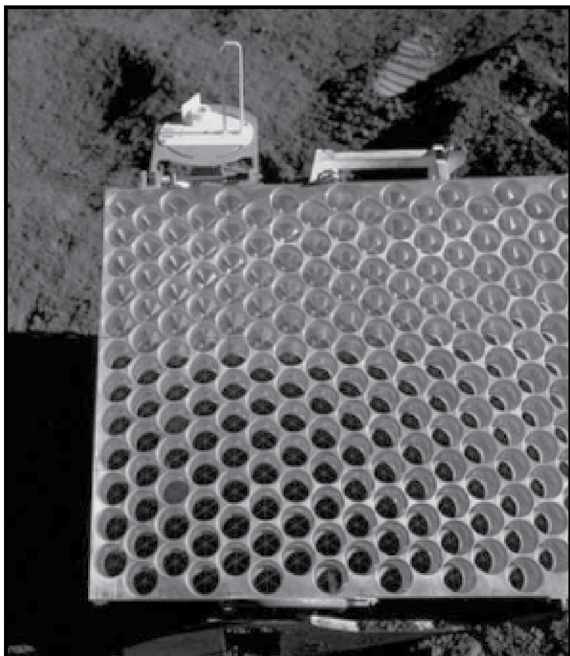
इससे और भी विचित्र अनुभव तब होता है जब कोई ऐसे तीन दर्पणों के संयोजन में देखता है जिन्हें प्रत्येक को एक–दूसरे से 90 डिग्री के कोण पर रखा गया है। ऐसी व्यवस्था की ज्यामिति किसी कमरे की दो दीवारों और फर्श के कमरे के एक कोने में मिलने जैसी होती है। इसलिए इसे 'कॉर्नर रिफलेक्टर (कोने वाला परावर्तक)' कहा जाता है। कॉर्नर रिफ्लेक्टर में किसी भी दिशा से आने वाली प्रकाश की किरण उसी दिशा में वापिस भेज दी जाती है (चित्र 7 अ)। कोई जब इस तरह रखे हुए दर्पणों में देखता है तो उसे क्या दिखता है? चाहे वह कहीं से भी जाकर देखे, व्यक्ति को अपनी ही आँख कोने में दिखाई देती है!



चित्र 7 अ : एक कोने में मिलते हुए तीन दर्पणों की व्यवस्था। किसी भी दिशा से आने वाले प्रकाश को उसी दिशा में वापिस भेज दिया जाता है।

यह केवल एक कौतूहलपूर्ण तरकीब भर नहीं है, बल्कि वास्तव में बहुत उपयोगी भी है। ऐसे परावर्तक राजमार्गों पर, विशेष रूप से किसी खतरनाक गोलाई वाले मोड़ के किनारे पर उपयोग किए जाते हैं। रात में किसी पास आ रही कार की हैडलाइटें ऐसे परावर्तक को प्रकाशित कर देती हैं और वह चेतावनी के रूप में रोशनी को वापिस ड्राइवर को भेज देता है। यह बहुत सक्षम व्यवस्था होती है। इसे कोई बिजली की जरूरत

नहीं होती और यह रोशनी को केवल वहाँ भेजती है जहाँ उसकी जरूरत होती है। इसका एक और भी प्रभावशाली उदाहरण उस कॉर्नर रिफलेक्टर का है जिसे अमेरिकी अन्तरिक्ष यात्रियों ने अपोलो अभियान के दौरान चन्द्रमा पर स्थापित किया था (चित्र 7 ब)। उसका उपयोग करते हुए, वैज्ञानिक पृथ्वी पर एक टेलिस्कोप (दूरदर्शी) से लेजर प्रकाश की एक बीम (किरण–पुंज) के चन्द्रमा तक भेजने में, और फिर उसी टेलिस्कोप में वापिस पाने में समर्थ हुए। चूँकि वह प्रकाश एक शॉर्ट पल्स (छोटे कम्पन) जैसा था, इसलिए वे उसकी यात्रा में लगे समय को नाप सके (लगभग 2.5 सेकेण्ड) और इसलिए वे बहुत शुद्ध रूप से चन्द्रमा की दूरी की गणना कर सके।



चित्र 7 ब : अपोलो 15 के अन्तरिक्ष यात्रियों के द्वारा चन्द्रमा पर रखा गया कॉर्नर रिफलेक्टर्स का एक समूह। इसने चन्द्रमा की दूरी और वह समय के साथ कैसे बदलती है, इसके बहुत शुद्ध मापन की सुविधा दी। आभार : नासा, यूएसए

आजकल सौर ऊर्जा का उपयोग करने में बहुत रुचि ली जा रही है। इसके लिए, एक बड़े क्षेत्र में पड़ रहे सूर्य के प्रकाश को संचित करके एक छोटे क्षेत्र में लाने का एक तरीका चित्र 8 में दर्शाया गया है।



चित्र 8 : स्पेन के एक पावर प्लांट का चित्र जो विद्युत उत्पादन करने वाले जैनरेटरों को चलाने वाली भाप बनाने के लिए कोयले के बजाय सूर्य की ऊर्जा का उपयोग करता है। हवा में मौजूद धूल के कारण, हम वास्तव में सूर्य की किरणों के पथ को देख सकते हैं।

आखिरी दो उदाहरण दर्शाते हैं कि कैसे एक साधारण विषय–प्रसंग, परावर्तन, भी आज की अन्तरिक्ष तथा ऊर्जा प्रौद्योगिकी के लिए महत्त्वपूर्ण होता है।

निष्कर्ष

आज के विद्यार्थी अपने शिक्षकों की अपेक्षा कहीं अधिक उन्नतशील प्रौद्योगिकी की दुनिया में जीवन बिताएँगे। ऐसी कई प्रौद्योगिकी विधियाँ प्रकाश का भी उपयोग करेंगी। यही कारण है कि संयुक्त राष्ट्र ने 2015 को प्रकाश तथा प्रकाश–आधारित प्रौद्योगिक विधाओं का अन्तर्राष्ट्रीय वर्ष घोषित किया था। लेजर किरणों का उपयोग पहले ही उद्योग जगत में काटने के लिए किया जाता है। उनका उपयोग नेत्र चिकित्सकों द्वारा दृष्टि को सुधारने के उद्देश्य से पुतली को सुधरा हुआ आकार देने के लिए भी इस्तेमाल किया जाता है। फोन पर किए जाने वाले हमारे अधिकांश वार्तालापों और इंटरनेट पर जानकारी की सैर करने जैसे कार्यों में निहित संकेतों को ले जाने का काम भी ऑप्टिकल फाइबर्स के माध्यम से प्रकाश ही करता है। भविष्य में भी अनेक नई, आश्चर्यजनक और उपयोगी चीजें निश्चित ही प्रकाश की हमारी समझ से निकलकर सामने आएँगी। जो विद्यार्थी विज्ञान या इंजीनियरिंग को अपना कार्यक्षेत्र बनाएँगे, वे प्रकाश

के बारे में बहुत कुछ और भी सीखेंगे। परन्तु, प्रकाश के सबसे बुनियादी सिद्धान्तों को सभी लोगों को समझना और सराहना चाहिए और वे ऐसा कर भी सकते हैं – इन्हीं सिद्धान्तों में से कुछ को इस लेख में प्रस्तुत किया गया।

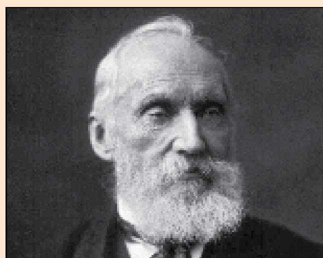


__राजाराम नित्यानन्द__ वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, बेंगलुरु में पढ़ाते हैं। इससे पहले वे रमन रिसर्च इंस्टीट्यूट में कार्यरत थे। वे अभी विज्ञान पत्रिका रैजोनेन्स के सम्पादक भी हैं। उनका अधिकांश शोधकार्य सैद्धान्तिक रहा है, और वह भौतिकशास्त्र के प्रकाश तथा एस्ट्रोनोमी से सम्बन्धित क्षेत्रों में रहा है, इसलिए उसमें गणित और गणनाएँ भी निहित रही हैं। उन्हें विद्यार्थियों और सहयोगियों (जिनमें से कई प्रयोग करने वाले वैज्ञानिक और उनकी संस्था से बाहर के लोग होते हैं) के साथ काम करने में आनन्द आता है। __अनुवाद__ : भरत त्रिपाठी

प्रोफेसर थॉमसन

WILL NOT MEET HIS
~~CLASSES~~ ~~LASSES~~ ASSES TODAY

सर विलियम थॉमसन, जो एक गणितीय भौतिकशास्त्री थे, यूनिवर्सिटी ऑफ ग्लासगो में प्राकृतिक इतिहास (जिसे अब विज्ञान के विषयों की तरह जाना जाता है) के प्रोफेसर थे। एक सनकी प्रोफेसर होने के साथ ही वे बहुत विनोदप्रिय भी थे। अक्सर उनके काम नाटकीयता से भरे होते थे, इसलिए उनके विद्यार्थी उनके बड़े प्रशंसक थे। एक बार जब वे किसी दूसरे कार्य के कारण अपना व्याख्यान नहीं दे पाने की स्थिति में थे तो उन्होंने व्याख्यान कक्ष के दरवाजे पर अपने विद्यार्थियों के लिए एक सूचना लिखकर छोड़ दी कि, "प्रोफेसर थॉमसन विल नॉट मीट हिज क्लासेज टुडे (प्रोफेसर थॉमसन आज अपनी कक्षाओं से नहीं मिलेंगे)।''



विद्यार्थियों के एक समूह को प्रोफेसर के साथ मजाक करने की सूझी। उन्होंने सावधानीपूर्वक "क्लासेज" शब्द की अँग्रेजी स्पैलिंग में से पहले अक्षर 'सी' को मिटा दिया– जिससे वह सूचना बन गई कि, "प्रोफेसर थॉमसन विल नॉट मीट हिज लासेज टुडे (प्रोफेसर थॉमसन आज अपनी छोकरियों (लड़कियों) से नहीं मिलेंगे)।" फिर वे प्रोफेसर की प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा करने लगे।

जब वे बाद में उस सूचना को फिर से देखने के लिए पहुँचे, तो उसे ऐसा पाया कि, "प्रोफेसर थॉमसन विल नॉट मीट हिज एसेज टुडे (प्रोफेसर थॉमसन आज अपने गधों से नहीं मिलेंगे)", क्योंकि विनोदप्रिय प्रोफेसर ने "लासेज" का 'एल' मिटा दिया था!

ये सनकी प्रोफेसर, कोई और नहीं बल्कि लॉर्ड केल्विन थे, जिनका जन्म विलियम थॉमसन के रूप में हुआ था, और जिन्होंने बाद में बैरन केल्विन ऑफ लार्गस की उपाधि पाई। उन्हें क्वीन विक्टोरिया ने उनके ट्रान्स अटलांटिक टैलीग्राफ प्रॉजेक्ट के लिए नाइटहुड की उपाधि, से सम्मानित किया था। अटलांटिक के आर–पार टैलीग्राफ का केबिल बिछाने वाले वे पहले सफल इलैक्ट्रिकल इंजीनियर थे। हालाँकि उन्हें समुद्री नाविकों के दिशा सूचक यंत्र (कम्पास) पर किए गए काम के लिए भी जाना जाता है, परन्तु उन्हें सबसे ज्यादा तापमान के केल्विन पैमाने की उनकी खोज के लिए जाना जाता है।

गीता अय्यर के सहयोग से प्राप्त। स्रोत : साइंस एजुकेशन रिव्यू, खण्ड 1, अंक 2–2002 (रौबेकर, 2001 में फोलिना में उल्लिखित)

__गीता अय्यर__ एक स्वतंत्र सलाहकार हैं, जो कई स्कूलों के साथ पाठ्यक्रम निर्मित करने के काम में और साथ ही, विज्ञान एवं पर्यावरण शिक्षा के क्षेत्र में संलग्न हैं। पहले वे ऋषि वैली स्कूल में शिक्षक थीं और फिर पुणे के निकट सहयाद्री स्कूल (केएफआई) की प्रमुख रहीं। उन्होंने शिक्षा तथा पर्यावरण के क्षेत्रों में विभिन्न विषयों पर विस्तृत लेखन किया है। डॉ. अय्यर से scopsowl@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। __अनुवाद__ : सत्येन्द्र त्रिपाठी



एक साक्षात्कार डॉ.सतीश खुराना के साथ

यह आलेख डॉ.सतीश खुराना के साथ एक साक्षात्कार पर आधारित है। वे वर्तमान में यूनिवर्सिटी ऑफ ल्यूवैन, बेल्जियम में रिसर्च एसोशिएट (शोध सहयोगी) हैं। उनके शोध की रुचियों में हेमाटोपोइटिक स्टेम सेल (HSCs) को नियंत्रित करने वाले आन्तरिक और बाह्य कारकों की छानबीन, HSC होमिंग (अपने उचित स्थान पर पहुँचने की प्रवृत्ति), प्रसार तथा आयु बढ़ने की प्रक्रिया आदि शामिल हैं। इसके पहले, डॉ. खुराना भारत में नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ इम्यूनोलोजी, नई दिल्ली में HSCs पर अपनी डॉक्टरेट के कार्य को पूरा कर रहे थे।



1. विज्ञान में आपकी रुचि को किस बात ने जगाया?

कई मामलों में किसी एक ऐसी घटना को चुन पाना कठिन होता है जिसने व्यक्ति की रुचि को आकार दिया होता है। मैं निश्चित तौर पर किसी एक ऐसी घटना को नहीं बता सकता जो मेरे जीवन में घटी और जिसने मेरी विज्ञान में रुचि पैदा कर दी। वास्तव में जब मैं इसके बारे में सोचता हूँ, तो बहुत–सी घटनाएँ तो इसके विपरीत ही थीं और उन्होंने अकादमिक संसार में मेरे बने रहने को ही जोखिम में डाल दिया था। कभी–कभी आप किसी ऐसी रुचि या मनोवृत्ति या स्वभाव के साथ पैदा होते हैं जिसके लिए कुछ बातें अनुकूल होती हैं और अन्य नहीं होतीं। विज्ञान मुझे उपयुक्त लगता है और मैं बस आशा करता हूँ कि मैं भी उसे करने के लिए उपयुक्त व्यक्ति हूँ। मुझे हमेशा से चीजों को घटते हुए देखने और उनका अवलोकन करने में दिलचस्पी रही है। जब आप

इसके बारे में विचार करते हैं तो इतनी साधारण बातें, जैसे कि उबलना और तलना, तिरना तथा डूबना सभी में विज्ञान निहित होता है। यदि आप यह समझने की कोशिश करते हैं कि ये चीजें क्यों और कैसे होती हैं, तो आपकी दिलचस्पी विज्ञान में है। मेरे विचार में रुचियाँ बहुत ही स्वाभाविक और व्यक्तिगत रूप से ऐसी 'आग' होती हैं जो बिना चिंगारी के जलती हैं।

---

2. क्या आप हमें ऐसी एक–दो बातें बता सकते हैं जिन्हें आपके स्कूल ने किया हो और जिनसे आपकी विज्ञान में दिलचस्पी पैदा हुई हो?

मेरी दृष्टि में विद्यार्थी अपने स्वयं के मार्ग का अनुसरण कर सकें इसके लिए स्कूलों को बहुत कुछ और करने की जरूरत है। ज्यादातर शिक्षकों को वास्तव में ऐसे कैरिअर (या गैर–कैरिअर) मार्गों की जानकारी नहीं होती जिन्हें विद्यार्थियों द्वारा उनकी रुचियों या सपनों को पूरा करने के लिए अपनाया जा सकता है। सबसे पहले तो यह बहुत महत्त्वपूर्ण है कि ऐसा पाठ्यक्रम हो जो स्वतंत्र सोच को प्रोत्साहित करे। दूसरी बात, शिक्षकों की यह जिम्मेदारी है कि वे विद्यार्थियों को उनके लक्ष्यों पर पहुँचने के लिए मार्गदर्शन दें। हो सकता है कि भारतीय विद्यार्थियों में से अधिकांश को अच्छी तरह प्रशिक्षित शिक्षक उपलब्ध न हों; उनके शिक्षक ज्यादा से ज्यादा जीविका कमाने के पारम्परिक तरीकों तक पहुँचने के लिए ही उनका मार्गदर्शन कर सकते हैं। हालाँकि अब शोध करना पहले की तुलना में अधिक पारम्परिक हो गया है, फिर भी विद्यार्थी इसके बारे में सचमुच में उत्साहित नहीं होते और न ही वे उस मार्ग के बारे में ज्यादा जानते हैं।

---

3. आप वर्तमान में जिस विषय पर कार्य कर रहे हैं उसके बारे में हमें कुछ बताएँ।

स्टेम कोशिकाएँ (ऐसी सामान्य जैविक कोशिकाएँ जो जरूरत पड़ने पर विभाजित होकर विभिन्न प्रकार के विशिष्ट कार्य करने वाली कोशिकाएँ बना सकती हैं) में मेरी रुचि रही है। मैंने अपनी पीएच.डी. यह समझने के लिए ही आरम्भ की थी कि वे कैसे काम करती हैं। मेरे प्रारम्भिक शोधकार्य यकृत के सुधार की समस्या और इसकी प्रक्रिया में हेमाटोपोइटिक स्टेम कोशिकाओं (वे HSCs जो रक्त की कोशिकाएँ बनाती हैं और हड्डी की मज्जा में रहती हैं) की भूमिका पर केन्द्रित था। ये ही सबसे जानी–मानी स्टेम कोशिकाएँ होती हैं और उन्हें इस्तेमाल किए जाते हुए अब तक काफी लम्बा समय हो गया है। मेरी पीएच.डी. के अन्त तक इससे जुड़े हुए ऐसे कई सवालों में मेरी रुचि विकसित हो गई, जिनके उत्तर इन स्टेम कोशिकाओं का चिकित्सकीय कार्य में बेहतर उपयोग करने के लिहाज से महत्त्वपूर्ण हो सकते थे। उदाहरण के लिए, जब एक बच्चे का जन्म होता है, तो उसकी नाभि–नाल का खून बेकार चला जाने वाला सहउत्पाद होता है। उसमें HSCs होती हैं जिनका अनेक रोगों के उपचार के लिए प्रत्यारोपण (ट्रांसप्लांट) किया जा सकता है। पर नाभि–नाल के खून में बहुत थोड़ी HSCs होती हैं और हड्डी की मज्जा की HSCs की तुलना में उनका पूरा काम देरी से होता है। मेरी दिलचस्पी नाभि–नाल के रक्त से निकाली गई स्टेम कोशिकाओं को चिकित्सकीय प्रत्यारोपण के लिए अधिक उपयुक्त बनाने में है। इसलिए यही मेरा लक्ष्य है। हम छोटे पशुओं के प्रतिरूपों का इस्तेमाल करके उनके भ्रूण के जीवन काल में रक्त के तंत्र के विकास में मदद करने वाले कारकों का अध्ययन करके इस लक्ष्य को हासिल करने का प्रयास कर रहे हैं।

HSCs का एक अन्य महत्त्वपूर्ण वैकल्पिक स्रोत भ्रूण की स्टेम कोशिकाओं (एम्ब्रियोनिक स्टेम सेल्स – ESCs) को इस्तेमाल करना हो सकता है, जो कि मनुष्य के शरीर में पाई जाने वाली किसी भी प्रकार की कोशिका को बना सकती हैं। लेकिन ESCs से निकाली गई HSCs पूरी तरह कार्य करने में सक्षम नहीं होती। ESCs से HSCs को निकालने के लिए हमें भ्रूण के विकास के दौरान अपनाए गए मार्गों का अनुसरण करने की जरूरत है। इसलिए भ्रूण के विकास पर किए जाने वाले अध्ययन इस

प्रक्रिया के बारे में भी महत्त्वपूर्ण अन्तर्दृष्टियाँ प्रदान कर सकते हैं।

---

4. किन अनुभवों ने आपके वर्तमान कार्य के चुनाव और उसकी प्रकृति को प्रभावित किया है?

मैंने अपनी स्नातकोत्तर पढ़ाई दिल्ली विश्वविद्यालय के वनस्पतिविज्ञान विभाग से पूरी की। मुझे वहाँ विज्ञान को पढ़ाए जाने वाली पुरानी शैली में मजा आया। और मुझे कहना होगा कि अतीत में वैज्ञानिकों की कई पीढ़ियों द्वारा किए गए श्रेष्ठ विज्ञान–कार्य के कारण वह एक प्रेरणादायक जगह है। मैंने अपने विशेष पेपर के रूप में प्लांट टिशू कल्चर को चुना। इस क्षेत्र में काम करने का फायदा यह हुआ कि इससे टिशू को हुई क्षति को सुधारने में पशु कोशिकाओं की सम्भावित क्षमता के बारे में मेरी उत्सुकता बढ़ गई। आप जानते हैं कि पशुओं के अंगों में फिर से अपने को उत्पादित करने की वैसी क्षमता नहीं होती जैसी पौधों में होती है। मैंने अपनी पीएच.डी. का काम 2003 में शुरू किया। इस बीच स्टेम कोशिका का शोध–क्षेत्र इतनी तेजी से आगे बढ़ा कि 2006 में शिन्या यामानाका और उनके सहयोगियों ने अपना शोध प्रकाशित किया, जिसने दिखाया कि हमारे शरीर की सभी कोशिकाएँ प्लूरीपोटैन्ट (बहु–क्षमतावान) बनाई जा सकती हैं और वे किसी भी प्रकार की कोशिका को उत्पादित कर सकती हैं। उदाहरण के लिए, आप त्वचा की कोशिका से यकृत की कोशिका नहीं बना सकते। लेकिन यदि आप त्वचा की कोशिका लेकर उसे उसके विकास के एक पूर्ववर्ती चरण पर वापिस जाने के लिए मजबूर करके एक ESC जैसी कोशिका (जो इन्ड्यूस्ड प्लूरीपोटैन्ट सेल या iPSC कहलाती है) बन जाने के लिए प्रेरित कर सकें, तो आप किसी भी प्रकार की कोशिका पैदा कर सकते हैं। अतः, सैद्धान्तिक रूप से और अधिकांश व्यावहारिक प्रयोजनों की दृष्टि से, आप शरीर से कोई भी कोशिका ले सकते हैं और किसी भी अन्य प्रकार की कोशिका पैदा कर सकते हैं। यदि आपको यकृत की कोशिकाओं से सम्बन्धित कोई बीमारी है, तो सैद्धान्तिक रूप से आप शरीर की कोई भी सामान्य कोशिका ले सकते हैं और यकृत की सामान्य कोशिका पैदा कर सकते हैं।



---

5. आपके लिए सामान्य कार्य दिवस किस प्रकार का होता है?

एक शोधकर्ता के लिए उसका सामान्य दिन इस पर निर्भर करता है कि वह अपने कैरिअर के किस चरण में है। प्रारम्भिक शोध–जीवन के लगभग दस वर्षों तक आप ज्यादातर प्रयोगशाला में प्रयोग करते हुए रहते हैं। मेरे लिए अब जीवन बदल

रहा है और मैं मानता हूँ कि मैं एक परिवर्तनकारी दौर से गुजर रहा हूँ, जहाँ मैं अपना सारा समय ऐसे प्रयोग, जो एक प्रश्न का ही उत्तर देते हों, को करने में बिताने के बजाय नए प्रयोग और वैज्ञानिक परियोजनाएँ निर्मित करना चाहता हूँ। हमारे क्षेत्र में एक बात सिद्ध करने के लिए बहुत से प्रयोग करना पड़ते हैं। इसलिए, यदि बुनियादी तौर पर यह पता भी हो कि आपके प्रयोग आपको कहाँ ले जा रहे हैं, आपको बहुत–सा समय उस परियोजना को समाप्त करने में लगाना पड़ेगा। मैं अभी उस अवस्था में हूँ, जहाँ मेरे पास उससे ज्यादा सवाल हैं जितने का मैं स्वयं के बल पर उत्तर दे सकता हूँ, इसलिए मैं अपना सहयोगी दल बनाने और ऐसी प्रयोगशाला बनाने की तलाश में हूँ, जहाँ हम उन सवालों पर काम कर सकें। मैं प्रयोगशाला की बैंच पर कम समय बिताना चाहता हूँ। में प्रोजेक्टों (परियोजनाओं) को कैसे लिखना, उनके लिए धनराशि की व्यवस्था कैसे करना, अपने शोधकार्य को प्रकाशित करके अपने क्षेत्र के अन्य लोगों के साथ कैसे साझा करना, ये बातें सीखने में ज्यादा समय लगाना चाहता हूँ। लेकिन यह हमेशा सम्भव नहीं होता क्योंकि अभी तक मैं पूरी तरह से एक स्वतंत्र वैज्ञानिक नहीं हूँ। कई दिन ऐसे होते हैं जब उन तमाम चीजों के कारण जिन्हें मैं पूरा करना चाहता हूँ, मेरे काम का बोझ बहुत भारी हो जाता है। इसलिए मैं बस इतना कहूँगा कि अपने प्रयोगों के कार्य को अपने भविष्य के वैज्ञानिक जीवन की रणनीतियाँ बनाने के काम के साथ सन्तुलित करने के लिए ध्यान को बहुत केन्द्रित करने की और घण्टों तक परिश्रम करने की जरूरत होती है।

---

6. जीवशास्त्र में वैज्ञानिक होने के सकारात्मक पहलू क्या हैं?

इसके बारे में मुझे कुछ पता नहीं है। सबसे महत्त्वपूर्ण बात है कि आपको अपने काम से सन्तोष होना चाहिए। अभी जो मैं कर रहा हूँ उसके अलावा किसी अन्य ऐसे क्षेत्र के बारे में सोचना, जो मुझे सन्तुष्ट कर सके, मेरे लिए कठिन है। इससे बढ़कर कोई दूसरा सकारात्मक पहलू नहीं हो सकता।

---

7. क्या कोई ऐसी चारित्रिक विशेषताएँ होती हैं जो वैज्ञानिक शोध के लिए स्वाभाविक रूप से अनुकूल होती हैं? वे क्या होंगी?

मैं मानता हूँ कि इसके लिए अवलोकन, जिज्ञासा और ज्ञान की खोज की इच्छा आवश्यक होते हैं। और फिर आपको इस क्षेत्र में बने रहने के लिए लगन की जरूरत होती है। वैज्ञानिक हमेशा वैसे नहीं थे जिस रूप में उन्हें हम आज जानते हैं। उनमें से अनेक साधारण लोग थे जो केवल जिज्ञासु थे, उन्हें अवलोकन करना अच्छा लगता थे और वे जानना चाहते थे। मेरे प्रिय वैज्ञानिक जॉर्ज मैंडल – आनुवांशिकी विज्ञान (जेनेटिक्स) के जनक, एक सन्यासी थे और वे साधारण अवलोकन और सूक्ष्म रिकार्डिंग से कितना कुछ कर सके, वह अविश्वसनीय है। इसी प्रकार एन्टोनियो वान ल्यूवेनहूक एक कपड़े बेचने वाले थे और आज हम उन्हें माइक्रोबायलोजी (सूक्ष्म जीव विज्ञान) के जनक की तरह जानते हैं। उन्होंने ऐसी चीजों का अवलोकन करने और जानने के लिए, जिन्हें हम उस समय नंगी आँखों से नहीं देख सकते थे, देखने के लिए हाथ से बनाए गए सूक्ष्मदर्शियों (माइक्रोस्कोप) का इस्तेमाल किया। इसलिए आपके भीतर कुछ ऐसा होना जरूरी है जो आपको वैज्ञानिक बनने के लिए प्रेरित करे।

---

8. एक शोध वैज्ञानिक होने के सबसे हताशाजनक पहलू क्या हैं?

वैज्ञानिक कार्य में जिस समस्या पर आप काम करते हैं, उसके बारे में आपकी जो कार्यकारी परिकल्पना होती है, उसे लेकर बहुत–सा प्रायोगिक कार्य करने की जरूरत होती है। जैविक तंत्र बहुत चतुर होते हैं और उनके गूढ़ रहस्यों को आसानी से नहीं खोला जा सकता। इसलिए कार्यकारी परिकल्पनाएँ उससे कहीं ज्यादा बार निष्फल होती हैं जितनी कि आप कल्पना करेंगे। यह हमारे कार्य का सबसे हताशाजनक हिस्सा होता है। जहाँ तक एक शोध वैज्ञानिक के जीवन की बात है, उसका

सबसे आम उत्तर यह है कि उसमें समय बहुत लगता है और आपको वित्तीय रूप से मिलता बहुत कम है। यदि आप बहुत भाग्यशाली हैं और स्कूल के समय से शुरू करके बहुत अच्छा काम करते रहे हैं, तो आपको 35 वर्ष की आयु के लगभग नौकरी मिल जाती है। अन्य पेशेवर क्षेत्रों में उच्च प्रदर्शन करने वाले व्यक्तियों की तुलना में आपको बहुत थोड़ा पैसा मिलता है, इसलिए वह बहुत से लोगों के लिए हतोत्साहित करने वाला हो सकता है। ये दोनों कारक समझे जा सकते हैं, लेकिन कई लोगों को इनसे कोई समस्या नहीं होती।

एक बात जो मेरे लिए बहुत हताशाजनक है, वह है कि आप किसी वैज्ञानिक का आकलन कैसे करते हैं। इससे मेरा मतलब यह है कि आप कैसे यह तय करते हैं कि आपका विज्ञान मेरे विज्ञान से बेहतर है। विज्ञान का आकलन करने की कसौटियाँ बहुत व्यक्तिपरक हो सकती है और वस्तुपरक कसौटियाँ बहुत पेचीदा होती हैं। एक वैज्ञानिक के रूप में यह आपका जीवन बहुत कठिन बना सकता है।

---

9. क्या पेशे के रूप में आपके द्वारा चुने गए विकल्प ने आपके व्यक्तित्व को प्रभावित किया है? यदि हाँ, तो किस तरह?

शोधकार्य उन पेशों में से है जो अधिकांश मामलों में व्यक्तिगत स्तर पर व्यक्ति में बदलाव लाते हैं। आपको सीखना पड़ता है कि ध्यान को कैसे केन्द्रित करना, किस तरह किसी समय पर कुछ चीजों को त्याग देना। शोध के लिए उपलब्ध संसाधन, खासतौर पर विकासशील देशों में, सीमित होते हैं, इसलिए आपको सभी चीजों का अच्छी तरह प्रबन्धन करना सीखना पड़ता है।

आपको युवा शोधार्थियों को प्रशिक्षित करने का अवसर मिलता है, जो उम्र के लिहाज से वास्तव में बहुत छोटे नहीं होते। इससे कार्यस्थल पर परस्पर बहुत से अन्तर्विरोध पैदा हो सकते हैं, क्योंकि एक उम्र के बाद लोगों के लिए अपने को बदलना बहुत कठिन होता है। अधिकांश जगहों पर, विभिन्न स्तरों पर कार्य करने वाले शोधकर्ता सहकर्मी होते हैं और वरिष्ठता का एहसास कम होता है, इसलिए ऐसी व्यक्तिगत भावनाओं पर नियंत्रण रखने के लिए जो सहयोगियों के साथ टकराव पैदा करती हो, आपको अपने व्यवहार को सुधारना पड़ता है।

---

10. हायर सैकेण्डरी स्कूल की पढ़ाई समाप्त करने वाले किसी विद्यार्थी को जीवविज्ञान में शोधकर्ता बनने के लिये उच्च शिक्षा में किस आदर्श पाठ्यक्रम का अनुसरण करना चाहिए?



जीवविज्ञान में शोधकर्ता बनने की प्रक्रिया लम्बी होती है। हायर सैकेण्डरी स्कूल शिक्षा के बाद, आप स्नातक शिक्षा कार्यक्रम में दाखिला लेते हैं, जिसके बाद स्नातकोत्तर डिग्री हासिल करना होती है, फिर आप विभिन्न शोध संस्थानों या विश्वविद्यालयों में पीएच.डी. के लिए उपलब्ध स्थानों को खोजते है। ऐसा अवसर या फैलोशिप मिलना कठिन हो सकता है। इसके अलावा आपकी विशेष रुचि भी उन प्रयोगशालाओं को सीमित कर देती हैं जिनमें आप जा सकते हैं। पीएच.डी. का अवसर पूर्णकालिक शोधकार्य के द्वार खोल देता है। औद्योगिक शोधकार्य स्नातकोत्तर डिग्री के बाद किया जा सकता है, परन्तु अकादमिक शोध के लिए आपको पीएच.डी. की जरूरत होती है, जो आपके उस क्षेत्र में विशेषज्ञ होने को प्रमाणित करती है। कुछ दृष्टियों से, पीएच.डी. होना चीजों को आसान बना सकता है, लेकिन वह भी यह सुनिश्चित नहीं करता कि आपका आगे का मार्ग सुगम होगा। अधिकांश अकादमिक संस्थाओं में सीमित स्थान होते हैं और आपको निरन्तर एक स्वतंत्र शोधकर्ता के रूप में अपनी योग्यताओं को प्रमाणित करना पड़ता है।

---

11. क्या जीवविज्ञान में स्नातकीय पृष्ठभूमि न होने के बावजूद कोई एम्ब्रियोलोजी (भ्रूणविज्ञान) या स्टेम कोशिका शोध की उच्च शिक्षा हासिल कर सकता है?

यह किया तो जा सकता है, बशर्ते कि आप इस विज्ञान की बुनियादी चीजों को समझने में कुछ समय लगाएँ। जीवविज्ञान की पृष्ठभूमि के बिना हो सकता है कि अधिकांश शोध संस्थाएँ आपको शोधकर्ता का स्थान देने के पक्ष में न हों। कुछ स्थानों पर जीवविज्ञान पर आधारित प्रवेश परीक्षाएँ होती हैं जो उस विद्यार्थी के लिए मुश्किल हो सकती हैं जिसकी इस विषय में कोई पृष्ठभूमि न हो। लेकिन सभी जगह एक–सी स्थिति नहीं है। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह होगी कि उम्मीदवार को यह मालूम होना चाहिए कि वह उस कोर्स को क्यों ले रहा है। जैविक व्यवस्थाएँ, भौतिकशास्त्र और रसायनशास्त्र के सिद्धान्तों का भी पालन करती हैं, इसलिए एम्ब्रियोनिक स्टेम कोशिकाओं को एक अलग दृष्टि से, समझने के लिए उसमें गुंजाइश है। उदाहरण के लिए, हाल के एक प्रोजेक्ट में हम यह समझने की कोशिश कर रहे हैं कि स्थानिक सूक्ष्म–पर्यावरण की विशेषताएँ किस प्रकार स्टेम कोशिकाओं के कार्यों को परिवर्तित कर सकती हैं। इस प्रोजेक्ट में हम अन्य प्रयोगशालाओं के साथ मिलकर काम कर रहे हैं और एक–दूसरे से चीजों को समझने की कोशिश कर रहे हैं। इसी प्रकार जीव विज्ञान के शोध समूहों में ज्यादातर जीव वैज्ञानिक या जैविक–इंजीनियर होते हैं, लेकिन उनको गणित तथा कम्प्यूटर मॉडलिंग (कम्प्यूटर से प्रतिरूप निर्मित करने) के विशेषज्ञों की भी आवश्यकता होती है।

---

12. क्या आप लोकप्रिय स्तर के अनुरूप लिखी गई कुछ ऐसी किताबें सुझा सकते हैं जो (अ) स्टेम कोशिका शोध तथा (ब) एम्ब्रियोलोजी की बुनियादी बातों को समझाती हों और जिन तक स्कूल या कालेज के विद्यार्थियों की पहुँच हो सके?

इन दोनों विषयों पर कई अच्छी किताबें उपलब्ध हैं। स्टेम कोशिकाओं के लिए, हार्वर्ड स्टेम सेल इंस्टीट्यूट ने एक ऑनलाइन (इंटरनेट पर) स्टेम किताब उपलब्ध कराई है (http://www.stembook.org)। यह जानकारी का एक अच्छा संसाधन है। बुनियादी विकासात्मक जीव विज्ञान के लिए लैंगमैन की एम्ब्रियोलोजी एक अच्छी किताब है। दुर्भाग्य से स्टेम कोशिकाओं तथा विकासात्मक जीव विज्ञान पर उपलब्ध अधिकांश किताबें ऐसे स्तर के लिए बनी होती हैं जहाँ पाठकों के लिए जीवविज्ञान की कुछ बुनियादी पृष्ठभूमि होना जरूरी होता है।

---

13. भारत में जीवविज्ञान के कुछ ऐसे शोध संस्थान कौन–से हैं जिन्हें देखने स्कूल के विद्यार्थी जा सकते हैं (जो स्कूल के बच्चों के दौरों का स्वागत करते हैं)?

मुझे विश्वास है कि अधिकांश शोध संस्थानों को स्कूल के विद्यार्थियों का मेजबान बनने में खुशी होगी। निश्चित रूप से यह एक अच्छा विचार है क्योंकि इससे स्कूली बच्चों को इसका प्रत्यक्ष अनुभव मिलेगा कि शोध प्रयोगशालाएँ किस तरह काम करती हैं। ऐसे कुछ स्थानों में से एक निश्चित ही, मेरी पुरानी शिक्षा संस्था, नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ इम्यूनोलोजी, नई दिल्ली होगी। इसके लिए सभी आई.आई.टी. और नए आई.आई.एस.ई.आर. भी अच्छे रहेंगे।

स्कूली विद्यार्थियों के प्रयोगशालाओं को देखने जाने के अलावा, मेरे विचार में वैज्ञानिकों को भी स्कूलों में जाने की जरूरत है। यह ज्यादा किफायती होगा। ऐसे बहुत से स्कूल नहीं हैं जो अपने विद्यार्थियों को शोध संस्थानों (जो ज्यादातर बड़े शहरों में हैं) के दौरों पर ले जाने का खर्च वहन कर सकते हैं। यदि भारत में हर वैज्ञानिक साल में एक दिन किसी स्कूल को देता है, तो मेरे ख्याल से यह एक बहुत अच्छी शुरुआत होगी।

---

14. एम्ब्रियोनिक (भ्रूण सम्बन्धी) स्टेम कोशिका शोध क्या है और इस शोध की नैतिकता को लेकर अक्सर बहस क्यों होती है?

मान्यता और तर्क में कई बार टकराव हो सकता है। एम्ब्रियोनिक स्टेम कोशिका (ESCs) निकालने के लिए, प्रारम्भिक चरण के भ्रूण (जो एक सम्भावित जीवन रूप होता है) को नष्ट करना पड़ता है। वैज्ञानिक मानते हैं कि ESCs पर किए जाने वाले शोध से ऐसी रणनीतियाँ निकल सकती हैं जिनके फलस्वरूप जीवन के लिए घातक कई रोगों का उपचार सम्भव हो सकेगा, लेकिन इसमें दुविधा यह है कि आपको इसके लिए एक सम्भावित जीवन रूप को नष्ट करना होगा। जिस सवाल पर अक्सर बहस होती है वह यह है कि एक भ्रूण सचमुच में मनुष्य का जीवन रूप होता है या नहीं। और विकास के किस चरण में आप वास्तव में भ्रूण को मनुष्य कह सकते हैं। यह इस पूरे मामले की जड़ है। यह केन्द्रीय तर्क–वितर्क, वास्तव में बिना किसी निष्कर्ष पर पहुँचे घण्टों तक जारी रह सकता है। इसलिए ESC–आधारित शोध के लिए अलग–अलग देशों में अलग–अलग कानून हैं। अच्छी बात यह है कि हमारे पास इसका एक विकल्प इंड्यूस्ड प्लूरीपोटैन्ट स्टेम सेल्स (iPSCs) के रूप में है जो ESCs की तरह व्यवहार करते हैं, लेकिन जिन्हें वयस्क मानव शरीर की कोशिकाओं से आनुवंशिकीय तरकीबों के ऐसे संयोजन के माध्यम से निकाला जा सकता है जो उनकी नियति को परिवर्तित कर देता है।

15. पिछले 10 सालों में स्टेम कोशिका शोध से (समाज को) हासिल होने वाले कुछ प्रत्यक्ष लाभ क्या हैं?

स्टेम कोशिकाओं का अध्ययन करने के तीन प्रमुख लाभ हैं। पहला, आप जीवधारियों के काम करने की बुनियादी प्रक्रिया के बारे में जानते हैं; दूसरा, चिकित्सकीय दृष्टि से स्टेम कोशिकाओं की जबर्दस्त सम्भावनाएँ हैं, और अन्तिम है कि वे दवाएँ विकसित करने के लिए इस्तेमाल किए जाते हैं। ये सभी तीनों महत्त्वपूर्ण हैं, लेकिन हम वास्तव में स्टेम कोशिकाओं के विकास की राह इसलिए देख रहे हैं कि उनमें रोगों तथा अन्य चिकित्सकीय असाध्य स्थितियों के उपचार की वैकल्पिक रणनीति की सम्भावना है। 1950 के दशक के बाद के वर्षों से HSCs को अक्सर चिकित्सकीय उपचार प्रक्रिया में उपयोग किया गया है, लेकिन अन्य प्रकार की स्टेम कोशिकाओं का उपयोग अभी भी सीमित तौर पर ही होता है। हाल ही में हुई प्रगति ने हड्डी तथा त्वचा से सम्बन्धित स्थितियों में स्टेम कोशिकाओं को अधिक प्रासंगिक बना दिया है। दाँतों तथा आँखों, दोनों से सम्बन्धित परीक्षणों के परिणामों में भी काफी आशाजनक सम्भावनाएँ दिखती हैं। नाभि–नाल के रक्त से निकाली गए स्टेम कोशिकाओं को आजकल अधिक मान्यता मिल रही है, हालाँकि वर्तमान में उनका उपयोग ज्यादातर खून से सम्बन्धित बीमारियों में ही किया जाता है। मुझे लगता है कि इस क्षेत्र में बहुत सम्भावना है, लेकिन इस सम्भावना को साकार होने में कुछ समय लगेगा। एक बहुत बढ़िया संसाधन, जो www.clinicaltrials.org पर उपलब्ध है, स्टेम कोशिका शोध सहित जैवचिकित्सा (बायोमेडिसिन) के विभिन्न क्षेत्रों में हो रहे चिकित्सकीय परीक्षणों के बारे में काफी जानकारी प्रदान करता है।



16. क्या अभी भी मानव भ्रूण के विकास को समझने की राह में कुछ अनुत्तरित प्रश्न बाकी हैं?

हाँ बिलकुल हैं और मुझे नहीं लगता कि वे जल्दी ही समाप्त हो जाएँगे। जाहिर है कि मानवीय विकास का अध्ययन करना कठिन कार्य है, लेकिन अगर हम प्रयोगशाला के छोटे पशुओं की बात करें, तब भी बहुत से अनुत्तरित सवाल हैं। पर यह भी स्पष्ट है कि जिस तरह के सवाल हम अतीत में पूछते रहे हैं, उनसे आज उठ रहे सवाल बहुत भिन्न हैं और उनका उद्देश्य कोशिकाओं, अणुओं तथा रासायनिक स्तरों पर स्टेम कोशिकाओं के काम करने की प्रक्रिया को अधिक विस्तार से समझना है।

17. क्या इसके बारे में आपके पास कोई सुझाव हैं कि जीवविज्ञान–सम्बन्धी शोध को अपना कार्यक्षेत्र बनाने की दिशा में ज्यादा विद्यार्थियों को प्रेरित करने के लिए विज्ञान को स्कूलों में किस तरह पढ़ाया जा सकता है?

आजकल स्कूलों की पाठ्यपुस्तकें और शैक्षणिक रणनीतियाँ कैसी दिखती हैं, इस बारे में मैं ज्यादा नहीं जानता, लेकिन मैं यह जानता हूँ कि हालिया अतीत में वे बहुत अच्छी नहीं रही हैं। कक्षाओं में सृजनात्मकता के लिए बहुत गुंजाइश नहीं रही है। न केवल विज्ञान में, बल्कि समग्र रूप से स्कूली शिक्षा में उत्सुकता, अभिनव उपायों, परम्परा से हटकर सोचने को प्रोत्साहित करने की बहुत जरूरत है। शिक्षा को अधिक व्यावहारिक, परस्पर सक्रिय रूप से जुड़ने वाली और सम्प्रेषण में सक्षम बनाया जाना जरूरी है। कक्षा में सीखना केवल शिक्षा का एक हिस्सा है। सृजनात्मकता को प्रोत्साहित और पुरस्कृत किया जाना भी आवश्यक है। विज्ञान का पूरा तात्पर्य ही प्रकृति में हो रहे क्रियाकलापों का अवलोकन करना और उन्हें समझना है; प्रौद्योगिकी फिर इस ज्ञान को व्यापक समाज के द्वारा उपयोग किए जाने के लिए उपलब्ध कराती है। स्कूल के बच्चे मुश्किल से किन्हीं भारतीय वैज्ञानिकों से परिचित होते हैं, जिसे सुधारना शिक्षा को बेहतर बनाने का एक महत्त्वपूर्ण पहलू हो सकता है। स्कूली बच्चों के लिए प्रेरित करने वाली स्थानीय कहानियों का अभाव है। भारतीय वैज्ञानिक समुदाय के साथ संवाद के अधिक अवसर मिलना वास्तव में स्कूलों के विद्यार्थियों की मदद कर सकता है। वैज्ञानिक स्कूलों में जा सकते हैं, विद्यार्थियों को अपनी कहानियाँ सुना सकते हैं, विद्यार्थियों को उनकी रुचियों को पहचानने में सहायता दे सकते हैं, और उन्हें उनके सपनों का अनुसरण करने के लिए प्रेरित कर सकते हैं। **अनुवाद** : भरत त्रिपाठी

चिकित्सकीय नींद का विज्ञान
अतीत से वर्तमान तक

अवीक जयन्त

शल्यचिकित्सा की प्रक्रियाओं में निश्चेतकों (एनेस्थेटिक्स) का प्रयोग कितने लम्बे समय से हो रहा है? एक आदर्श निश्चेतक खोजने में चिकित्सकों को किन जोखिमों का सामना करना पड़ा? आज के परिष्कृत स्तर तक निश्चेतकों को विकसित करने की प्रक्रिया में शामिल मुख्य वैज्ञानिक और चिकित्सक कौन थे? यह लेख इस महत्त्वपूर्ण चिकित्सकीय सहायक के इतिहास पर प्रकाश डालता है।

"किसी भी विद्वतापूर्ण व्यवसाय की विकास यात्रा का वर्णन सफलतापूर्वक करने के लिए किसी विशारद के हाथ की आवश्यकता होगी – कोई ऐसा व्यक्ति जिसमें डार्विन की तरह धैर्यपूर्ण अवलोकन की क्षमता के साथ दार्शनिक कल्पना दृष्टि भी हो। चिकित्सा के मामले में कठिनाइयाँ उसके असाधारण विकास के कारण और भी अतिशय बढ़ जाती हैं – उसके विकास की रफ्तार हमारे समझ पाने के लिए बहुत तेज है और इसलिए हम हतप्रभ होकर खड़े रह जाते हैं...!" (सर विलियम औसलर, 1849–1919, के ब्रिटिश मेडिकल एसोसिएशन को 1897 में दिए गए उद्‌बोधन से)

ठोस जमीन पर–जो मैं करता हूँ और जो मैं करने वाला हूँ !

हम सभी किसी न किसी समय किसी नाटक या फिल्म के अभिनेताओं द्वारा या तो आँसू बहाने के लिए या जोर से हँस पड़ने के लिए मजबूर हुए हैं। जब नाटक चल रहा हो या फिल्म की रील घूम रही हो, तो ऐसा लगता है कि कि केवल मंच पर मौजूद मुख्य पात्र ही अपना प्रदर्शन कर रहे हैं। किन्तु इनमें से प्रत्येक प्रदर्शन वास्तव में उन लोगों के जबरदस्त प्रयासों के कारण साकार हो पाता है जो पर्दे के पीछे होते हैं – वे जो रोशनियों या पोशाकों की व्यवस्था करते हैं, या जो किसी अभिनेता या अभिनेत्री को उसके संवादों की याद दिलाते हैं जब वे उन्हें भूल जाते हैं, यहाँ तक कि वे भी जो यह सुनिश्चित करते हैं कि परदा ठीक समय पर उठे या गिरे। एनेस्थीशिया का पेशा परदे के पीछे रहने वाले इन्हीं खिलाड़ियों के जैसा है। जहाँ दाँत या नाखून का निकालना सरल प्रतीत होता है, वहीं शल्यचिकित्सा बहुत जटिल भी हो सकती है – जैसे कि एक रोगग्रस्त दिल को सुधारना।

मैं वर्तमान में अपने कामकाजी जीवन का बड़ा भाग लोगों को दर्दरहित नींद की अवस्था में ले

जाने में बिताता हूँ, खासतौर पर जब उनके हृदयों को दुरस्त करने का काम किया जाता है। इसके साथ ही मैं उनके अन्य अंगों की निगरानी करता हूँ और उन्हें उनकी स्वस्थ दशा के जितना सम्भव हो उतना नजदीक बनाए रखता हूँ। पूरी प्रक्रिया के दौरान मैं हृदय की छवियाँ लेने में भी मदद करता हूँ। और अन्त में शल्य क्रिया को सम्पन्न करने में अहम भूमिका निभाता हूँ, जब मैं मरीज के जीवन–सहयोगी उपकरणों को अलग करके उसे गहन देखरेख इकाई में सुरक्षित वापिस भेजता हूँ। इस लेख में मेरा प्रयास आधुनिक निश्चेतकों (एनेस्थेटिक्स) के माध्यम से उनके विकास की यात्रा का संक्षिप्त वर्णन प्रस्तुत करना और उस पूरे विवरण के दौरान आपको यह विश्वास दिलाना है कि ज्ञान का संसार किस कदर आपस में जुड़ा हुआ है!

प्राचीन काल से

किसी मरीज के किसी अंग को पुनर्निमित करते समय उस मरीज को सुला देने की अवधारणा वास्तव में प्राचीन है। बाइबिल में उल्लेख आता है कि किस तरह सृष्टा ने आदम[1] की एक पसली निकालने के दौरान उसे कुछ देर के लिए सो जाने को प्रेरित किया। सुमेरियन कलाकृतियों में 4000 वर्ष ईसा पूर्व अफीम के पोस्ता (पॉपी) को इस्तेमाल किए जाने का चित्रण किया गया है (अफीम से निकाली गई दवाएँ, ओपियाइड्स, आज भी निश्चेतना पैदा करने का प्रमुख साधन हैं)।[2] सुश्रुत, जो पथप्रवर्तक प्राचीन भारतीय शल्यचिकित्सक थे, ने नींद लाने वाले एक पदार्थ के रूप में मद्य (शराब) का उल्लेख किया है।[3] ऐसा माना जाता है कि उन्होंने 600 वर्ष ईसा पूर्व, भाँग[2] के उपयोग की भी शुरुआत की जो शायद होली जैसे त्योहारों पर उसे खाए जाने पर उसके नींद लाने वाले गुण को देखते हुए किया गया होगा। अमेरिकी लोगों ने स्थानीय स्तर पर उगाए जाने वाले कोका का प्रयोग किया, जिसे शोधित और परिष्कृत करके आधुनिक समय का नशीला पदार्थ कोकीन[2] बनाई जाती है, जो सबसे प्रारम्भिक स्थानीय निश्चेतकों (लोकल एनेस्थेटिक्स) में से एक है। फिर कुछ अन्य लोग, जो शायद उतने कुशल अवलोकन करने वाले नहीं रहे होंगे, मरीजों को किसी शल्यक्रिया के दौरान होने वाले दर्द की तीव्रता को कम करने के लिए सलादपत्ते चबाने या दाँतों से किसी छड़ी को काटने की सलाह भी देते थे, या फिर उनके सिर पर चोट करके उन्हें बेहोश कर देते थे।[4]



पतंजलि योगपीठ हरिद्वार में सुश्रुत को समर्पित उनकी एक मूर्ति

Source: https://en.wikipedia.org/wiki/Sushruta_Samhita CC BY-SA 3.0.

समय बीतने के साथ अल्कोहल और अफीम इस प्रयोजन के लिए इस्तेमाल की जाने वाली प्रमुख दवाएँ बन गईं। लेकिन इनके साथ कई समस्याएँ थीं, जिनमें उनकी अपर्याप्त या जरूरत से ज्यादा मात्रा दिए जाने की (जो घातक होती है) सम्भावनाएँ भी थीं। और उन दोनों में से कोई भी शल्यक्रिया के दर्द का निवारण करने के लिए पर्याप्त नहीं थीं।[5] कुल मिलाकर स्थिति वैसी थी, जैसी कि विख्यात शरीरविज्ञानी और शल्यचिकित्सक, जॉन हंटर ने वर्णित की है कि शल्यक्रिया, *'विज्ञान की निरर्थकता के एक शर्मनाक दृश्य' की तरह होती थी, और उसे करने वाला*

चिकित्सक 'चाकू लिए हुए एक क्रूर आदमी[6] जैसा दिखता था।

साँस द्वारा दिए जाने वाले निश्चेतकों का जन्म

आधुनिक समय में निश्चेतकों का व्यावहारिक उपयोग बहुत हद तक चिकित्सकीय गैसों को एक यंत्र के माध्यम से पहले ट्रैकिया (श्वास नली) में और फिर वहाँ से फेफड़ों में पहुँचाए जाने पर केन्द्रित प्रतीत होता है। यह 18वीं सदी के मध्य में शुरू हुआ जब विलियम मोर्टन ने बोस्टन के मैसाचुसेट्स जनरल हॉस्पिटल में ईथर के उपयोग का प्रदर्शन किया।



मोर्टन द्वारा 1846 में ईथर का निश्चेतक की तरह पहली बार प्रयोग

Source: Ernest Board - http://catalogue.wellcome.ac.uk/record=b1203716. Public domain.

परन्तु आज उपयोग की जाने वाली मुख्य निश्चेतक गैसें, ईथर न होकर, हैलोजनेटेड एल्केन्स होती हैं। दिए जाने वाले मिश्रण के जो घटक नहीं बदले हैं, वे हैं आक्सीजन तथा कार्बन डाईआक्साइड। निश्चेतक विशेषज्ञ (एनेस्थीसियोलोजिस्ट) हमेशा से साँस द्वारा दिए जाने वाले मिश्रण में इन दोनों गैसों को देने के तरीके, उनके नियंत्रण और उनकी मात्राओं को निर्धारित करने में जुटे रहे हैं, क्योंकि वे अपरिहार्य रूप से श्वास प्रक्रिया में हर समय मौजूद रहती हैं।

जोसेफ प्रीस्टले[7] (1742–1786) ने दिखाया कि किसी बन्द जगह में मर्क्यूरिक आक्साइड को गर्म करके उसमें चूहों को अधिक समय तक जीवित रखा जा सकता था, जबकि रॉबर्ट हुक ने छोटे पशुओं के फेफड़ों में हवा फूँकने से उन्हें जीवित रखने में सफलता पाई।[8] प्रीस्टले की जानकारी इंग्लिश चौनल पार करके फ्रांसीसी रसायनविद ऐन्ट्वान लैवोजिएर तक पहुँची। उन्होंने सुझाया कि मर्क्यूरिक आक्साइड को गर्म करने पर उसमें से एक रहस्यमय नया तत्व निकलता है, जिसे उन्होंने 'आक्सीजन' कहा। फिर यह दिखाने का काम, कि चयापचय प्रक्रिया (मैटाबोलिज्म) का आधार आक्सीजन का ग्रहण करना और कार्बन डाईआक्साइड का उत्पादन था, हम्फ्री डेवी (1778–1829) ने पूरा किया, जिन्होंने अपनी स्कूली शिक्षा भी पूरी नहीं की थी। इस सिद्धान्त की पुष्टि करने वाले तार्किक प्रायोगिक प्रमाण को प्रदान करने के लिए जॉन हाल्डेन ने एक ऐसा उपकरण निर्मित किया जो श्वसन क्रिया के द्वारा जीवधारियों के भीतर जाने वाली और बाहर निकलने वाली इन गैसों की मात्रा को बिलकुल सही–सही नाप सकता था। उन्होंने, 'एनोक्सीमिया (खून में आक्सीजन की मात्रा में असामान्य रूप से कमी आना)' शब्द गढ़ा, जो एनेस्थीशिया की पाठ्यपुस्तक *'मिलर्स एनेस्थेशिया'* के सम्पादकीय लेखक के शब्दों में आधुनिक समय के हर एनेस्थीसियोलोजिस्ट के प्राथमिक प्रशिक्षण का हिस्सा होता है; उनके शब्दों में "एनोक्सीमिया न केवल मशीन का चलना बन्द कर देता है, बल्कि स्वयं मशीन को ही नष्ट कर देता है।" डॉक्टरी की पढ़ाई करने वाला कोई प्रथम वर्षीय विद्यार्थी हमारे क्षेत्र में प्रवेश करता है तो हम उसे सिखाते हैं कि एक एनेस्थीसियोलोजिस्ट के धर्म का पहला कर्तव्य होता है कि जब हमारे शल्यचिकित्सा करने वाले सहकर्मी प्रकृति की प्रक्रियाओं को चुनौती दे रहे होते हैं, तब हम ऊतकों को हो रही आक्सीजन की आपूर्ति की निगरानी रखें, उसे सही करें और पर्याप्त मात्रा में बनाए रखें। इसमें असफल होने का मतलब है हृदय के काम में बाधा आना और मस्तिष्क को खतरनाक हाईपॉक्सिक (आक्सीजन के अभाव के कारण होने वाली) क्षति पहुँचना, क्योंकि कोशिकाओं में श्वसन की प्रक्रिया के बन्द हो जाने के कारण वे मरने लगती हैं। इसलिए

जब एनेस्थीसियोलोजिस्ट लोगों को नींद में ले जा रहे होते हैं, तब भी उनका महत्त्वपूर्ण दायित्व कार्डियोवास्कुलर (हृदयवाहिनी) तथा श्वसन तंत्रों को स्थिर बनाए रखना होता है। इस विषय की हम आगे विस्तार से चर्चा करेंगे।

आधुनिक समय के एनेस्थीशिया के वास्तविक जन्म का इतिहास उससे ज्यादा लम्बा है जितना कि लोग कल्पना करते हैं। व्यापक इतिहास की अन्य प्रभावकारी घटनाओं की तरह वह भी विवादों से मुक्त नहीं है। यदि हमें किसी एक ऐसे व्यक्ति का उल्लेख करना हो जो एनेस्थेटिक्स का जनक कहलाने योग्य हो, तो वे शायद हम्फ्री डेवी[9] (1778–1829) होंगे, न कि होरेस वैल्स (1815–48) या विलियम थॉमस ग्रीन मॉर्टन (1819–68)। पर अक्टूबर 16, 1846 को मैसाचुसैट्स जनरल हॉस्पिटल में मोर्टन ने जो प्रदर्शन किया था, उसी की याद में आज सारे संसार में विश्व एनेस्थीशिया दिवस मनाया जाता है। डेवी कोई साधारण व्यक्ति नहीं थे। 15 साल की उम्र में जब उनके पिता की मृत्यु ने उन्हें और उनके परिवार को अत्यन्त गरीबी की हालत में ला दिया, तब उन्होंने स्वयं अध्ययन जारी रखने का निर्णय लिया। उस समय के उनके अध्ययन की योजना के विवरण से पता चलता है कि वे एक रसायनविद, चिकित्सक, भूगोलशास्त्री, गणितज्ञ, खगोलशास्त्री और तर्कशास्त्री बनना चाहते थे – सभी कुछ एक साथ! डेवी ने इन क्षेत्रों में से प्रत्येक में (आवर्ती तालिका में 6 तत्वों की खोज करने के द्वारा या उत्खनन को सुगम बनाने, कृषि में सुधार करने और कला का संरक्षण करने वाले आविष्कारों के द्वारा) योगदान दिया।[9] पर ब्रिस्टल न्यूमेटिक इंस्टीट्यूट में उनके जैविक गैसों के अध्ययन ने एनेस्थेशिया की राह प्रशस्त की। एक प्राथमिक कदम के रूप में डेवी ने शुरुआत अपने ही ऊपर परीक्षण करने से की। उन्होंने परीक्षण किया कि कौन–सी गैसें कोई गम्भीर नुकसान पहुँचाए बिना सुरक्षित रूप से सूँघी जा सकती थीं – कुछ सचमुच में जोखिम भरी थीं।[10] जैसे कि कार्बन मोनोआक्साइड को साँस द्वारा भीतर खींचने के उनके प्रयोग (जिसका उन्होंने एक ऐसे अभिकारक की तरह वर्णन किया जो उनकी नाड़ी की गति को 'तीव्र और तन्तु जैसी बारीक' बना देता था) ने उन्हें करीब–करीब मार ही डाला था। हम सभी यह जानते हैं कि यह गैस घातक होती है, क्योंकि यह रंगहीन तथा गंधहीन है और कोशिकाओं की श्वसन क्रिया को बाधित करने के अतिरिक्त यह हीमोग्लोबिन (Hb) द्वारा आक्सीजन का परिवहन करने के कार्य में भी रुकावट डालती है (Hb से इसका लगाव आक्सीजन की तुलना में 200 गुना अधिक ताकतवर होता है)।[11] इन्द्रियों को शिथिल करने के लिए कार्बन डाईआक्साइड का उपयोग करने के उनके प्रयोग और भी ज्यादा मजाकिया थे – फेफड़ों की पुरानी बीमारी से ग्रस्त मरीजों के अंग शिथिल करने में कार्बन डाईआक्साइड ऐसा करती है और उसके कारण वे पूरी तरह होशोहवास खो देते हैं (और इस प्रभाव के शुरुआती विवरणों में एक उन्हीं का था)।[12] परन्तु नाइट्रस आक्साइड के साथ उनका रोमांचक अनुभव ही वह घटना थी, जिसके एनेस्थीशिया के लिए प्रत्यक्ष परिणाम निकले। विशुद्ध नाइट्रस आक्साइड को साँस से भीतर लेने से, जैसा कि उन्होंने खुद पर प्रयोग किया, उनका दाँत का दर्द पूरी तरह मिट गया। आगे चलकर इसी ने शल्यक्रिया में इसके सम्भावित उपयोग को सुझाया।[13] वे उस समय कुल 21 वर्ष के थे। नाइट्रस आक्साइड गैस के नशीले (साईकोट्रोपिक – ऐसी दवाएँ जो व्यवहार या मनोदशा या गतिविधि को प्रभावित करती हैं) प्रभाव इसी से प्रदर्शित हुए कि उन्होंने इसका असर होने पर कविताएँ लिखीं।

"सज्जनो, यह कोई छल नहीं है"

अटलांटिक के पार, लगभग उसी समय ग्रामीण मेलों में, एक बिल्कुल ही भिन्न अभिकारक इसी प्रकार की मदमस्त अवस्था पैदा करने के लिए इस्तेमाल किया जा रहा था। यह अवस्था वापिस बदलकर सामान्य हो जाती थी जब उसे पैदा करने वाली वाष्प को व्यक्ति सूँघना बन्द कर देता था। इस अवस्था का प्रदर्शन 'ईथर फ्रोलिक्स (मस्तीभरी उछलकूद)' के रूप में होता था और वह अभिकारक डाईइथाइल ईथर था। इन प्रयासों

की अगुवाई करने वालों की मिली–जुली भीड़ में चिकित्सक, रसायनशास्त्री और दन्त–चिकित्सक थे – गार्डनर क्विंसी कोल्टन, होरेस वैल्स, क्राफर्ड लौंग, चार्ल्स जैक्सन तथा विलियम थामस ग्रीन मोर्टन। जहाँ एक ओर उनके अकेले और साथ–साथ किए गए प्रयासों ने श्वसन निश्चेतकों के पूरे विज्ञान की आधारशिला रखी, वहीं दूसरी ओर, स्वयं की प्रसिद्धि और धन पाने की उनकी कोशिशों ने सामूहिक वैज्ञानिक उपलब्धि की किसी भी भावना पर पानी फेर दिया। यदि किसी को 'ईथराइजेशन (ईथर देकर प्रभावित करना)' के रूप में सच्चे एनेस्थेटिक (जो नाइट्रस आक्साइड नहीं थी) का उपयोग करने वाला 'प्रथम' कहा जा सकता है, तो यह करीब–करीब निश्चित है कि वे क्राफर्ड लौंग (1815–78) थे।[14] लौंग, जो एक चिकित्सक थे, ने गौर किया कि ईथर फ्रोलिक्स के दौरान लगी चोटों के साथ किसी दर्द का एहसास नहीं होता था। 1842 में उन्होंने एक मरीज की गर्दन से एक गाँठ निकालने के लिए डाईइथाइल ईथर का निश्चेतक की तरह सफलतापूर्वक उपयोग किया, पर उनका दूसरा प्रयास केवल आंशिक रूप से ही सफल हुआ। इस दवा के प्रभाव को दोहरा पाने की क्षमता के बारे में निश्चिन्त न होने के कारण, उन्होंने उसके प्रचार का ख्याल तब तक टाल दिया जब तक कि उन्हें यह विश्वास नहीं हो गया कि ईथर के द्वारा ही एनेस्थीशिया का प्रभाव पैदा हुआ था और वह कोरी 'कल्पना का प्रभाव नहीं था'।

इन दुस्साहसी लोगों की कतार में अगले व्यक्ति एक दन्त–चिकित्सक होरेस वैल्स थे। उन्होंने दाँत निकालने के लिए सफलतापूर्वक नाइट्रस आक्साइड का प्रयोग किया, लेकिन मैसाचुसैट्स जनरल हॉस्पिटल में एक प्रदर्शन के द्वारा इसके लिए सार्वजनिक मान्यता हासिल करने के उनके प्रयास को मरीज की कराहों और आहों (यह इस निश्चेतक का एक पहलू है, हालाँकि यह इसकी प्रभावशीलता के पूर्ण अभाव का प्रमाण नहीं है) और श्रोताओं के अविश्वास का सामना करना पड़ा। श्रोताओं में मौजूद उनके एक शिष्य मोर्टन, इस संघर्ष में कूद पड़े और अपने शिक्षक के प्रयास से कुछ बेहतर करने का इरादा कर लिया। मोर्टन को भरोसा था कि उनका अभिकारक काम करेगा, लेकिन वे इस नए अनुष्ठान के प्रमुख पुजारी बनना चाहते थे, इसलिए उन्होंने अपने 'लैथिऑन' (जो वास्तव में डाईइथाइल ईथर ही था जिसमें एक रंग और कुछ अतिरिक्त गंधें मिला दी गई थीं ताकि वह एक ऐसे नए अविष्कार जैसा अनुभव हो और प्रतीत हो जिसका स्वामित्व केवल उनके पास था) के अवयवों के संयोजन का रहस्य दूसरों से साझा करने से इंकार कर दिया। उन्होंने उसे अक्टूबर 16, 1846 के दिन सफलतापूर्वक मैसाचुसैट्स जनरल हॉस्पिटल में उपयोग किया। पीछे मुड़कर देखने से लगता है कि वे बहुत भाग्यशाली थे– उन्होंने आजकल की चाय की केतली जैसे दिखने वाले जुगाड़ के उपकरण (उपयोग की गई सही–सही युक्ति की प्रकृति को लेकर बहुत विवाद है) का इस्तेमाल एक युवा पुरुष को निश्चेत करने के लिए किया, जिसकी गर्दन पर एक बड़ा वास्कुलर ट्यूमर था, जिसे मैसाचुसैट्स जनरल हॉस्पिटल के मुख्य शल्यचिकित्सक जॉन वारेन के द्वारा निकाला जाना था। आज का कोई एनेस्थीसियोलोजिस्ट ऐसी स्थिति में तमाम बातों – खून की हानि, वायुमार्ग के नियंत्रण का बिगड़ जाना, वायु का ऐम्बोलिज्म (वायु के बुलबुले का आ जाना) आदि – को लेकर बहुत सावधान रहता, लेकिन मोर्टन के मामले में ऐसा लगा कि भाग्य बहादुर व्यक्ति का साथ देता है। उनकी सफलता के केन्द्र में नाइट्रस आक्साइड की तुलना में ईथर के बहुत भिन्न भौतिक–रासायनिक गुण थे। नाइट्रस आक्साइड की अपेक्षा ईथर का प्रभाव बहुत धीरे–धीरे कम होता है। इसलिए उन दिनों में छोटी–सी गलतियों (जैसे उपकरण से विलगन ,गलत (कम) खुराक और उपकरण का समय से पहले बन्द होना) का अर्थ था शल्यक्रिया के बीच में मरीज का अचानक जग जाना और उसका उपचार करने वाले चिकित्सकों का दहशत में आना हो सकता था। ऐसी नाटकीय गड़बड़ियों के होने की सम्भावना तब अधिक होती थी जब अभिकारक (एजेंट) ईथर के बजाय नाइट्रस आक्साइड होता था। परन्तु मोर्टन अपनी सफलता का आनन्द लेने के लिए अधिक जीवित नहीं रहे।

इस अभिकारक की सफलता का श्रेय किसे मिलेगा (मोर्टन को या वैल्स, लौंग तथा दावा करने वाले अन्य लोगों को) इसकी पागलपन भरी जद्दोजहद के साथ ही मोर्टन की अपना प्रचार करने की तीव्र इच्छा ने यह सुनिश्चित कर दिया कि उनकी मृत्यु, दुखी और कर्जदार रहते हुए, बहुत कम आयु, केवल 49 वर्ष में हो गई!

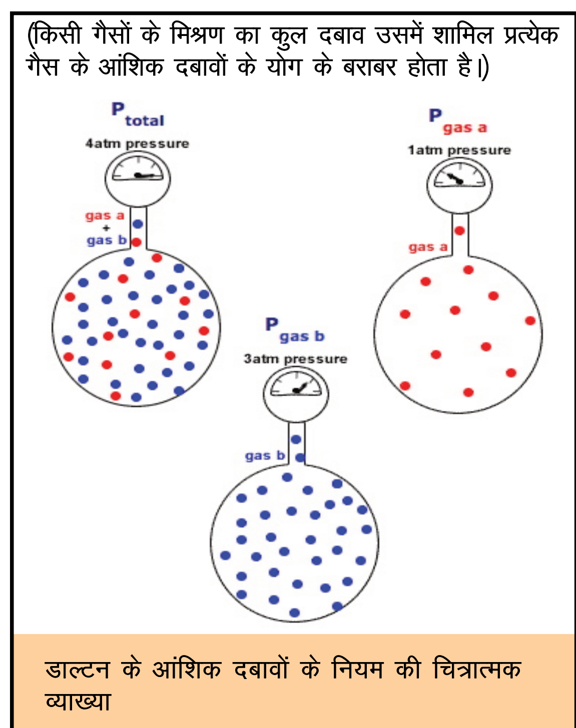
बहुत पुराने समय की यादें

क्या चीज यह निर्धारित करती है कि किसी मरीज के फेफड़ों में पहुँचाई गई गैस एल्व्यूलर झिल्ली को पार करके रक्त प्रवाह में शामिल होगी। फिर वहाँ से बाएँ हृदय से होते हुए कार्डियोवस्कुलर तंत्र द्वारा मस्तिष्क और रीढ़ तक ले जाई जाएगी ताकि वह निश्चेतक की तरह अपना असर दिखा सके? गैसों के मिश्रणों में, पूरे मिश्रण द्वारा डाले जाने वाले दबाव में प्रत्येक गैस का सापेक्षिक योगदान मिश्रण में उसकी मात्रा के अनुपात के अनुसार होता है (आंशिक दबावों का डाल्टन का नियम)। इसलिए, यदि समुद्र तल पर वायुमण्डलीय दबाव 760 मिमी. Hg है, तो वायु के मिश्रण द्वारा डाले जाने वाले इस कुल दबाव में नाइट्रोजन (उस मिश्रण में जिसे हम "वायु" कहते हैं, नाइट्रोजन का हिस्सा 78% होता है) का योगदान भी 78% अर्थात 78/100 X (760) = 592.8 मिमी Hg का होता है।

जिस तरह हम जानते हैं कि मिट्टी में डाला गया पानी विसरण की प्रक्रिया के द्वारा पौधे की जड़ों में इसलिए पहुँचता है क्योंकि पौधे के सापेक्ष मिट्टी में पानी का सान्द्रण अधिक (जब हम गमले में पानी डालते हैं) है, उसी तरह हम गैसों के लेन–देन को भी समझ सकते हैं जैसे कि वह किसी गैस के सापेक्षिक **आंशिक दबाव** के द्वारा निर्धारित होता है। विसरण की ये प्रक्रियाएँ ही वायुमण्डल की हवा से ली गई आक्सीजन को एल्व्यूलर झिल्ली के पार ले जाकर हमारे खून के हीमोग्लोबिन तक पहुँचाने की प्रणाली का संचालन करती हैं। शिराओं में बहने वाले खून में आक्सीजन का दाब श्वास के मिश्रण की वायु में मौजूद आक्सीजन के सापेक्ष कम होता है, और इसलिए निष्क्रिय रूप से उसका एल्व्यूलर कैपिलरीज (जो पतली होती हैं और आक्सीजन को पार जाने में बाधा नहीं डालतीं) में स्थानान्तरण सरलता से सम्भव हो पाता है और अन्ततः यह प्रक्रिया हो पाती है। जो चीज इस तस्वीर को कुछ जटिल बना देती है, वह पदार्थ की दो भिन्न अवस्थाओं द्रव तथा गैस की उपस्थिति – द्रव के रूप में खून और गैस के रूप में वायुमण्डलीय हवा। आंशिक दबावों के अलावा, गैसीय अवस्था से एक गैस का किसी झिल्ली के पार किसी द्रव में स्थानान्तरण उस द्रव में उस गैस की घुलनशीलता से भी प्रभावित होता है।

अब डाईइथाइल ईथर, जो मोर्गन ने इस्तेमाल किया था, का δ मान 12 है, जबकि बेचारे वैल्स के नाइट्रस आक्साइड का यही मान केवल 0.47 है इसलिए किसी दिए गए समय पर खून में लगभग 12/0.47 = 25 गुना ज्यादा ईथर घुला रहता है जितनी की उसी आंशिक दबाव पर नाइट्रस आक्साइड होती है। मान लीजिए कि श्रीमान वैल्स नाइट्रस आक्साइड देने में अचानक रुक जाते या उनकी नाइट्रस आक्साइड समाप्त हो जाती, तो निश्चेतना को बनाए रखने के लिए जरूरी नाइट्रस आक्साइड के आंशिक दबाव को बनाए रखने के लिए खून में से निकलकर बाहर आने के लिए

(किसी गैसों के मिश्रण का कुल दबाव उसमें शामिल प्रत्येक गैस के आंशिक दबावों के योग के बराबर होता है।)



डाल्टन के आंशिक दबावों के नियम की चित्रात्मक व्याख्या

घुलनशीलता गैस का वह आयतन होती है जो किसी दिए गए तापमान पर किसी द्रव के इकाई आयतन में घुल जाती है, इसे आमतौर पर ओस्वाल्ड गुणांक या पार्टीशन (विभाजन) गुणांक δ के रूप में मापा जाता है। एक बन्द चेम्बर में एक द्रव के सम्पर्क में किसी गैस की कल्पना करें, तब द्रव अवस्था में गैस के सान्द्रण का समतुल्य अवस्था में उसके सान्द्रण से अनुपात ही पार्टीशन गुणांक δ होता है। (समतुल्य अवस्था अर्थात जब आंशिक दबाव बराबर हो जाते हैं और किसी सान्द्रण ढलान के आर–पार विसरण के व्यापक नियमों का पालन करते हुए यह स्थानान्तरण की प्रक्रिया बन्द हो जाती है।)

उसकी घुली हुई मात्रा बहुत कम रहती है। दूसरी ओर, श्रीमान मोर्गन को यदि नींद भी आ जाए, तो भी उनके मरीज के रक्तप्रवाह में डाईइथाइल ईथर का बड़ा आयतन मौजूद रहता है। इसका गैस के रूप में बाहर विसरण होता रह सकता है, भले ही बीच में चिकित्सक ईथर देना बन्द कर दें, यह विसरित गैस मरीज को कुछ देर तक सोया हुआ बनाए रखेगी। इसी से इन दो ऐतिहासिक निश्चेतकों की भिन्न यात्राओं को समझा जा सकता है।

परन्तु डाईइथाइल ईथर का एक प्रतिकूल पहलू भी होता है (इसकी आधुनिक एनेस्थेशिया में तकरीबन कोई जगह नहीं है)। ईथर का इस्तेमाल करते हुए, एक कल्पित मरीज को सुला देने की कल्पना कीजिए – अब जो चीज मस्तिष्क पर काम करके निश्चेतना पैदा करती है, वह खून में बिना घुली 'मुक्त' गैस होती है जो खून और मस्तिष्क के अवरोध को पार करती है। जब ईथर जैसी बहुत घुलनशील गैस इस्तेमाल की जाती है, तो इसके पहले कि खून में बिना घुली गैस की उल्लेखनीय मात्रा मरीज के मस्तिष्क तक पहुँचने और उसे बेहोश करने के लिए मिल सके, उस ईथर की बहुत सारी मात्रा मरीज के खून के बड़े आयतन में घुले हुए (और इसलिए किसी उपयोग की नहीं) ईथर के रूप में चली जाती है। इसलिए ईथर का दिया जाना, जहाँ एक ओर मरीज के एक बारगी निश्चेत किए जाने के बाद उसका काफी देर तक सोए रहने के लिए बड़ी सुरक्षा गुंजाइश देता है, वहीं दूसरी ओर निश्चेतना तक मरीज को पहुँचाने की स्थिति हासिल करने में बहुत समय लगता है – जो अस्पतालों, एनेस्थीशिया विशेषज्ञों और शल्य चिकित्सकों को उस अजीब गंध से भर देने के लिए पर्याप्त होता है जिसे हममें से कई लोग अस्पतालों से जोड़ते हैं (हालाँकि अब यह पुराने इतिहास की बात है, क्योंकि ईथर दिए जाने का युग अब लगभग समाप्त हो चुका है)। दूसरे आज के जैसे व्यस्त संसार में, जहाँ अस्पतालों की सुविधाएँ, उनका उपयोग करने की जरूरत वाले मरीजों की विशाल संख्या की तुलना में बहुत कम होती हैं, निश्चेत मरीजों के शरीर में घुले हुए ईथर से उबरकर उनके जागने का इन्तजार करने में समय की बहुत बर्बादी होगी।

"कष्ट में तू बच्चों को जन्म देगी"

जब मोर्गन इत्यादि अमेरिका में इस सबमें उलझे हुए थे, लगभग उसी समय ब्रिटेन में इसके समानान्तर नाटकीय घटनाएँ घट रही थीं। इनके केन्द्र में जेम्स यंग सिम्पसन थे, जो मुख्य रूप से प्रसूति–विशेषज्ञ (ऑब्सटेट्रीशियन) थे, लेकिन एक बहुत चतुर और बहुगुणी व्यक्ति भी थे। सिम्पसन (1811–90) की ऐसी दवाओं में भी बहुत दिलचस्पी थी जो दर्द को समाप्त कर सकें। जब अमेरिका में मरीजों को ईथर दिए जाने का वर्णन किया गया, तब उन्होंने जल्दी ही उसका एक नमूना हासिल कर लिया और एक जटिल प्रसूति में सम्मोहन के स्थान पर उसका उपयोग किया। इसके एक प्रत्यक्षदर्शी ने इस तरह इसका वर्णन किया कि, *"यह यैंकी (अमेरिकी) चकमा सम्मोहन को चारों खाने चित्त कर देता है।"* इसी बीच कार्बनिक रसायनविदों ने और भी बहुत से यौगिकों का संश्लेषण आरम्भ कर दिया था और इस तरह 1830 के दशक में क्लोरोफॉर्म का आगमन हुआ। ईथर (जो तब तक उसकी उड़ने की क्षमता के कारण सभी के दिमाग को चकरा रहा था और

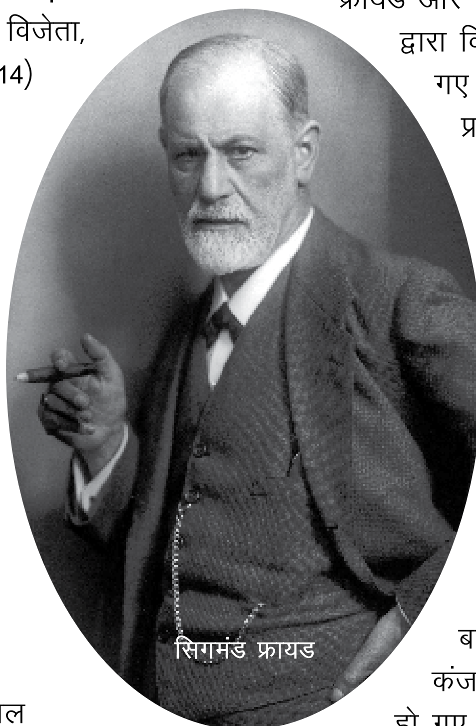
उससे लोग तंग आ रहे थे) की तुलना में उसका रक्त गैस पार्टीशन गुणांक थोड़ा कम था और वह उसके जैसा ज्वलनशील भी नहीं था। सिम्पसन ने पहले उसे अपने ऊपर प्रयोग किया, फिर अपनी भतीजी पर और धीरे–धीरे प्रसूति के दर्द को मिटाने के लिए स्त्रियों पर इस्तेमाल किया।[14] कहा जाता है कि सिम्पसन को इसके इस्तेमाल के खिलाफ विरोध का सामना करना पड़ा, क्योंकि धर्मशास्त्रियों का मानना था कि मूल पाप (जैसा कि बाइबिल में बताया गया है) के दण्ड के रूप में बच्चे के जन्म की प्रक्रिया का कष्टप्रद होना ही ईश्वरीय विधान था, हालाँकि आजकल माना जाता है कि यह धार्मिक विरोध हल्का–फुल्का ही था।[14] इसके एक अन्य केन्द्रीय पात्र विख्यात जॉन स्नो थे जिन्हें आधुनिक एपिडेमियोलोजी का पिता माना जाता है। स्नो ने एक सामान्य निश्चेत प्रक्रिया के विभिन्न चरणों को परिभाषित किया और उसके अत्याधिक मात्रा में दिए जाने के खतरों के प्रति चेताया। परन्तु क्लारोफॉर्म तथा ईथर के ऐतिहासिक महत्त्व के बावजूद – निम्न कार्यशक्ति स्तर, असर होने व असर दूर होने में लगने वाले लम्बे समयों, ज्वलनशीलता (आक्सीजन का इस्तेमाल और विद्युतीय ऊर्जा का उपयोग करते हुए शल्यचिकित्सा के दौरान बने घावों का कॉटेराइजेशन, अर्थात उन्हें दागकर खून बहना बन्द करना, आदि का मेल शल्यचिकित्सा कक्ष में आग लगने के सन्दर्भ में खतरनाक है) आदि दोषों के कारण – वे शायद ज्यादा समय तक उपयोग की परीक्षा में खरे साबित नहीं हो सकते थे। शुद्ध अभिकारकों की माँग, और 20वीं सदी के शुरुआती दौर में रासायनिक संश्लेषण में हो रही क्रान्ति के चलते उनकी जगह शक्तिशाली और अपेक्षाकृत गैर–विषैले अभिकारकों ने ले ली, जैसे कि फ्लूओरिनेटेड हाइड्रोकार्बनों ने, जो आज इस्तेमाल हो रहे हैं। इनका रक्त गैस पार्टीशन गुणांक काफी बेहतर है (जैसे कि सबसे नए निश्चेतक डैसफ्लूरेन का 0.42 है, जिसका मतलब है कि यह असर करने में और गायब होने में सबसे तेज है, फिर आइसोफ्लूरेन का 1.15 है जो कि आज सबसे ज्यादा इस्तेमाल होता है), ये आग लगने में सहयोग नहीं देते, जल्दी असर करते हैं और असर उतरने में भी तेज हैं – इतने कि अधिकांश लोग अस्पताल में सुबह आपरेशन करवाकर शाम को घर आकर खाना बनाने में मदद कर सकते हैं![15]

हिन्दी फिल्मों का विमर्श और वास्तविक जीवन का परदे के जीवन से फर्क होना

टेलीविजन पर एनेस्थीशिया दिए जाने के अधिकांश चित्रण और फिल्मों में दिखाई जाने वाली दुर्घटना या बच्चे के जन्म के दौरान उसके नाटकीय दृश्य वास्तविकता से बहुत परे होते हैं। आमतौर पर उनकी शुरुआत एक मास्क पहने हुए पुरुष या स्त्री के द्वारा मरीज की नाक और मुँह को ढाँककर उनमें गैस दिए जाने से होती है। उस दौरान प्रसूता स्त्री दर्द के मारे हाथ–पैर पटकती रहती है, शायद मूल तकलीफ की वजह से या इस तरह नियंत्रित किए जाने के कारण, जब तक कि वह बेहोशी में जाकर सो नहीं जाती। वह फिर जागेगी या नहीं, इसका फैसला आमतौर पर कथानक के द्वारा होता है – या तो जब हम फिल्म के अन्त के नजदीक पहुँच रहे होते हैं तब नाटकीय ढंग से उसकी हालत सुधर जाती है, या फिर गायब नायक का चिन्ता भरा इन्तजार चलता है जो आकर फिर अपनी जादुई छड़ी घुमाएगा। इसके विपरीत, आजकल संसार भर के शल्यचिकित्सा कक्षों के शान्त वातावरण में अधिकांश एनेस्थेशिया के मामलों की शुरुआत इन्ट्रावेनस (नस में प्रवेश कराए जाने वाले) निश्चेतक दवाएँ दिए जाने से होती है।

गैस के विपरीत, इन्ट्रावेनस एनेस्थीशिया के विकास में कई बाधाएँ थीं – उनमें से कुछ थे : गैर–इरादतन हुए सूक्ष्मजीवाणुओं के संक्रमणों (जिसके परिणामस्वरूप सैप्सिस हो जाती थी, अर्थात घाव बनकर पक जाते थे) के बहुत अनर्थकारी प्रभाव, सुइयों तथा सिरिंजों के रूप में जटिल उपकरणों की जरूरत, और उनका असर समाप्त होने के लिए शरीर के अंगों की चयापचय प्रक्रिया पर निर्भर रहना (इसके विपरीत गैस का असर उसे साँस द्वारा छोड़े जाने से ही समाप्त हो जाता है)। दर्ज किए गए पहले इन्ट्रावेनस निश्चेतक प्रयोग में कुत्ते के ब्लैडर और

कलहंस (गूज) के पंख की कलम का इस्तेमाल करके एक कुत्ते को अल्कोहल का इंजेक्शन लगाया गया, वह कुत्ता सो तो गया पर फिर जाग गया और जीवित भी रहा। यह प्रयोग करने वाले नायक थे क्रिस्टोफर रैन जो ब्रिटैन में 1656 में रायल सोसाइटी के संस्थापक थे।[16] इंजेक्शन लगाने के उपकरणों – सुइयों (फ्रांसिस रिंड, 19वीं सदी) तथा सिरिंजों के विकास (अलेक्जेंडर वुड, लगभग उसी समय) के रूप में – से तब तक कोई लाभ नहीं हुआ जब तक कि उस सदी के आखिर में संश्लेषण रसायनशास्त्र की क्रान्ति नहीं हुई। इसे लाने वाले लोगों मे एक बड़ी हस्ती रसायनविद और नोबेल पुरस्कार विजेता, अलेक्जैंडर वॉन बेयर (1835–1914) थे[17], जिन्होंने इंडिगो, फ्लूरोसीन, तथा बारबिचुरिक एसिड (मानसिक दौरों को निश्चेत कर रोकने में आज इस्तेमाल होने वाले बारबिचुरेट्स का जनक) का संश्लेषण किया। फिर 20वीं सदी के पहले हिस्से में उद्योग तथा विज्ञान के गठजोड़ ने सक्रिय होकर भिन्न–भिन्न संरचनाओं वाले विविध प्रकार के अभिकारकों का संश्लेषण किया – प्रोपोफोल, एटिओमिडेट और बैन्जोडायाजैपिन्स आदि। आज इन अभिकारकों का इस्तेमाल या तो एनेस्थेटिक अवस्था की शुरुआत को सुखद बनाने के लिए होता है, जिसके बाद गैस एनेस्थीशिया में जाते हैं, या अकेले एनेस्थेटिक की तरह होता है। गैसीय एनेस्थीशिया आज भी सबसे ज्यादा इस्तेमाल होने वाला आम तरीका होता है – इसे देना सुगम होता है, चयापचय क्रिया पर निर्भर नहीं करता, इसका शरीर से निकलना ज्यादा तेजी से होता है जो ऐसे मरीजों के लिए अच्छा होता है जिनके यकृत या गुर्दे (जो दवा की चयापचय क्रिया (मैटाबोलिज्म) के मुख्य स्थान हैं) रुग्ण होते हैं – ये सभी इसे बेहतर साबित करते हैं। चूँकि सभी विसरण प्रक्रियाओं की तरह इसका अन्त समतुल्यावस्था में होता है, श्वास मिश्रण में इन गैसों के सान्द्रण को नापने का तरीका मस्तिष्क में उनके सान्द्रण का आकलन करना होता है जहाँ वे असर करती हैं। यह माप जरूरत से ज्यादा या कम खुराक को सही बनाने में सहायता करती है।


सिगमंड फ्रायड

शस्त्रागार में नए शस्त्र : स्थानिक निश्चेतक (लोकल एनेस्थीशिया)

यह 18वीं सदी के मध्य तक ज्ञात हो चुका था कि जीभ पर कोकीन लगाने से वह सुन्न हो जाती है। परन्तु, एनेस्थीशिया को नए शस्त्र सिगमंड फ्रायड और उनके सहयोगी, कार्ल कोलर के द्वारा विएना जनरल हॉस्पिटल में किए गए चेतना प्रसारी (साईकेडेलिक) प्रयोगों के परिणामस्वरूप प्राप्त हुए। कोलर के सहयोगी ने जब संयोग से एक चाकू पर से थोड़ी कोकीन चाट ली तो उसने पाया कि उसकी जीभ सुन्न पड़ गई थी। उसके दिए गए विवरण ने कोलर को प्रेरित किया और उन्होंने तत्काल एक मेंढक और एक गिनी पिग की आँखों में कोकीन डालकर देखा (कोलर की आकांक्षा एक नेत्र विशेषज्ञ बनने की थी), जिससे उनकी कंजक्टिवा तथा कोर्निया संवेदनशून्य हो गए। हाइडेलबर्ग ऑप्थेलमोलोजिकल सोसाइटी को 1884 में दिए गए इसके विवरण ने प्रयोगों की एक नई शृंखला की शुरुआत कर दी – तंत्रिकाओं में इंजेक्शन देकर (हाल्सटैड के द्वारा जो एक महान शल्य चिकित्सक थे) या रीढ़ की नलिका में (बायर के द्वारा 1897 में)। बाद वाली विधि के फलस्वरूप अनेक तंत्रिकाओं का समूह एक साथ सुन्न हो जाता था। स्थानिक निश्चेतक को एक समय व्यापक निश्चेतक से बेहतर समझा जाता था। हालाँकि स्थानिक या शरीर–क्षेत्रीय निश्चेतक की सहायता से किए जाने वाले शल्य चिकित्सा के कार्य की जटिलता और शरीर विज्ञान की दृष्टि से उसकी व्यापकता

को लेकर कई सीमाएँ हैं, परन्तु इस औजार की उपयोगिता बनी रहने वाली है – इन्ट्रावेनस दवाओं[18] की तुलना में दर्द से बेहतर राहत दे पाने से लेकर शल्य चिकित्सा से ज्यादा जल्दी उबर सकना[19], शल्य चिकित्सा के बाद दर्द के लगातार बने रहने को रोकना[20], या जब फेफड़ों या उनके आसपास के क्षेत्रों की शल्यचिकित्सा की जाती है तब फेफड़ों में सांस लेने या खाँसी आने से होने वाली किसी गड़बड़ी को रोकना आदि इनके कई लाभ हैं।[21]

युद्ध के बीच में नई राह दिखाने वाला विज्ञान

गुजरी 20वीं सदी का एक हिंसक दौर था जिसके पूर्वार्ध पर दो विश्वयुद्ध अपने जख्मों के निशान छोड़ गए हैं। पृष्ठभूमि में इन घटनाओं के रहते हुए, जटिल शल्य चिकित्सा की माँग पिछले किसी भी दौर की तुलना में बहुत अधिक बढ़ गई। युद्ध के हताहतों का उपचार करने के अलावा, शल्य चिकित्सक अब शान्ति के दौर में शरीर के फेफड़ों जैसे जटिल अंगों को निकालने के प्रयास कर रहे थे या जीवन को खतरे में डालने वाली हृदय की बीमारियों में राहत देने वाली शल्य चिकित्सा कर रहे थे।[22] शल्य चिकित्सा चलने के दौरान हृदय तथा श्वास तंत्रों पर एकदम सही नियंत्रण रखने की जरूरत के फलस्वरूप ऐसी परिष्कृत मशीनों की माँग होने लगी जो गैस के बिलकुल सही सान्द्रणों को दे सकें, एकदम सही संघटन वाली हवा के नपेतुले आयतनों को दे सकें और मौसम की स्थितियों को मापने वाले उपकरणों के समान ऐसे यंत्रों, जो किसी भी मँडराते संकट की पूर्वसूचना दे सकें इत्यादि की भी माँग बढ़ी। युद्धों का अक्सर मतलब होता था कि उनकी अवधि के दौरान शान्ति के समय का विज्ञान थम जाता था (इसके कारण होते थे : आर्थिक संकट और युद्ध के लिए वैज्ञानिकों और चिकित्सकों की अनिवार्य भर्ती)। लेकिन इस दौरान परमाणुओं के सूक्ष्म कणों के व्यवहार का वर्णन करने वाले, क्वांटम मैकेनिक्स के जन्म ने ऐसे उपकरणों और प्रौद्योगिकियों के विकास में क्रान्ति ला दी जो हमारे आधुनिक जीवनों के केन्द्र में हैं : ट्रान्जिस्टर, कम्प्यूटर, इलेक्ट्रान माइक्रोस्कोप तथा मैगनेटिक रैजोनैन्स इमेजिंग आदि। एनेस्थीशिया, चिकित्सा विज्ञान के उन क्षेत्रों में से है जो ऐसी प्रौद्योगिक क्रान्तियों पर सबसे ज्यादा निर्भर करते हैं।

आधुनिक वैन्टीलेटर्स (कृत्रिम श्वास मशीनें) एक वैन्टीलेटर चक्र की शुरुआत का समय निर्धारित करने या एक यांत्रिक श्वास का अन्त तय करने के लिए माइक्रोप्रोसेसर्स का इस्तेमाल करते हैं। स्पेक्ट्रोफोटोमीटरी का विज्ञान खून में मौजूद आक्सीजन का सतत मापन करने (केन्द्रीय तंत्रिका व्यवस्था (सेंट्रल नर्वस सिस्टम) पर कोई खतरनाक प्रभाव पड़ने के पहले ही उनके बारे में एनेस्थीसियोलिजिस्ट्स को चेतावनी देने) का आधार है। परिष्कृत निगरानी यंत्रों का मतलब है कि एनेस्थीशिया प्रदान करने वाले विशेषज्ञ दूसरी बातों पर ध्यान केन्द्रित कर सकते हैं, जैसे कि सायानोसिस (आक्सीजन के अभाव के कारण त्वचा पर नीले रंग का उभरना) को नंगी आँख से देख लेना, या मौजूदा ब्लड प्रेशर के बारे में मिनट दर मिनट जानकारी देना या मानव हृदय को भरना और खाली करना।

एनेस्थीशिया तथा प्रौद्योगिकी : इनका तालमेल हमारे रिपोर्ट कार्ड से सिद्ध होता है

एनेस्थीशिया विशेषज्ञ पहले आक्सीजन के निम्न स्तरों को जीभ या म्यूकस की झिल्ली के रंग से या फिर आक्सीजन निकल चुके खून के नीले रंग से पहचानते थे। पर शल्य चिकित्सा के दौरान, अक्सर कोई सार्थक कदम उठा सकने की दृष्टि से इसमें बहुत देर हो चुकी होती थी। आज एक पल्स ऑक्सीमीटर, बिना भीतर कुछ चुभोए उँगली की नोक पर से आक्सीजन युक्त खून तथा आक्सीजन रहित खून के आपेक्षिक सान्द्रणों को धड़कन दर धड़कन नापता रहता है। इस मान को निकालने के लिए यह उपकरण स्पैक्ट्रोफोटोमीट्रिक सिद्धान्तों का उपयोग करता है और चिकित्सक को त्वरित कार्यवाही करने के लिए सजग करता है। इन्फ्रारैड स्पैक्ट्रोफोटोमीट्री यह पहचान लेती है कि

कोई नली सही में ट्रैकिया (श्वास नली) में लगी है, या गलती से इसोफेगस (भोजन नलिका) में लग गई है। कई बार एनेस्थीशिया के प्रशिक्षार्थी और विशेषज्ञ, दोनों ही भूल से नली को ट्रैकिया के बजाय भोजन नलिका में लगा देते हैं, परिणामस्वरूप गैस फेफड़ों के बजाय पेट में भर जाती है।

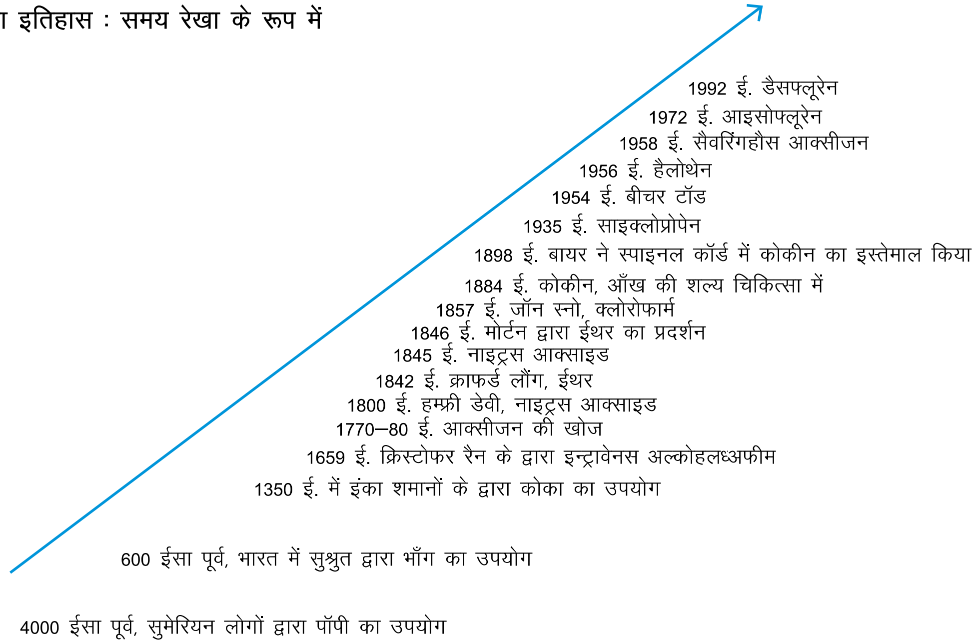
इलैक्ट्रोकार्डियोग्राम सीने की सतह पर लगे इलैक्ट्रोडों के द्वारा बनाए जाते हैं, ब्लड प्रेशर का मापन औसिलोमीट्री के सिद्धान्तों का उपयोग करते हुए अपने आप होता रहता है। एनेस्थीशिया देने वाला चेतना पर परिमाणात्मक रूप से निगरानी रखने के लिए भी कई उपकरणों का इस्तेमाल कर सकता है, जो उसे निश्चेतक की दी जाने वाली उचित मात्रा को निर्धारित करने की सुविधा देते हैं। आजकल चेतना को परिमाणात्मक रूप से बताने के लिए विभिन्न सूचकांक इस्तेमाल किए जाते हैं।[23] ये सूचकांक बुनियादी इलैक्ट्रोऐनसैफ्लोग्राम (EEG, ECG के समान ये भी सतही तरंगें होती हैं, पर ये मनुष्य के मस्तिष्क के भीतर कोर्टिकल कोशिकाओं में होने वाली विद्युतीय गतिविधि को प्रतिबिम्बित करती हैं) से मिलने वाली जानकारी का उपयोग करके विकसित किए जाते हैं। ये मस्तिष्क की व्यवस्था की माप होते हैं[24], जो एनेस्थीशिया के गहरे होने पर बढ़ जाती है। एक शोध समूह, जिसके साथ मैंने काम किया है, ने एक ऐसी कम्प्यूटर–आधारित व्यवस्था विकसित की है जो अपने आप एनेस्थीशिया की मात्रा को आवश्यकतानुसार बढ़ा या घटा देती है, जो वैसे एनेस्थीशिया विशेषज्ञ को खुद तय करके अपने हाथ से करना पड़ता है।[25]

पर इस सबसे यदि हम यह सोचने लगें कि एनेस्थीशिया अन्तर्निहित रूप से सुरक्षित है, तो हमें 2002 में रूस की सेना को हुए अनुभव से सावधान हो जाना चाहिए। 2002 में सेना का सामना एक ओपेरा हाउस में आतंकवादियों द्वारा बन्धक बनाए गए लोगों के संकट से हुआ। सेना ने गतिरोध को तोड़ने के लिए वहाँ एक एनालजेसिक ओपियोइड, फैन्टानिल (जो दर्द से छुटकारा देने के साथ–साथ नींद और, उसकी खुराक पर निर्भर करते हुए, एक गहरा श्वास आघात भी पैदा करता है) का छिड़काव किया। उसके परिणामस्वरूप भीतर मौजूद लोगों में से 129 लोग (जो कुल उपस्थित लोगों का 15% थे) मारे गए, जिनमें निर्दोष लोग तथा आतंकवादी दोनों ही थे।[26]

हैनरी बीचर तथा डोनाल्ड टॉड वे पहले व्यक्ति थे जिन्होंने व्यवस्थित रूप से एनेस्थीशिया के जोखिमों का आकलन किया; उनके अध्ययन से पता चला कि आपरेशन थिएटर में होने वाली मौतों में से लगभग 1:2000 मौतों का सीधा सम्बन्ध एनेस्थीशिया के प्रबन्धन से था। यदि इसकी कोई विशेष तकनीक इस्तेमाल की गई थी (जैसे कि शल्य चिकित्सा को सुगम बनाने के लिए मांसपेशियों को ढीला करना) तो यह अनुपात 1:370 था।[27]

न्यूरोमस्कुलर प्रक्रिया को बाधित करने वाली दवाओं (जो मांसपेशी के साथ तंत्रिका के सिरे पर काम करती हैं, जैसे कि बोटुलिनम टॉक्सिन या नर्व गैस), की यदि शेष रह गई क्रियाक्षमता को न देखा जाए, तो वे घातक हो सकती हैं। इस अध्ययन ने सिद्ध किया कि यदि एनेस्थीशिया विशेषज्ञ अधिक सावधान रहें और इन दवाओं के प्रभावों की नजदीकी निगरानी करें, तो उसके परिणामस्वरूप एनेस्थीशिया की सुरक्षा को बेहतर बनाया जा सकता है। अमेरिका जैसे बड़े देश में, 1999–2005 की अवधि में 2,211 मरीजों की एनेस्थीशिया से जुड़े कारणों से मौत हुई। एक अध्ययन में अनुमान व्यक्त किया गया कि एनेस्थीशिया के जोखिम का अनुपात प्रति वर्ष प्रति दस लाख आबादी में 1.1 के लगभग था, जो कि शायद किसी आतंकवादी हमले के जोखिम से भी कम है।[28] ऐसे ही प्रभावशाली आँकड़े आस्ट्रेलिया में भी दर्ज किए गए।[29] हमारे देश में प्रति 1,00,000 की जनसंख्या में से लगभग 12 लोगों की हर साल सड़क दुर्घटनाओं में मौत होती है![30] इसलिए, शल्य चिकित्सा के लिए बेहोश किए जाने की अपेक्षा बस या कार से यात्रा करना ज्यादा असुरक्षित हो सकता है। इस प्रकार, मनुष्य के कौशल और प्रौद्योगिकी के गठजोड़ ने एनेस्थीशिया

एनेस्थीशिया का इतिहास : समय रेखा के रूप में



को एक सुरक्षित विशेषज्ञ विधा बना दिया है। सफलता की यह कहानी मानव जीवन में योगदान दे सकने की अच्छे विज्ञान की सम्भावित क्षमता का प्रमाण है। पर हम इस अनुच्छेद का एक बात के प्रति चिन्ता के साथ अन्त कर सकते हैं : जहाँ सारे संसार में एनेस्थीशिया से सम्बन्धित मृत्यु दर में बहुत गिरावट आई है, वहीं इसमें विकसित दुनिया के देशों और कम विकसित देशों या उभरती हुई अर्थव्यवस्थाओं वाले हमारे जैसे देशों के बीच में बहुत फासला है।[31] यह प्रौद्योगिकी के खराब इस्तेमाल, बुरे विज्ञान (और इसी को आगे बढ़ाते हुए शिक्षा देने वालों के द्वारा अपर्याप्त विज्ञान शिक्षा दिया जाना) और स्वास्थ्य सेवाओं पर बहुत कम खर्च किया जाना आदि कारणों का मिला–जुला परिणाम हो सकता है।

एनेस्थीशिया से आगे : चिकित्सा को समर्थ बनाने वाली विशेषज्ञ विधा से उपचार में भागीदार तक

एनेस्थीशिया चिकित्सा को समर्थ बनाने वाली विशेषज्ञ विधा है, अर्थात यह सुरक्षित रूप से शल्य चिकित्सा कर सकने में सहायता करती है, परन्तु उपचार से होने वाले लाभ का कारण एनेस्थेटिक (निश्चेतक) न होकर स्वयं शल्य चिकित्सा ही होती है। अतः हमारे लिए उचित है कि जितनी सम्भव हो उतनी सुरक्षा बरती जाए। परन्तु एनेस्थीशिया के खुद भी उपचारात्मक प्रभाव हो सकते हैं। क्यूरारे वैसे तो एक खतरनाक दवा है, पर वह टिटनैस से होने वाली भयंकर रूप से दर्दनाक तड़प को मिटाने के लिए इस्तेमाल की गई है।[32] निश्चेतकों ने हृदय को आपदा सहन कर सकने के लिए तैयार करने (जिसे पूर्व–अनुकूलन कहा जाता है, और जो वैसा ही है जैसे कि हम भविष्य में आने वाले मुश्किल दौरों के लिए बैंक में पैसे जमा करके रखते हैं) की क्षमता भी दर्शाई है।[33] डेनमार्क में फैली पोलियो की महामारी ने निश्चेतना विशेषज्ञ बिजोर्क इब्सन को प्रेरित किया और उन्होंने श्वास तंत्र के विफल होने की तकलीफ (जो पोलियो वायरस से पैदा हुए लकवे के प्रभाव के अलावा एक द्वितीयक प्रभाव होता है) भोग रहे बच्चों को सकारात्मक दबाव वैन्टीलेशन की विधि का उपयोग करते हुए जीवित रखा।[34] चिकित्सकों का एकमात्र लक्ष्य जरूरतमन्दों की मदद करना और उनका उपचार करना होता है। उनकी सर्वोच्च परम्पराओं का पालन करने की भावना से, वैन्टीलेशन का यह उपचार सैकड़ों एनेस्थीशिया प्रशिक्षार्थियों, एनेस्थीशिया विशेषज्ञों तथा अन्य चिकित्सकों द्वारा चौबीसों घण्टे अपने हाथों से

प्रदान किया गया। इब्सन की कार्यवाही में ही हमारी आज की गहन परिचर्या इकाइयों (इन्टेन्सिव केयर यूनिट्स) की स्थापना के बीज निहित थे।[34] एक निश्चेतना विशेषज्ञ वर्जीनिया ऐपगर ने नवजात शिशुओं को दो वर्गों में अलग करने – वे जिन्हें अतिरिक्त देख–रेख की जरूरत होगी और वे जो अपने–आप स्वाभाविक रूप से रह सकते हैं – के लिए प्रथम स्कोर[35] की पद्धति निर्मित की, उनके स्कोर का आज तक उपयोग किया जाता है। यह सभी चिकित्सकों को उनके पहले शिशु चिकित्सा प्रशिक्षण चक्र के दौरान पढ़ाया जाता है।

खून में आक्सीजन तनाव को बिलकुल सही–सही नापने की उनकी जरूरत के कारण, निश्चेतना विशेषज्ञों ने नई प्रौद्योगिक विधियों – जैसे कि आर्टीरियल (धमनियों की) आक्सीजन[36] को नापने के लिए इलेक्ट्रोड – को विकसित करने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। एनेस्थीशिया प्रबन्धन के द्वारा कैंसर की शल्य चिकित्सा के बाद ट्यूमर के फिर से होने की दर[37] को या हृदय रोग से पीड़ित मरीजों की हृदय के अलावा किसी अन्य प्रकार की शल्य चिकित्सा में सम्भावित दिल का दौरा पड़ने की दर को प्रभावित किया जा सकता है।[38]

ज्ञान की सीमारेखा का विस्तार करना : क्या सोया होना आपको यह सिखा सकता है कि जागे रहने का क्या मतलब है?

क्वांटम मैकेनिक्स के युग की और उसके अध्ययनों के परिणामस्वरूप मेडिकल इमेजिंग (चिकित्सकीय छायांकन) के क्षेत्र में हुई जबरदस्त प्रगति की हम पहले ही चर्चा कर चुके हैं। आज उपयुक्त विधियों – जैसे कि फंक्शनल मैगनेटिक रैजोनेंस इमेजिंग (fMRI) या पोजिट्रॉन ऐमिशन टोमोग्राम्स (PET) – का इस्तेमाल करते हुए, स्वस्थ तथा रुग्ण अवस्था में, मस्तिष्क के कामकाज का शरीर के खास क्षेत्रों से सम्बन्ध जोड़ सकना सम्भव है।[39,40] एनेस्थीशिया दिए गए किसी मरीज की कल्पना करें जिसकी fMRI हो रही हो – दवा के कारण पैदा हुई सम्मोहित अवस्था के दौरान उसके मस्तिष्क का देखने वाला हिस्सा (विज़ुअल कोर्टेक्स) सक्रिय रहता है। क्या यह हमें इस बात की खबर नहीं देता कि विज़ुअल कोर्टेक्स की गतिविधि का जागे होने या सोए होने की अवस्था से कोई पारस्परिक सम्बन्ध नहीं होता? इसी प्रकार, ऐसा प्रतीत होता है कि एनेस्थीशिया का पेराइटल–फ्रंटल कोर्टिकल लूप के कार्यकारी ढंग से अलग–अलग हो जाने की प्रक्रिया से भी सम्बन्ध होता है। इसका सीधा–सीधा अर्थ है कि हालाँकि हो सकता है कि ये क्षेत्र अलग–अलग सक्रिय हों या न हों, पर आपस में उनका वार्तालाप जैसा रिश्ता ही संज्ञान का कारण होता है (सरलीकरण करते हुए कह सकते हैं कि पेराइटल क्षेत्र संवेदन अनुभव करने वाला होता है और फ्रंटल क्षेत्र उन संवेदनों की व्याख्या करने वाला होता है)। मोटेतौर पर संज्ञान ही वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा हम अपने आसपास की दुनिया को देखते, सुनते, विचार करते और अनुभव करते हैं। ये सारे संवेदन एनेस्थीशिया द्वारा कुछ समय के लिए समाप्त कर दिए जाते हैं। निश्चेतक दवाएँ, इनसे सम्बन्धित विशेष क्षेत्रों को प्रभावित नहीं करतीं, पर वे इनके बीच होने वाले वार्तालाप को समाप्त कर देती हैं। इस प्रकार एनेस्थीशिया की प्रक्रियाएँ हमें इस बारे में अन्तर्दृष्टि प्रदान करती हैं कि जाग्रत अवस्था में मस्तिष्क किस प्रकार काम करता है।

आगे बढ़े चलो!

प्रागैतिहासिक काल से हमारे भीतर और हमारे बाहर के प्राकृतिक संसार को समझने की हमारी खोज यात्रा एक अनवरत परम्परा की तरह चलती रही है। यह तलाश हमसे ज्ञान की सीमारेखाओं को निरन्तर विस्तार करने में जुटे रहने की माँग करती है। आज एनेस्थीशिया विशेषज्ञ शल्य चिकित्सा के दौरान हृदय की मरम्मत का मार्गदर्शन करते हैं, तंत्रिकाओं के आसपास के क्षेत्र में स्थानिक निश्चेतक देने के लिए अल्ट्रासाउण्ड का उपयोग करते हैं इत्यादि। अब एनेस्थीशियोलोजी एक अति–विशेषज्ञ (सुपर–स्पेशियालाइज्ड) चिकित्सा शाखा बन गई है, जिसकी उप शाखाएँ पीडियाट्रिक्स, कार्डियालोजी, न्यूरोलोजी, दर्द और गहन परिचर्या आदि हैं। आगे जाने का केवल एक ही मार्ग है –

उसी आदि भावना से निरन्तर सजग और जीवन्त बने रहना जो विज्ञान का आधार है।

References

1. “And the LORD God caused a deep sleep to fall upon Adam, and he slept: and he took one of his ribs, and closed up the flesh instead thereof”. Genesis 2.21-2.23, King James Bible "Authorized Version", Cambridge Edition. URL: http://www.kingjamesbibleonline.org/Genesis-2-21/

2. The History of Anesthesia Timeline. Wood Library-Museum of Anesthesiology. URL: http://www.woodlibrarymuseum.org/history-of-anesthesia. Accessed March 2015.

3. Sushrutha- our proud heritage. Bhattacharya S. Ind J Plast Surg 2009; 42:223-25.

4. Bite down on a stick: the history of anesthesia. Inglis- Arkell E. URL: http://io9.com/5787069/bite-down-on-a-stick-the-history-of-anesthesia. Accessed March 29, 2015.

5. Surgery before anesthesia. Sullivan JT. ASA Newsletter Sept 1996; 60:9:8-10.

6. Dentistry’s answer to “the humiliating spectacle”. Jacobson PH. J Am Dental Assoc 1994; 1576.

7. A history of medicine. Major R. Springfield IL, CC Thomas 1954.

8. An account of an experiment made by Mr Hooke, of preserving animals alive by blowing through their lungs with bellows. Hooke R. Phil Trans 1666-67; 2: 539-40.

9. Humphry Davy: his life, works and contribution to anesthesiology. Riegels N, Richards MJ. Anesthesiology 2011; 114:1282-8.

10. Carbon monoxide poisoning – Causes. National Health Services, UK. URL: http://www.nhs.uk/Conditions/Carbon-monoxide-poisoning/Pages/Causes.aspx. Accessed last on March 29 2015.

11. Carbon monoxide poisoning. Weaver LK. New Engl J Med 2009; 360:1217-25.

12. Researches Chemical and philosophical chiefly concerning nitrous oxide. Davy H. Bristol, Biggs and Cottle, 1800.

13. Nitrous oxide revisited, evidence for potent anti-hyperalgesic properties. Richebe P, Rivat C, Creton C, Laulin J-P, Maurette P, Lemaire M et al. Anesthesiology 2005; 103: 845-54.

14. Early experiments with inhalation anaesthesia: Morton and the ether controversy. Coley NG. Proceedings of the History of Anaesthesia Society 2000; 28: 10-18.

15. Meta- analysis of average and variability of time to extubation comparing isoflurane with desflurane or isoflurane with sevoflurane. Agoliati A, Dexter F, Jason L, Danielle M, Muhammad S, Stuart S et al. Anesth Analg 2010; 110:1433-39.

16. A history of intravenous anaesthesia. White PF. Eger EI, Saidman L, Westhorpe RN eds, The Wondrous Story of Anaesthesia. Springer New York 2014.

17. "Adolf von Baeyer - Biographical". Nobelprize.org. Nobel Media AB 2014. URL: http://www.nobelprize.org/nobel_prizes/chemistry/laureates/1905/baeyer-bio.html. Accessed last on March 29, 2015.

18. Epidural anaesthesia and outcome of major surgery: a randomised trial. Rigg JR, Jamrozik K, Myles PS, Silbert BS, Peyton PJ et al. Lancet 2002; 359:1276-82.

19. Prolonged epidural infusion improves functional outcomes following kee arthroscopy in patients with arthrofibrosis after total knee arthroplasty: a retrospective evaluation. Saltzmann BM, Dave A, Ahuja M, Amin SD, Bush- Joseph CA. J Knee Surg 2014; DOI: 10.1055/s-0034-1394163.

20. A systematic review of therapeutic interventions to reduce acute and chronic post surgical pain after amputation, thoracotomy or mastectomy. Humble SR, Dalton AJ, Li L. Eur J Pain 2015; 19: 451-65.

21. Influence of pain on postoperative ventilator disturbances: management and expected benefits. Beaussier M, Genty T, Lescot T, Aissou M. Ann Fr Anesth Reamin 2014; 33:484-6.

22. 1910-50: Anesthesia before, during and after two world wars. Eger EI II, Westhorpe RN, Saidman LJ. In Eger EI, Saidman L, Westhorpe RN eds, The Wondrous Story of Anaesthesia. Springer, New York, 2014.

23. Bispectral index monitoring allows faster emergence and improved recovery from propofol, alfentanil, and nitrous oxide anesthesia. Gan TJ, Glass PS, Windor A, et al. BIS Utility Study Group. Anesthesiology. 1997;87(4):808-815.

25. Closed-loop anaesthesia delivery system (CLADS) using bispectral index: a performance assessment study. Puri GD, Kumar B, Aveek J. Anaesth Intensive Care 2007; 35: 357-62.

26. The Moscow Theater Hostage Crisis: The Perpetrators, their Tactics, and the Russian Response. Adam Dolnik and Richard Pilch. International Negotiation, 8:577–611, 2003. URL: http://www.academia.edu/1498225/the_moscow_theater_hostage_crisis_their_tactics_and_rusain_response. Accessed Apr 06, 2015.

27. A study of the deaths associated with anaesthesia and surgery. Beecher HK, Todd DP. In 599,548 anaesthesias in ten institutions 1948-52, inclusive. Ann Surg 1954; 140:2-35.

28. Epidemiology of Anaestheisa related mortality in the United States, 1999-2005. Li G, Warner M, Lang

BH, Huang L, Sun LS. Anesthesiology 2009; 110:759-65.

29. Report of the Committee convened under the auspices of the Australian and New Zealand College of Anaesthetists. Melbourne: Australian and New Zealand College of Anaesthetists; 2006. Gibbs N, Borton C. Safety of Anaesthesia in Australia: A review of anaesthesia related mortality, 2000–2002.

30. Road accidents in India, 2013. Government of India - Ministry of Road Transport & Highways Transport Research Wing, New Delhi. URL: http://morth.nic.in/writereaddata/mainlinkFile/File1465.pdf Accessed 06 Apr, 2015.

31. Perioperative and anaesthetic related mortality in developed and developing countries: a systematic review and meta- analysis. Bainbridge D, Martin J, Arango M, Cheng D. Lancet 2012; 380:1075-81.

32. Tetanus treated with tubocurarine and intermittent positive pressure ventilation. Honey GE, Dwyer BE, Smith AC, Spalding JM. Br Med J. 1954 Aug 21; 2(4885): 442–443.

33. Enflurane enhances post- ischemic functional recovery in the isolated rat heart. Freedman BM, Hamm DP, Everson CT, Wechsler AS. Anesthesiology 1985; 62:29-33.

34. The first intensive care unit in the world: Copenhagen, 1953. Berthelsen PG, Cronqvist M. Acta Anesthesiol Scand 2003l 47:1190-5.

35. A proposal for a new method of evaluation of the newborn. Apgar V. Infant. Curr Res Anesth Analg 1953; 32:260-7.

36. Electrodes for blood and gas PCO2, PO2 pH. Severinghaus JW. Acta Anaesthesiol Scand 1962; 11:207-20.

37. Can anaesthetic and analgesic techniques affect cancer recurrence or metastasis? Heaney A, Buggy DJ. Br J Anaesth 2012; 109 (suppl 1): i17-i28.

38. Effects of extended release metoprolol succinate in patients undergoing non cardiac surgery: a randomised controlled trial. POISE study group. Lancet 2008; 371: 1839-47.

39. Types of Brain Imaging Techniques. Michael Demitri, M.D. Psych Central (2013). URL: http://psychcentral.com/lib/types-of-brain-imaging-techniques/. Accessed on 06 April, 2015.

40. Functional imaging of memory processes in humans: positron emission tomography and magnetic resonance imaging. Poeppel TD, Krause BJ. Methods 2008; 44:315-28.

41. What is fMRI? UC San Diego Center for Functional MRI. URL: http://fmri.ucsd.edu/Research/whatisfmri.html. Accessed on 06 April, 2015.

42. Integrating the science of consciousness and anesthesia. Mashour GA. Anesth Analg 2006;103: 975-82.



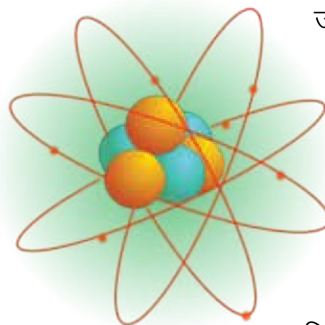
अवीक जयन्त *(एम.डी.,डी.एम.) पोस्टग्रेजुएट इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल एजुकेशन एण्ड रिसर्च, चण्डीगढ़ की फैकल्टी के सदस्य हैं। उन्होंने ऋषि वैली स्कूल से 1995 में अपना इण्डियन स्कूल सर्टिफिकेट प्राप्त किया और तमिलनाडु डॉक्टर एम.जी.आर. मेडिकल यूनिवर्सिटी, चेन्नई से 2000 में स्नातक की उपाधि हासिल की। उन्हें PGIMER, चण्डीगढ़ द्वारा 2005 में एनेस्थीशियोलोजी में डॉक्टरल उपाधि प्रदान की गई और श्री चित्र तिरुनाल इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल साइंसेज एण्ड टैक्नोलोजी, तिरुअनन्तपुरम द्वारा 2009 में कार्डियाक एनेस्थीशियोलोजी में पोस्टडॉक्टरल उपाधि प्रदान की गई। अपनी चिकित्सकीय जिम्मेदारियों को निभाने के अलावा वे एक शोधकर्ता भी हैं तथा कभी–कभी 'द हिंदू' और 'द ट्रिब्यून' जैसे अखबारों के लिए लिखते भी हैं।* ***अनुवाद*** *: भरत त्रिपाठी*

परमाणु भार की गाथा

सुशील जोशी एवं उमा सुधीर

परमाणु भारों की अवधारणा पर विचार करने वाले पहले लोग कौन थे? तत्वों के परमाणु भार की गणना पहली बार किस तरह की गई थी? इस लेख में लेखकों ने परमाणु भार के व्यापक रूप से इस्तेमाल किए जाने वाले अवधारणात्मक ढाँचे की उत्पत्ति से लेकर आज जारी बहसों तक की लम्बी वैज्ञानिक यात्रा की छानबीन की है।

तत्वों का परमाणु भार वह अकेला विचार है जो डाल्टन के परमाणु सिद्धान्त को पदार्थ की प्रकृति के बारे में प्रचलित पूर्ववर्ती कण–आधारित धारणाओं से भिन्न बनाता है। परमाणु भार का सिद्धान्त रासायनिक अभिक्रियाओं तथा उनके परिणामों के सभी मात्रात्मक पहलुओं के पूर्वानुमान को सम्भव बनाता है। हम मानकर चलते हैं कि परमाणु भार की धारणा तो हमेशा से थी, और शायद ही कभी उसके बारे में इस तरह सोचते हों कि यह एक अवधारणात्मक ढाँचा है जो 19वीं सदी में शुरू हुई तल्ख बहसों का परिणाम है। परमाणु भार की गाथा न केवल अत्यन्त रोचक है, वह हमें इस बात को भी समझने में मदद करती है कि वैज्ञानिक किस तरह काम करते हैं। इस कहानी का रास्ता बहुत घुमावदार है और यह उस काल के कई अग्रणी वैज्ञानिकों के योगदानों से समृद्ध बना है। इस अवधारणा के इर्दगिर्द चलने वाली कुछ बहसें आज भी जारी हैं।



आरम्भ

यह एक जाना–माना तथ्य है कि परमाणु जैसे सूक्ष्म कणों की धारणाएँ प्राचीन काल से मौजूद रही हैं। किसी अन्तिम कण की बात भारत में कणाद ने और ल्यूसिपस तथा डेमोक्रिटस ने यूनान में की थी। परन्तु आधुनिक परमाणु के 'अस्तित्व' का श्रेय कई रसायनशास्त्रियों के प्रयासों को जाता है, जिनकी परिणति डाल्टन के परमाणु सिद्धान्त में हुई।

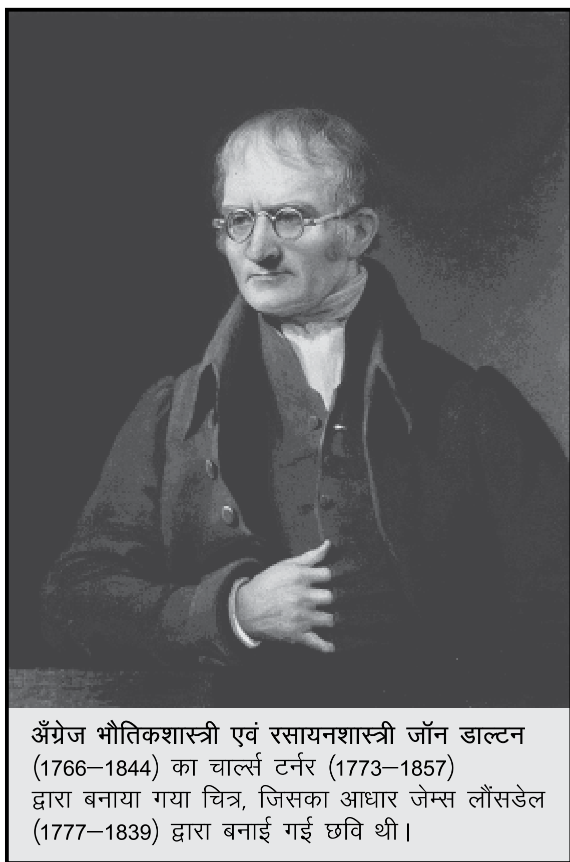
अठारहवीं सदी में रसायनशास्त्रियों ने रासायनिक क्रियाकलापों का मात्रात्मक रूप से अध्ययन करना प्रारम्भ किया, जिसके परिणामस्वरूप उन्होंने रासायनिक संयोग के कई नियम प्रतिपादित किए। इनमें द्रव्यमान के संरक्षण का नियम, स्थिर अथवा निश्चित अनुपात का नियम और व्युत्क्रम अनुपात का नियम शामिल थे।

इन नियमों को देखते हुए जॉन डाल्टन ने सोचा कि उन्हें केवल तभी समझाया जा सकता था जब

हम पदार्थ को किसी अन्तिम अविभाज्य कण से बना हुआ मान लें। यदि वे इस कथन पर ही रुक जाते तो आधुनिक परमाणु वह साधन न बना होता जिससे रासायनिक अभिक्रियाओं को समझा जाता है, उनकी व्याख्या की जाती है और भविष्यवाणी की जाती है। डाल्टन ने प्रतिपादित किया कि :

1. समस्त पदार्थ अन्ततः परमाणुओं से बने होते हैं, जिन्हें न तो और विभाजित किया जा सकता है और न ही एक–दूसरे में बदला जा सकता है।
2. परमाणुओं का न तो सृजन किया जा सकता है और न ही उन्हें नष्ट किया जा सकता है।
3. एक ही तत्व के सभी परमाणुओं का भार एक समान होता है और वे आकार और रूप आदि में भी एक जैसे होते हैं।
4. रासायनिक परिवर्तन पूरे के पूरे परमाणुओं का एक–दूसरे से जुड़ना या अलग होना होता है।

इन मान्यताओं के आधार पर ऊपर उल्लिखित रासायनिक संयोग के प्रायोगिक नियमों को समझाया जा सकता था। इसके साथ ही, इस सिद्धान्त के आधार पर गुणित अनुपात के नियम की भविष्यवाणी भी की गई। जब यह भविष्यवाणी सही सिद्ध हुई, तो इससे डाल्टन के सिद्धान्त को मजबूती मिली। इस सिद्धान्त की बुनियाद सुदृढ़ थी। इस बात पर गौर किया जाना चाहिए कि ये सारे नियम रासायनिक अभिक्रियाओं के बारे में मात्रात्मक कथन थे और उन्होंने एक ऐसी व्याख्या का मार्ग प्रशस्त किया जो स्वयं भी मात्रात्मक थी।



अँग्रेज भौतिकशास्त्री एवं रसायनशास्त्री जॉन डाल्टन (1766–1844) का चार्ल्स टर्नर (1773–1857) द्वारा बनाया गया चित्र, जिसका आधार जेम्स लौंसडेल (1777–1839) द्वारा बनाई गई छवि थी।

डाल्टन इसे बहुत अच्छी तरह समझते थे। 1808 में 'ए न्यू सिस्टम ऑफ केमिकल फिलोस्फी' में उन्होंने एक सदी पहले रॉबर्ट बॉयल के द्वारा किए गए अवलोकनों और उनसे निकाले गए निष्कर्षों, रासायनिक संयोग के नियमों और विशेष रूप से स्थिर अनुपात के नियम की बात करते हुए लिखा था कि :

> ''इन अवलोकनों से एक अनकहा निष्कर्ष निकलता है जो सर्वमान्य लगता है कि सारे पदार्थ, चाहे तरल हों या ठोस, अत्यंत छोटे–छोटे अनगिनत कणों से *या परमाणुओं* से मिलकर बने हैं और ये कण एक आकर्षक बल से एक दूसरे से जुड़े होते हैं, यह बल परिस्थिति के अनुसार कम–ज़्यादा *शक्तिशाली* होता है।''

> ''यह निष्कर्ष पूरी तरह संतोषप्रद लगता है; मगर हमने इसका कोई उपयोग नहीं किया है और *इस उपेक्षा* का परिणाम यह है कि रासायनिक क्रियाओं का एक बहुत ही धुँधला चित्र बन पाया है।''

(डाल्टन सबसे छोटे कण को परमाणु (एटम) ही कहते थे, चाहे वह तत्व का हो या यौगिक का।)

जिस 'उपेक्षा' की डाल्टन ने बात की उसका सम्बन्ध उनके सिद्धान्त के बिन्दु 3 से था। उनके पास बहुत–सी जानकारी और आँकड़े थे। बहुत सावधानीपूर्वक इकट्ठी की गई जानकारी के आधार पर उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि :

''समस्त रासायनिक जाँच–पड़ताल में इस उद्देश्य को उचित ही महत्त्वपूर्ण माना गया है कि उन सरल पदार्थों के सापेक्षिक भार पता किए जाएँ जिनसे मिलकर यौगिक बनते हैं। मगर दुर्भाग्यवश खोजबीन यहीं रुक गई; जबकि यह सम्भव है कि कुल वजन में सापेक्ष वजन के आधार पर पदार्थों के सबसे छोटे कणों यानी परमाणुओं के सापेक्षिक भारों का अनुमान लगाया जा सके, जिनके आधार पर विभिन्न अन्य यौगिकों में उनकी संख्या और वजन पता चल जाएँगे। इससे आगे खोजबीन में मदद और मार्गदर्शन मिलेगा और उनके परिणामों को दुरुस्त किया जा सकेगा। तो सरल व यौगिक दोनों तरह के पदार्थों के अन्तिम कणों के सापेक्षिक भार, किसी यौगिक के एक कण में उपस्थित सरल मूलभूत कणों की संख्या और अपेक्षाकृत बड़े यौगिक कण में उपस्थित छोटे यौगिक कणों की संख्या ज्ञात करने के महत्त्व और फायदों को दर्शाना इस रचना का एक प्रमुख उद्देश्य है।''

यह कहने के बाद डाल्टन ने भिन्न–भिन्न अन्तिम कणों, अर्थात परमाणुओं, के भारों की गणना की।

डाल्टन ने की परमाणु भार की गणना

डाल्टन को यह तो बहुत स्पष्ट था कि परमाणु इतने छोटे थे कि उन्हें एक–एक करके तौलने का प्रयास करना निरर्थक था। किन्तु हम अनुमान लगा सकते हैं कि उन्होंने औसत भारों की गणना की होगी। परन्तु, याद रखना होगा कि उन्नीसवीं सदी के आरम्भ में, कुल जानकारी विभिन्न तत्वों के संयोजी भारों की ही थी। उदाहरण के लिए, जब हाइड्रोजन आक्सीजन के साथ अभिक्रिया करती थी, तब उनका अनुपात हाइड्रोजन के 1 ग्राम के साथ आक्सीजन के 8 ग्राम का था। लेकिन इस ज्ञान के आधार पर आप इन दो तत्वों के परमाणु भारों की गणना कैसे कर सकते हैं?

अभिक्रिया में शामिल इन दो तत्वों के भार आपको इनमें से प्रत्येक तत्व के अभिक्रिया में भाग लेने वाले परमाणुओं की संख्या के बारे में कुछ भी नहीं बताते। और इसका तो कोई तरीका नहीं था कि डाल्टन 1 ग्राम हाइड्रोजन या 8 ग्राम आक्सीजन में मौजूद परमाणुओं की संख्या का पता लगा सकते।

दूसरे शब्दों में, यह जरूरी था कि आपको या तो पहले से पानी का रासायनिक सूत्र ज्ञात हो या प्रत्येक तत्व के किसी खास भार में मौजूद परमाणुओं की संख्या ज्ञात हो। इस कठिनाई को हम आज समझ सकते हैं कि डाल्टन के पास इन दोनों में से किसी को भी जानने का कोई उपाय नहीं था। लेकिन उन्होंने इससे हार नहीं मानी।

वे कुछ बुनियादी मान्यताएँ लेकर इस काम को पूरा करने के लिए आगे बढ़े। हालाँकि उनकी मान्यताएँ गलत सिद्ध हुईं, परन्तु उनके चतुराई भरे तर्क और विलक्षण जुगाड़ के महत्त्वपूर्ण परिणाम हुए।

इस समस्या को हम थोड़े और व्यवस्थित तरीके से देखें। रासायनिक गणित की ठोस जमीन पर दृढ़तापूर्वक स्थापित डाल्टन के सिद्धान्त से स्पष्ट निष्कर्ष निकलता है कि रासायनिक अभिक्रियाओं में तत्व पूर्ण परमाणुओं की तरह भाग लेते हैं। इसलिए हम पानी के लिए कई सूत्र लिख सकते हैं।

डाल्टन ने कहा कि :

''यदि ऐसी कोई दो वस्तुएँ, A और B, हैं जिनमें संयुक्त होने की प्रवृत्ति है, तो उनका संयोजन निम्नलिखित क्रम में हो सकता है, जिसकी शुरुआत सबसे सरल संयोजन से होगी, अर्थात :

- *A का 1 परमाणु +B का 1 परमाणु = C का 1 परमाणु, द्विपरमाणविक*
- *A का 1 परमाणु +B के 2 परमाणु = D का 1 परमाणु, त्रिपरमाणविक*
- *A के 2 परमाणु +B का 1 परमाणु = E का 1 परमाणु, त्रिपरमाणविक*
- *A का 1 परमाणु +B के 3 परमाणु = F का 1 परमाणु, चतुष्परमाणविक*
- *A के 3 परमाणु +B का 1 परमाणु = G का 1 परमाणु, चतुष्परमाणविक और इसी प्रकार आगे भी*

रासायनिक संश्लेषण से सम्बन्धित हमारी समस्त जाँच–पड़ताल में निम्नलिखित सामान्य नियमों को मार्गदर्शक की तरह अपनाया जा सकता है :

1. *यदि किन्हीं दो वस्तुओं का केवल एक संयोजन प्राप्त किया जा सकता हो, तो उसे द्विपरमाणविक माना जाना जरूरी होगा, जब तक कि कोई तथ्य इसके विपरीत न हो।*
2. *यदि दो संयोजन देखे जाते हैं, तो उनमें से एक को द्विपरमाणविक और दूसरे को त्रिपरमाणविक माना जाना चाहिए।*
3. *जब तीन संयोजन देखे जाते हैं, तो उनमें से एक को द्विपरमाणविक और शेष दो को त्रिपरमाणविक माना जाना चाहिए।*
4. *जब चार संयोजन देखे जाते हैं, तो हमें उनमें से एक के द्विपरमाणविक, दो के त्रिपरमाणविक और एक के चतुष्परमाणविक होने की उम्मीद करना चाहिए आदि।"*

पहले से ही अच्छी तरह से ज्ञात रासायनिक तथ्यों के साथ इन नियमों का उपयोग करते हुए, डाल्टन निम्नलिखित ढंग से आगे बढ़े। उनके अनुसार प्रकृति सरल होती है। यदि दो तत्व मिलकर एक यौगिक बनाते हैं, तो निश्चित ही वे ऐसा प्रत्येक के एक परमाणु के सरल अनुपात में करेंगे। यदि उन्हीं तत्वों के संयोजन से एक से अधिक यौगिक बनते हैं, तो ऊपर बताए गए क्रम के अनुसार दूसरे अनुपातों पर विचार किया जा सकता है।

अब इस सन्दर्भ में हम पानी के उदाहरण पर विचार करें।

उन्नीसवीं सदी के प्रारम्भिक दौर में, हाइड्रोजन तथा आक्सीजन का केवल एक यौगिक ज्ञात था, पानी। इसलिए डाल्टन की विधि और नियमों का पालन करते हुए, हाइड्रोजन का एक परमाणु आक्सीजन के एक परमाणु से संयोजन करके पानी का एक 'परमाणु' देगा। वास्तविक भारों की दृष्टि से पाया गया कि हाइड्रोजन का 1 ग्राम, आक्सीजन के 8 ग्राम से मिलकर 9 ग्राम पानी का उत्पादन करते हैं। तो इससे हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि 8 ग्राम आक्सीजन में उतने ही परमाणु होंगे जितने कि 1 ग्राम हाइड्रोजन में होते हैं। इसलिए आक्सीजन का प्रत्येक परमाणु हाइड्रोजन के एक परमाणु की अपेक्षा 8 गुना अधिक भारी होगा।

चूँकि हाइड्रोजन ज्ञात तत्वों में सबसे हल्की थी (और अभी भी है), इसलिए डाल्टन ने हाइड्रोजन के एक परमाणु का भार 1 मान लिया, और इसे परमाणु भार की इकाई के रूप में इस्तेमाल करते हुए, कई तत्वों और यौगिक वस्तुओं के परमाणु भारों की गणना की। जो उनके अनुसार इस प्रकार थे :

1. हाइड्रोजन, उसका सापेक्षिक भार 1
2. ऐजोट (नाइट्रोजन) 5
3. कार्बोन या चारकोल 5
4. आक्सीजन 7
5. फॉस्फोरस 9
6. सल्फर 13
7. मैग्नीशिया 20
8. लाइम 23
9. सोडा 28
10. पोटाश 42
11. स्ट्रोंशाइट्स 46
12. बैराइट्स 68
13. आयरन 38
14. जिंक 56
15. कॉपर 56
16. लैड 95
17. सिल्वर 100
18. प्लेटिना 100
19. गोल्ड 140
20. मरकरी 167

आयतन की बड़ी चुनौती

वह रसायनशास्त्र में गहमा–गहमी का समय था और अनेक रसायनशास्त्री इस उभरते हुए विज्ञान

की आधारशिलाएँ रखने का प्रयास कर रहे थे। इसलिए, सटीक तर्क करने के लिए डाल्टन को मिली प्रतिष्ठा के बावजूद, परमाणु भारों की उनकी तालिका को जल्दी ही कुछ गम्भीर चुनौतियाँ मिलने लगीं।



फ्राँसीसी भौतिकशास्त्री तथा रसायनशास्त्री **जोसेफ लुई गे–लुसाक का चित्र।**

Source: https://en.wikipedia.org/wiki/Joseph_Louis_Gay-Lussac

डाल्टन की विधि को सबसे पहली चुनौती गैसों के संयोजन पर किए गए कुछ परिष्कृत प्रयोगों से मिली, जिन्हें प्रमुख रूप से जोसेफ गे–लुसाक ने किया था। जहाँ डाल्टन ने अपने सूत्र निर्मित करने के लिए मुख्य रूप से अभिकारक तत्वों के भारों का उपयोग किया था, वहीं गे–लुसाक (1778–1850) अभिक्रिया करने वाली गैसों के आयतनों का अध्ययन कर रहे थे। अनेक प्रयोगों के आधार पर, वे संयोजी आयतनों के नियम (द लॉ ऑफ कम्बाइनिंग वॉल्यूम्स) पर पहुँचे : किसी दिए गए तापमान और दबाव पर, गैसें आयतन के आधार पर सरल अनुपातों में संयोजन करती हैं। यदि उत्पाद गैसें हों, तो उनके आयतन भी, किसी भी अभिकारक गैस के आयतन से, सरल पूर्णांक संख्या के अनुपातों में होते हैं। उदाहरण के लिए, हाइड्रोजन के 2 ली. आक्सीजन के 1ली. से संयोजन करके पानी की वाष्प के 2 ली. बनाते हैं। इस तरह, इन आयतनों का अनुपात 2:1:2 होता है। कुछ अभिकारक गैसों के संयोजी आयतन नीचे दिए गए हैं :

अभिक्रिया	अभिकारकों के आयतनों का अनुपात
हाइड्रोजन + ऑक्सीजन → पानी	2:1
हाइड्रोजन + क्लोरीन → हाइड्रोजन क्लोराइड	1:1
कार्बन मोनोऑक्साइड + ऑक्सीजन → कार्बन डाईऑक्साइड	2:1
मीथेन + ऑक्सीजन → पानी + कार्बन डाईऑक्साइड	1:2

गे–लुसाक ने इन परिणामों से कोई निष्कर्ष नहीं निकाला, हालाँकि उनका निष्कर्ष नजरों के बिलकुल सामने था। यदि तत्व परमाणुओं के रूप में संयोजन करते हैं और संयोजन करने वाली गैसों के आयतन सरल अनुपात में होते हैं, तो आयतन तथा परमाणुओं की संख्या के बीच में कोई सम्बन्ध अवश्य ही होना चाहिए।

बर्ज़ीलियस (1779–1848) ने गे–लुसाक के नियम की व्याख्या करके उसका यह अर्थ निकाला कि तापमान तथा दबाव की एक समान स्थितियों में गैसों के बराबर आयतनों में परमाणुओं की संख्या भी समान होती है। चूँकि डाल्टन ने पहले ही यह विचार प्रतिपादित किया था कि परमाणु सरल पूर्णांक संख्याओं में मिलकर यौगिक बनाते हैं, इसलिए यदि हाइड्रोजन के किसी दिए गए आयतन में, उदाहरण के लिए, 1000 परमाणु हैं, तो वे क्लोरीन के 1000 परमाणुओं से संयोजन करेंगे। चूँकि क्लोरीन की यह मात्रा उतना ही आयतन घेरती है जितना कि हाइड्रोजन, तो इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि तापमान तथा दबाव की एक जैसी स्थितियों में, किन्हीं भी गैसों के समान आयतनों में परमाणुओं की संख्या भी समान होगी।

हाइड्रोजन तथा आक्सीजन की अभिक्रिया पर यह धारणा लागू करने पर वह इस प्रकार दिखेगी :

हाइड्रोजन + ऑक्सीजन → पानी

2 आयतन + 1 आयतन → 2 आयतन

2 n कण + 1 n कण → 2 n कण

यदि हम n को 10 के बराबर मान लें, तो बर्ज़ीलियस यह निष्कर्ष निकालेगा कि हाइड्रोजन के 2 आयतन में 20 परमाणु होंगे और आक्सीजन के 1 आयतन में 10 परमाणु होंगे। इसलिए बर्ज़ीलियस के अनुसार पानी में हाइड्रोजन तथा आक्सीजन के परमाणुओं का अनुपात 2:1 होगा; इस आधार पर पानी का सूत्र H_2O होगा (न कि HO जैसा कि डाल्टन ने माना था) और आक्सीजन का प्रत्येक परमाणु हाइड्रोजन के एक परमाणु से 16 गुना भारी होगा।

बर्ज़ीलियस की व्याख्या ने परमाणु भारों को ज्ञात करने के लिए एक सरल विधि प्रदान की : विभिन्न गैसों की हाइड्रोजन के एक-एक आयतन से अलग–अलग अभिक्रियाएँ करवाइए और उन गैसों के उन आयतनों को मापिए जो हाइड्रोजन के एक आयतन के साथ पूरी तरह से संयोजित होते हैं।

अन्तर्विरोध

जाहिर है कि डाल्टन को बर्ज़ीलियस के निष्कर्ष को लेकर बड़े सन्देह थे, क्योंकि वह डाल्टन के परमाणु सिद्धान्त की केन्द्रीय स्थापना (अर्थात तात्विक परमाणु की अविभाज्यता) का खण्डन करता हुआ प्रतीत होता था। इस बात को समझने के लिए हम पानी के अपने उदाहरण को जारी रखते हैं। हम शुरुआत पानी की वाष्प के उसके तत्वों में विखण्डन के समीकरण को लिखने से करेंगे :

पानी की वाष्प → हाइड्रोजन + ऑक्सीजन

2 आयतन → 2 आयतन + 1 आयतन

2 परमाणु → 2 परमाणु + 1 परमाणु

1 परमाणु → 1 परमाणु + ½ परमाणु

इससे समस्या एकदम स्पष्ट हो जाती है – यदि पानी का एक परमाणु विखण्डित किया जाता है (और यदि उल्टा कहें तो, यदि पानी का एक परमाणु निर्मित किया जाता है), तो हमें आक्सीजन का आधा परमाणु मिलेगा (या उसकी जरूरत पड़ेगी)। इस प्रकार, बर्ज़ीलियस का प्रस्ताव परमाणुओं की अविभाज्यता के नियम के खिलाफ जाता हुआ प्रतीत होता था, इसलिए वह डाल्टन को स्वीकार्य नहीं था।

परमाणु भारों का युद्ध क्षेत्र

न केवल डाल्टन तथा बर्ज़ीलियस, बल्कि कई अन्य लोग भी परमाणु भारों की गणना करने और उन्हें प्रस्तुत करने के अपने–अपने तरीके लेकर आगे आए। अन्य बातों के अलावा उनकी विधियाँ, प्रायोगिक परिणाम और तुलना करने की इकाइयाँ, सभी कुछ भिन्न–भिन्न था (उदाहरण के लिए, बर्ज़ीलियस ने आक्सीजन का परमाणु भार 100 मानने का निर्णय लिया)। एक समय ऐसा था जब अनेक प्रकार के परमाणु भारों और उन पर आधारित सूत्रों (फार्मूलों) के कारण शोधकार्यों के प्रकाशित विवरणों को पढ़ना भी असम्भव हो गया था। ऐसा बताया जाता है कि एसीटिक एसिड के कोई 13 सूत्र थे। इस स्थिति में कई रसायनशास्त्रियों ने परमाणु भारों का उपयोग करना बन्द कर दिया और वापिस केवल संयोजी भारों का उल्लेख करने लगे। कुछ लोगों, जिनमें ड्यूमास और व्होलर जैसे अग्रणी रसायनशास्त्री भी शामिल थे, ने तो यहाँ तक सुझाव दिया कि परमाणुओं की पूरी धारणा को ही त्याग देना चाहिए क्योंकि वह बहुत ज्यादा अमूर्त और भ्रमित करने वाली थी।

एक समाधान जिसकी आधी सदी तक उपेक्षा की गई

हम सभी ने इटली के रसायनशास्त्री एमीदियो एवोगैड्रो का नाम उनकी उस परिकल्पना के सम्बन्ध में सुना हो सकता है, जिसने बर्ज़ीलियस के प्रस्ताव में 'परमाणु' शब्द को बदलकर 'अणु' शब्द का इस्तेमाल किया था। (यदि आपको याद न हो तो, बर्ज़ीलियस ने सुझाया था कि कि किसी दिए गए दबाव और तापमान पर, सभी गैसों में परमाणुओं की समान संख्या होती है।) लगभग ऐसा प्रतीत होता है कि एवोगैड्रो शब्दों का खेल खेल रहे थे। मगर सच्चाई यह है कि, वे तत्वों

तथा रासायनिक संयोजनों की प्रकृति के बारे में ऐसी गहरी बात व्यक्त कर रहे थे जो – परमाणु भारों की गुत्थी को हल करने तथा गे–लुसाक के परिणामों और डाल्टन के परमाणु सिद्धान्त के बीच आभासी अन्तर्विरोध का समाधान करने के अलावा – रसायनशास्त्र की सोच में क्रान्तिकारी परिवर्तन लाने वाली थी।

तो, एवोगैड्रो ने क्या कहा और पचास सालों तक उनकी उपेक्षा क्यों हुई ? संक्षेप में, एवोगैड्रो ने प्रस्तावित किया कि तत्वों का अस्तित्व संयुक्त परमाणुओं के रूप में भी हो सकता है और अक्सर होता भी है। अपने 1811 में प्रकाशित शोधपत्र में एवोगैड्रो ने यह परिकल्पना प्रस्तुत की कि अन्तिम कण दो प्रकार के होते हैं – परमाणु तथा अणु। उनका सबसे 'असंगत' सुझाव यह था कि तत्व भी अणुओं के रूप में बने रह सकते हैं। इसके आधार पर वे वह प्रसिद्ध परिवर्तन कर सके जिसे अब हम एवोगैड्रो की परिकल्पना के रूप में जानते हैं : किसी दिए गए तापमान तथा दबाव पर सभी गैसों में अणुओं (जिनमें एक से अधिक परमाणु हो सकते हैं) की समान संख्या होती है।



इटली के वैज्ञानिक **एमीदियो एवोगैड्रो** (1776–1856) का चित्र।

एवोगैड्रो के अनुसार, ऊपर बताई गई हाइड्रोजन तथा आक्सीजन की अभिक्रिया को इस तरह समझा जा सकता है :

हाइड्रोजन + ऑक्सीजन $\rightarrow$ पानी

2 आयतन + 1 आयतन $\rightarrow$ 2 आयतन

2 n अणु + 1 n अणु $\rightarrow$ 2 n अणु

1 अणु + ½ अणु $\rightarrow$ 1 अणु

वास्तव में उन्होंने यह कहा कि हाइड्रोजन तथा आक्सीजन, दोनों अणुओं के रूप में रहती हैं और उनके अणुओं में इन तत्वों के दो–दो परमाणु होते हैं। इस प्रकार आखिरी अभिक्रिया में जो टूट रहा था वह आक्सीजन का एक परमाणु न होकर, उसका एक अणु था। यह डाल्टन के सिद्धान्त के अनुरूप था। यदि हम इस सुझाव को स्वीकार कर लेते हैं, तो चीजें बहुत कम जटिल हो जाती हैं।

कहा जाता है कि यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण शोधपत्र इतने समय तक गुमनामी में पड़ा रहा क्योंकि यह इटैलियन भाषा में, एक अपेक्षाकृत अज्ञात जर्नल में प्रकाशित हुआ था, और एवोगैड्रो की प्रस्तुति बहुत अनगढ़ थी। परन्तु उस समय के रसायनशास्त्रियों के साथ न्याय करते हुए, हमें यह कहना होगा कि एवोगैड्रो के पास इस सुझाव के लिए कोई सैद्धान्तिक आधार भी नहीं था। उन दिनों की यह आम समझ थी कि तत्व एक–दूसरे से अपने विपरीत आवेशों के कारण अभिक्रिया करते थे। ऐसी समझ में एक ही तत्व के परमाणुओं का जुड़कर आपको एक अणु प्रदान करने की इस धारणा को स्थान देना, यदि असम्भव नहीं तो कठिन जरूर था। इस उपेक्षा का यह भी एक कारण हो सकता है। यह स्पष्ट है कि पदार्थ की प्रकृति के बारे में एक नई अन्तर्दृष्टि प्रदान करने के बजाय, एवोगैड्रो का प्रयास डाल्टन के सिद्धान्त और गे–लुसाक के प्रायोगिक परिणामों की बर्ज़ीलियस द्वारा की गई व्याख्या के बीच में तालमेल बैठाने के लिए किया गया था।

परमाणु भारों की अवधारणा एक ऐसा बुनियादी और व्यावहारिक रूप से उपयोगी विचार था कि रसायनशास्त्री उसे त्यागकर पुराने कीमियाई

तरीकों पर वापिस जाने के लिए राजी नहीं थे। अतः इस विचार को कामकाजी बनाने के कई अन्य प्रयास भी किए गए।

अन्य प्रयास

क) ड्यूलौंग एवं पेटिट की विधि

ऐसी एक विधि पियरे ड्यूलौंग (1789–1838) तथा ऐलैक्सिस पेटिट (1791–1820) के द्वारा प्रस्तावित की गई। उन्होंने 1819 में एक सम्बन्ध खोजा जिसे एक नियम के रूप में व्यक्त किया जा सकता था : किसी धातु के परमाणु भार को उसकी विशिष्ट ऊष्मा से गुणा करने पर उनका गुणनफल लगभग 6.4 के बराबर होता है।

चूँकि किसी धातु की विशिष्ट ऊष्मा प्रायोगिक रूप से निकाली जा सकती है, इसलिए इस नियम का उपयोग धातुओं के परमाणु भारों के करीबी मान निकालने के लिए किया जा सकता है। कम से कम इसका इस्तेमाल, किसी धातु के प्रायोगिक रूप से निकाले गए विभिन्न दावेदार परमाणु भार मानों में से सही मान ज्ञात करने के लिए तो किया ही जा सकता है। हम एक उदाहरण पर संक्षिप्त नजर डालते हैं।

सिल्वर (चाँदी) की विशिष्ट ऊष्मा से गणना करने पर उसका करीबी परमाणु भार 113.3 निकलता है। एक वास्तविक प्रयोग, जिसमें सिल्वर और आक्सीजन की तौली हुई मात्राओं के बीच अभिक्रिया करवाई गई, से पता चला कि वे 13.51:1 के अनुपात में अभिक्रिया करते हैं। यदि हम यह मान लें कि सिल्वर का एक परमाणु, आक्सीजन के एक परमाणु से अभिक्रिया करता है, तो इसका मतलब है कि सिल्वर का एक परमाणु, आक्सीजन के एक परमाणु से 13.51 गुना अधिक भारी है। इससे सिल्वर के परमाणु भार का जो मान मिलता है वह 216.16 (16 x 13.51) है।

सिल्वर की विशिष्ट ऊष्मा की जानकारी का इस्तेमाल करते हुए, हमारे पास उसके परमाणु भार का करीबी मान 113.3 है, जो ऊपर प्राप्त किए गए मान का लगभग आधा है। इसलिए, सिल्वर आक्साइड का सूत्र Ag_2O है, और सिल्वर का परमाणु भार 216.16/2 = 108.08 है।

ख) विक्टर मेयर विधि

बुनियादी रूप से, विक्टर मेयर ने वाष्प घनत्वों को ज्ञात करने की उस समय मौजूद तकनीकों को परिष्कृत किया और परमाणु भारों की तुलना करने के लिए बर्ज़ीलियस की विधि का इस्तेमाल किया। गैसों के अलावा, उस विधि को आगे बढ़ाते हुए उन्होंने उसे वाष्पों के लिए भी प्रयोग किया।

आप परमाणु भारों को निकालने में सामने आने वाली बुनियादी समस्या को देख सकते हैं। जहाँ हम एक ओर अभिकारकों की स्थूल मात्राओं को नापते हैं, वहीं दूसरी ओर हम उनसे उन अभिकारकों के एक–एक (सूक्ष्म) परमाणुओं के सापेक्षिक द्रव्यमानों के बारे में निष्कर्ष निकालना चाहते हैं। मान लीजिए, कि हमारे पास एक बक्से में 500 ग्राम केले हैं और दूसरे बक्से में 1 किलोग्राम सन्तरे हैं। पर इस जानकारी के होते हुए भी, हम एक केले के भार की तुलना एक सन्तरे के भार से कतई नहीं कर सकते। परन्तु, यदि हम यह मान लें कि हर बक्से में एक दर्जन फल हैं, तो फिर हम कह सकते हैं कि एक सन्तरा, एक केले से दो गुना भारी है। परन्तु परमाणुओं के बारे में हम यह जान नहीं सकते, हम कुछ बातों को केवल मान सकते हैं।

जैसा कि आरम्भ में उल्लेख किया गया था, परमाणु भार इसलिए उपयोगी होते हैं क्योंकि वे हमें रासायनिक अभिक्रियाओं को समझने और उनके परिणामों का पूर्वानुमान लगाने का एक तरीका देते हैं।

ऊपर जो कहा गया है उससे आप उस भ्रम और अफरा–तफरी का अन्दाजा लगा सकते हैं जो परमाणु भार की समस्या के कारण उन्नीसवीं सदी के पूर्वार्ध में पैदा हुई होगी। एक ऐसे ही रसायनशास्त्री, जो इस समस्या से बहुत चिन्तित थे, ऑगस्ट केकुले थे। उन्होंने इसी पहेली का हल निकालने के लिए विभिन्न देशों के रसायनशास्त्रियों के एक सम्मेलन का आयोजन किया, क्योंकि उन्हें

लगता था कि निरन्तर भ्रम की यह स्थिति विज्ञान की प्रगति को अवरुद्ध कर देगी। रसायनशास्त्रियों का यह पहला वैश्विक सम्मेलन, कार्लस्रुहे (जर्मनी) में 1860 में आयोजित किया गया।

ग) कैनिज़रो का प्रवेश

कार्लस्रुहे सम्मेलन को आम सहमति बनाने के एक प्रयास के रूप में देखा जाना चाहिए। वह विफल हो गया होता, यदि स्टानिसलाओ कैनिज़रो नाम के एक युवा स्कूल शिक्षक ने सही समय पर हस्तक्षेप न किया होता।

कैनिज़रो का मुख्य योगदान सम्मेलन के सहभागियों का ध्यान एवोगैड्रो के 1811 के शोधपत्र की ओर आकर्षित करना और यह प्रस्तावित करना था कि वह शोधपत्र परमाणु भार ज्ञात करने की एक स्पष्ट विधि उपलब्ध कराता था। वह विधि यहाँ दी गई है क्योंकि वह इस तथ्य को रेखांकित करती है कि परमाणु भार की समस्या का समाधान तर्क और समझदारी का उपयोग करने से हुआ।

कैनिज़रो की विधि

स्टानिसलाओ कैनिज़रो ने सम्मेलन में एक लिखित विवरण सब लोगों के बीच प्रसारित किया जिसमें उन्होंने विभिन्न तत्वों के परमाणुओं के सही भार चुनने के लिए एवोगैड्रो की परिकल्पना का उपयोग किया। उन्होंने यह माना कि :

- किसी तत्व के सभी परमाणुओं का एक निश्चित भार होता है।
- चूँकि अणुओं, जैसे कि एक हाइड्रोजन का अणु या एक पानी का अणु, में परमाणुओं की एक निश्चित संख्या होती है, इसलिए उनके भी निश्चित भार अवश्य होंगे, जिन्हें हम सूत्र भार (फार्मूला वेट्स) कहेंगे।
- इन सूत्र भारों में मौजूद प्रत्येक तत्व का एक परमाणु भार होता है (या उस परमाणु भार कोई गुणज होता है)।

इन मान्यताओं के आधार पर उन्होंने नीचे दिए गए चरणों का अनुसरण करते हुए, परमाणु भारों की गणना करने की एक विधि प्रस्तावित की :

- एवोगैड्रो के अनुसार, पानी का आणविक सूत्र H_2O है।
- यदि सभी गैसों के समान आयतनों में अणुओं की संख्या समान है, तो उनके घनत्व उनके आणविक भारों के समानुपाती होंगे, अर्थात M αD, या M=kD, जहाँ k एक स्थिरांक है, M आणविक भार है, तथा D दी गई गैस का घनत्व है।
- यदि हम किसी गैस का आणविक भार जानते हैं, तो हम उसके घनत्व से स्थिरांक k की गणना कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, हाइड्रोजन का आणविक भार 2 है और आक्सीजन का 32 है। इसलिए :

  Gas | Molecular weight | Density | k=M/D

  Hydrogen | 2 | 0.09 | 22.25

  Oxygen | 32 | 1.43 | 22.4
- इस तरह स्थिरांक k का औसत मान 22.23 है (22.25 तथा 22.4 का औसत)
- कार्बन और क्लोरीन के परमाणु भारों की गणना करने के लिए, हमें कार्बन तथा क्लोरीन के विभिन्न गैसीय योगिकों के घनत्वों से उनके आणविक भार ज्ञात करने होंगे (M=kD का इस्तेमाल करके)।

यौगिक	घनत्व g/l	Molecular weight M=kD	भार प्रतिशत			एक अणु में परिमाण आणविक भार तथा प्रायोगिक जानकारी के आधार पर गणना के द्वारा			सम्भावित सूत्र
			Carbon	Hydrogen	Chlorine	Carbon	Hydrogen	Chlorine	
यौगिक मीथेन	0.715	16.0	74.8	25	–	12	4.03	–	CH_4
इथेन	1.340	29.9	79.8	20	–	23.9	6.04	–	C_2H_6
क्लोरोइथेन	2.88	64.3	37.2	7.8	55	23.9	5.02	35.04	C_2H_5Cl
क्लोरोफार्म	5.34	119.1	10.05	0.85	89.1	12.2	1.01	106.2	$CHCl_3$
कार्बन टेट्राक्लोराइड	6.83	152.6	7.8	–	92.9	11.01	–	141	CCl_4

- आइए अब हम देखें कि ज्ञात आँकड़ों से ऊपर दी गई जानकारी कैसे निकलती है। चरण 4 (जिसमें समीकरण M=kD का इस्तेमाल किया गया) हमें मीथेन का आणविक भार 16 देता है। मीथेन में कार्बन का प्रतिशत (कालम 3) 74.8 है, अर्थात 100 ग्राम मीथेन में 74.8 ग्राम कार्बन है। इसलिए, 16 ग्राम मीथेन (मीथेन का एक

मोल) में कार्बन की मात्रा (74.8/100) x 16 = 12 ग्राम होती है। तालिका में दिए गए अन्य मान भी इसी तरह से निकाले गए हैं।

- हमने दिए गए यौगिकों में से प्रत्येक के एक मोल में हर तत्व की मात्रा की गणना की है। फिर हम इन यौगिकों में मौजूद एक तत्व की न्यूनतम मात्रा को देखते हैं। हम देख सकते हैं कि प्रत्येक यौगिक के एक मोल में कार्बन की मात्राएँ भिन्न–भिन्न हैं। कार्बन के यौगिकों के एक मोल में उसकी न्यूनतम मात्रा 12 ग्राम है। इससे हम कार्बन के परमाणु भार का मान 12 निर्धारित करते हैं, क्योंकि हम मानते हैं कि इन यौगिकों मे कम से कम कार्बन का एक परमाणु तो होगा। यदि बाद के अध्ययनों में हमें ऐसे यौगिक मिलते हैं जिनके 1 मोल में 6 ग्राम या 4 ग्राम कार्बन हो, तो हमें कार्बन के परमाणु भार को संशोधित करना पड़ेगा। तब तक कार्बन के परमाणु भार को 12 माना जा सकता है।
- इसी प्रकार अन्य तत्वों के परमाणु भारों की गणना भी की जा सकती है।

आगे की घटनाएँ

कार्लस्रुहे सम्मेलन के साथ यह मामला सुलझ गया प्रतीत होता था। परन्तु समस्थानिकों की खोज ने प्रत्येक तत्व का एक ही परमाणु भार होने की धारणा के लिए नई चुनौतियाँ खड़ी कर दीं। इसके परिणामस्वरूप अपूर्णांक परमाणु भारों का विचार सामने आया।

हाल ही में 'इण्टरनेशनल यूनियन ऑफ प्योर एण्ड एप्लाइड केमिस्ट्स' को एक अन्य समस्या का भी सामना करना पड़ा है। यह पता चला कि कुछ तत्वों के परमाणु भार, इस बात पर निर्भर करते हैं वे तत्व कहाँ से और कैसे प्राप्त किए जाते हैं। इसका सम्बन्ध भिन्न–भिन्न स्थानों और पर्यावरणों में तत्वों के अलग–अलग समस्थानिक संघटन से है। इसके लिए सुझाया गया समाधान यह है कि अब आगे से परमाणु भारों को एक इकलौते मान के रूप में व्यक्त करने के बजाय, उन्हें मान के एक दायरे के रूप में व्यक्त किया जाएगा।

हम इन सब नई घटनाओं के विस्तार में यहाँ नहीं जाएँगे, लेकिन अब तक यह तो जरूर साफ हो गया होगा कि आवर्त तालिका में लिखित जिन परमाणु भारों का हम सब उपयोग करते आ रहे हैं, वे आसानी से हाथ नहीं आए हैं। अन्ततः परमाणुओं और अणुओं की वास्तविक संख्या (एवोगैड्रो संख्या) को गिनने की प्रक्रिया ने ही हमें वह उत्तर दिया जिसे हम अन्तिम मानते हैं। पर क्या यह वाकई में इस मामले में आखिरी बात होगी?

सुशील जोशी *एक स्वतंत्र विज्ञान लेखक और अनुवादक हैं। आई.आई.टी., बॉम्बे से रसायनशास्त्र में पीएच.डी. पूरी करने के बाद वे 1982 में होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम से जुड़ गए और 2002 में उसके समाप्त होने तक उसके साथ कार्यरत रहे।*

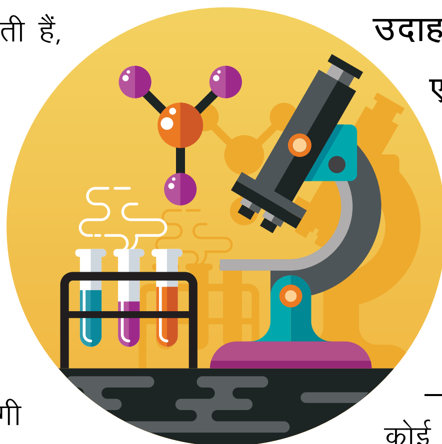
उमा सुधीर *ने रसायनशास्त्र में पीएच.डी. की है और शिक्षा में भी उपाधि प्राप्त की है। वे पिछले 12 वर्षों से एकलव्य से जुड़ी रही हैं। उन्होंने विज्ञान सिखाने तथा सीखने की सामग्री विकसित करने में तथा समीक्षात्मक शिक्षण पद्धति का अनुसरण करते हुए विज्ञान पढ़ाने के लिए शिक्षकों को प्रशिक्षित करने में योगदान दिया है।* ***अनुवाद*** *: भरत त्रिपाठी*

विज्ञान सीखने में पूर्वनिर्मित मानसिक प्रतिरूपों को चुनौती देना

विष्णुतीर्थ अग्निहोत्री एवं अनघ पुरन्दरे

अपने रोजमर्रा के अनुभवों से बच्चे जो अर्थ निकालते हैं या अनुमान लगाते हैं, क्या वे सभी वैज्ञानिक सत्य होते हैं? इस लेख में हम तीन ऐसे उदाहरणों की चर्चा कर रहे हैं जो दिखाते हैं कि किस तरह कक्षाओं में प्रवेश करने से पहले ही बच्चों के पास 'पूर्वनिर्मित मानसिक प्रतिरूप' होते हैं और किस तरह वे वयस्क अवस्था तक भी बने रह सकते हैं। हम कुछ ऐसे सम्भावना पूर्ण तरीकों की भी चर्चा करेंगे जो सीखने वालों को इन 'पूर्वनिर्मित मानसिक प्रतिरूपों' को सही वैज्ञानिक प्रतिरूपों के द्वारा विस्थापित करने में मदद करेंगे।

हमारे आसपास के संसार के अवलोकन सीखने के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण होते हैं। दो साल का एक बच्चा खाने की चीजों को बार–बार ऊपर उछालकर यह सीख सकता है कि वह हमेशा वापिस नीचे गिरती हैं, हालाँकि इससे हमें बहुत परेशानी हो सकती है। दूसरी ओर हमारा अपना परिपक्व मन यह सीख सकता है कि यदि तापमान बहुत अधिक न होकर केवल पर्याप्त रूप से अधिक हो तो डोसा बर्तन से चिपकेगा नहीं। सहज बुद्धि से सीखे गए ऐसे सबक जीवन के लिए बहुत उपयोगी और कभी–कभी निर्णायक रूप से महत्त्वपूर्ण होते हैं, लेकिन क्या अवलोकनों और सहज बुद्धि से इकट्ठे किए गए ऐसे सबक वैज्ञानिक तथ्य होते हैं? चलिए हम रोजमर्रा की कुछ घटनाओं का नजदीक से अध्ययन करके इनकी जाँच–पड़ताल करें।





उदाहरण 1

एक ही कमरे में रखी एक लकड़ी की चम्मच से एक धातु का सिक्का ज्यादा ठण्डा होता है।

हम शर्त लगाते हैं कि आप में से कई लोग सोचते हैं कि धातु का सिक्का ज्यादा ठण्डा होता है – निश्चित ही आप नहीं चाहेंगे कि कोई शरारती व्यक्ति सर्दियों की किसी ठण्डी सुबह आपकी कमीज के भीतर एक धातु का सिक्का खिसका दे! परन्तु, वास्तविकता यह है कि धातु का सिक्का और लकड़ी की चम्मच उसी तापमान पर होते हैं (बशर्ते कि उनमें से एक को

गरम न किया जा रहा हो या उसे फ्रिज में न रखा गया हो या तभी बाहर से कमरे में न लाया गया हो)। पर ऐसा कैसे हो सकता है। आखिरकार धातु का सिक्का छूने में लकड़ी की चम्मच से कहीं ज्यादा ठण्डा महसूस होता है!

ऐसा क्यों हो रहा हो सकता है, उसके बारे में यहाँ हम आपको एक परोक्ष संकेत देते हैं – यदि आप सहारा के रेगिस्तान में कहीं एक कमरे में 55 डिग्री सेल्सियस के तापमान का सामना कर रहे होते, तो आपको लकड़ी की चम्मच से धातु का सिक्का ज्यादा गरम महसूस होता।

जो बात यहाँ हो रही है, वह यह है कि मनुष्य बहुत अच्छे थर्मामीटर का काम नहीं करते – जब हम एक धातु के सिक्के को छूते हैं, तो ऊष्मा हमारे शरीर से ज्यादा तेज गति से (लकड़ी की चम्मच की तुलना में, जो कि ऊष्मा की ज्यादा खराब चालक है) बाहर प्रवाहित होती है और ऊष्मा की इस क्षति को ही हम उसके ज्यादा 'ठण्डा' होने की तरह महसूस करते हैं। यदि आप एक थर्मामीटर का इस्तेमाल करें तो आप पाएँगे कि वास्तव में दोनों एक ही तापमान पर हैं।

यह एक आम भ्रांति है – कक्षा 8 के 86% विद्यार्थी* सोचते हैं कि एक लकड़ी की चम्मच और एक धातु की चम्मच को आधे दिन तक गरम पानी में रखने के बाद धातु की चम्मच ज्यादा गरम होगी।

एक धातु की चम्मच, एक लकड़ी की चम्मच और एक प्लास्टिक की चम्मच को आधे दिन तक गरम पानी में रखा जाता है। पानी को पूरे समय एक ही तापमान पर बनाए रखा जाता है।

प्रयोग के अन्त में इन चीजों को बाहर निकाला जाता है और तत्काल उनका तापमान नापा जाता है। निम्नलिखित में से किसका तापमान सबसे ज्यादा होने की सम्भावना है?

विकल्प	कौन–सी चम्मच अधिक गरम होगी	विकल्प चुनने वाले विद्यार्थियों का प्रतिशत
क	धातु की चम्मच	86.4%
ख	प्लास्टिक की चम्मच	4.2%
ग	लकड़ी की चम्मच	3.9%
घ	तीनों चम्मचों का तापमान करीब–करीब बराबर होगा	5.2%

इसके अलावा वैबसाइट https://youtu.be/vqDbMEdLiCs पर एक बहुत रोचक वीडियो भी देखें जिसमें एक शोधकर्ता इस 'ट्रिक' को विभिन्न लोगों पर आजमाता है और समझाता है कि क्या हो रहा है।

उदाहरण 2

यदि हम काफी देर तक प्रतीक्षा करें तो अँधेरे में देख सकते हैं।

आप एक कमरे में हैं जहाँ पूरी तरह अँधेरा है – क्या आपको लगता है कि आपके सामने रखी हुई एक कुर्सी को कुछ सेकेण्ड बाद आप देख सकेंगे? जब आपसे यह सवाल पूछा जाता है तो हो सकता है कि आपको याद आए कि आपने जब भी किसी अँधेरे कमरे में प्रवेश किया है, तब आप एकदम से तो कुछ नहीं देख पाए, लेकिन कुछ मिनट के बाद आपकी आँखें अपने को कमरे में मौजूद प्रकाश के अनुकूल बना लेतीं हैं और आपको कुछ चीजें दिखाई देने लगती हैं। यह बात सही है न? इसलिए उपरोक्त सवाल का आप यह उत्तर दे सकते हैं कि, "हाँ, कुछ समय बाद मैं कुर्सी को देख लूँगा।" लेकिन यदि कमरा पूरी तरह से अँधकार में डूबा हुआ हो, तब क्या? यदि कमरे में कोई प्रकाश प्रवेश नहीं कर रहा है, तब हम चाहे जितना भी समय उस कमरे में बिताएँ, हमें कुछ भी दिखाई नहीं देगा, क्योंकि कुछ भी देखने के लिए हमें कुछ प्रकाश के वस्तु से परावर्तित होकर हमारी आँखों में प्रवेश करने की जरूरत होती है।

*यह जानकारी ASSET पर आधारित है, जो एजुकेशनल इनीशिएटिव्स का एक डायगोनेस्टिक टेस्ट है। http://www.ei-india.com/asset

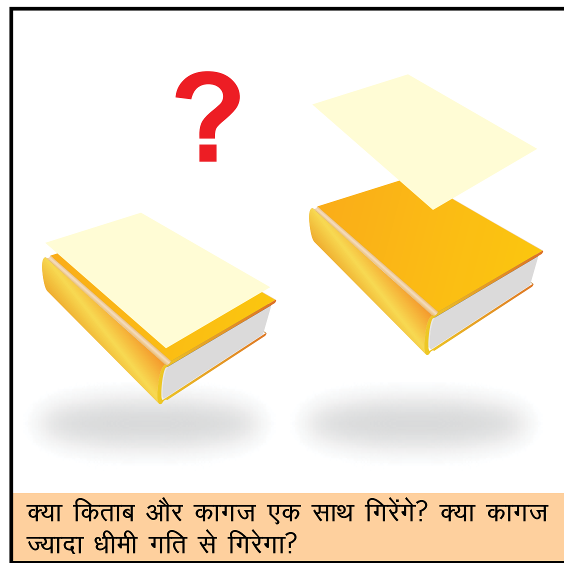
हमारे रोजमर्रा के अनुभव में हमें पूरी तरह से अँधेरे कमरे का कभी अनुभव नहीं होता (किसी भी कमरे में हमेशा कुछ प्रकाश कहीं से झरकर आ ही जाता है – हो सकता है कि वह चाँद की रोशनी हो, या किसी सड़क की बत्ती का प्रकाश) और इसलिए हमारी यह मानने की प्रवृत्ति होती है कि यदि हम पर्याप्त लम्बे समय तक प्रतीक्षा करें, तो हम अँधेरे में भी चीजों को कम से कम धुँधले ढंग से देख सकेंगे।



उदाहरण 3

एक अधिक भारी वस्तु हल्की वस्तु की अपेक्षा हमेशा ऊपर से ज्यादा तेज गति से नीचे गिरती है।

मान लीजिए कि आप अपने एक हाथ में एक भारी ईंट और दूसरे हाथ में एक छोटी किताब (जिसे टेप से चिपकाकर बन्द कर दिया गया हो ताकि वह खुले नहीं) पकड़कर किसी भवन की तीसरी मंजिल पर खड़े हुए हैं। यदि आप दोनों चीजों को एक ही समय पर छोड़ दें, तो उनमें से किस के जमीन पर पहले पहुँचने की सम्भावना है? हो सकता है कि अभी आपके लिए यह करके देखना मुश्किल हो, तो हम दूसरा प्रयोग करके देखें – यदि आप एक पन्ने को एक किताब के ऊपर रख दें जिसे आप हाथ में पकड़े हुए हैं और आप कागज के पन्ने समेत किताब (उसे टेप से चिपकाकर बन्द कर दें ताकि वह खुल न जाए) को ऊपर से गिरा दें तो आपके विचार से क्या होगा? क्या आप कागज और किताब दोनों के एक साथ गिरने की अपेक्षा करते हैं या आपका अनुमान



क्या किताब और कागज एक साथ गिरेंगे? क्या कागज ज्यादा धीमी गति से गिरेगा?

है कि कागज 'पीछे रह जाएगा' और किताब की तुलना में धीमी गति से जमीन पर आएगा? इस प्रश्न का उत्तर दें और आगे पढ़ने से पहले इस प्रयोग को सचमुच में करके अपने उत्तर की पुष्टि करें –आपको क्या पता चला? क्या आपको आश्चर्य हुआ?

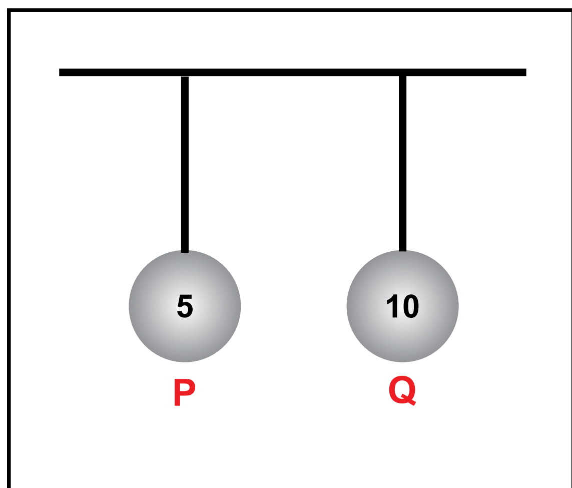
हमने पिछले वर्षों में अनेक विद्यार्थियों, शिक्षकों तथा बुद्धिमान वयस्क व्यक्तियों के साथ उपरोक्त तीनों सवालों को (अन्य कई सवालों के साथ) आजमाया। उनमें से अधिकांश वास्तविकता का पता चलने पर चकित थे – कि धातु का सिक्का तथा लकड़ी की चम्मच का तापमान एक–सा होता है, कि हम अँधेरे में देख नहीं सकते या कि भारी वस्तुएँ भी उसी गति से नीचे गिरती हैं जितनी कि हल्की वस्तुएँ।

उदाहरण के लिए, ASSET के नीचे दिए गए एक अन्य प्रश्न* को देखें, जिसके उत्तर में कक्षा 9 के लगभग आधे विद्यार्थियों का ख्याल था कि ज्यादा भारी गेंद ज्यादा तेज गति से जमीन पर गिरेगी।

दो गेंदें, P तथा Q, जिनका आकार समान किन्तु द्रव्यमान अलग–अलग है (P का भार 5 किलोग्राम है और Q का भार 10 किलोग्राम है), रस्सियों से लटक रही हैं, जैसा कि चित्र में दिखाया गया है।

*यह जानकारी ASSET पर आधारित है, जो एजुकेशनल इनीशिएटिव्स का डायगोनेस्टिक टेस्ट है। http://www.ei-india.com/asset

रस्सियों को एक साथ काट दिया जाता है। उनमें से कौन–सी ज्यादा तेजी से नीचे गिरेगी और क्यों?



विकल्प	विकल्प	चुनने वाले विद्यार्थियों का प्रतिशत
क	P से Q ज्यादा तेज गति से नीचे गिरेगी क्योंकि ज्यादा भारी चीजें हमेशा ज्यादा तेजी से नीचे गिरती हैं	43.7%
ख	Q से P ज्यादा तेज गति से नीचे गिरेगी क्योंकि ज्यादा हल्की चीजें हमेशा ज्यादा तेजी से नीचे गिरती हैं	6.9%
ग	दोनों को एक–सा समय लगेगा क्योंकि गिरने में लगने वाला समय भार पर निर्भर नहीं करता	41.9%
घ	हम कह नहीं सकते क्योंकि यह उस ऊँचाई पर निर्भर करता है जिससे वे गिर रही हैं	6.6%

ऐसा क्यों होता है? अक्सर हमने किसी घटना के पीछे के विज्ञान को सीखा भी होता है – फिर भी यह इतना मुश्किल क्यों होता है? चलिए हम ज्यादा विस्तार में जाकर इसकी जाँच–पड़ताल करते हैं।

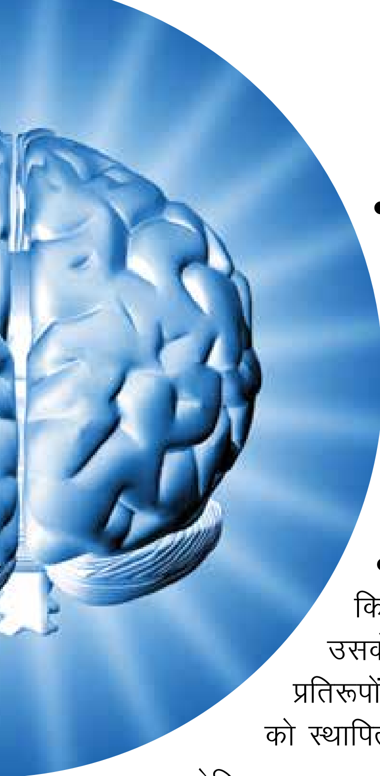
हालाँकि, हमने पढ़ा हो सकता है कि भारी वस्तुएँ तथा हल्की वस्तुएँ समान गति से गिरती हैं, और वे ऐसा करती हैं यह दर्शाने वाले समीकरणों का इस्तेमाल करते हुए हो सकता है कि हमने कई सवाल भी हल किए हों, फिर भी हम यह मानना क्यों जारी रखते हैं कि हल्की चीजों की अपेक्षा भारी चीजें ज्यादा तेजी से नीचे आती हैं? ऐसा शायद हवा के प्रतिरोध के विचार को न समझ पाने के कारण होता है,क्योंकि हवा दिखाई नहीं देती। जब हम किसी पत्ती या पंख को हवा में तिरते हुए धीरे–धीरे नीचे आता देखते हैं, तो हो सकता है कि ऐसे अवलोकन की व्याख्या हम यह धारणा (या 'मानसिक प्रतिरूप') निर्मित करने के लिए कर लें कि 'हल्की चीजें ज्यादा धीमी गति से गिरती हैं।' यदि हम हवा के प्रतिरोध के विचार को समझते भी हैं (जैसा कि बड़े बच्चे या वयस्क व्यक्ति जानते हैं), तो भी हम भूल करते हुए ऐसी धारणा को आगे बढ़ाते रहते हैं कि भारी वस्तुओं को अधिक गुरुत्वाकर्षण का अनुभव होता होगा और उससे यह निष्कर्ष निकालते हैं कि इसलिए उनके गिरने की गति भी ज्यादा तेज होगी। ऐसा सोचना कि हल्की चीजों की तुलना में भारी चीजें ज्यादा तेजी से गिरेंगी, काफी कुछ 'अन्तर्ज्ञान या सहज ज्ञान' की बात लगती है (और यह पूरी तरह गलत भी नहीं है) यह बस एक सीमित विचार है जो केवल विशेष मामलों में लागू होता है, पर जो निश्चित रूप से एक व्यापक वैज्ञानिक सिद्धान्त नहीं होता।



"दुर्लभ अपवादों को छोड़कर, वैज्ञानिक विचार अन्तर्ज्ञान के विपरीत होते हैं, उन्हें घटनाओं के साधारण निरीक्षणों से हासिल नहीं किया जा सकता और वे अक्सर रोजमर्रा के अनुभवों से परे होते हैं।"

– लुइस वोलपोर्ट, द अननैचुरल नेचर ऑफ साइंस

पारम्परिक विज्ञान शिक्षण का एक प्रमुख दोष है कि वह इस तथ्य पर गौर नहीं करता कि विद्यार्थी कक्षा में 'पूर्वनिर्मित मानसिक प्रतिरूपों' को साथ लेकर आते हैं और इसीलिए सिखाने–सीखने की प्रक्रिया के लिए जरूरी है कि :



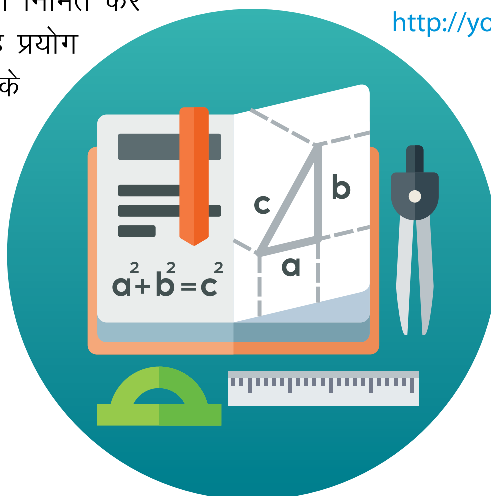
- ऐसे मानसिक प्रतिरूपों को सतह पर चेतन रूप से सामने लाया जाए, ताकि सीखने वाला और शिक्षक इनके बारे में जागरूक रहें।
- इन मानसिक प्रतिरूपों को चुनौती देने के लिए तरीके खोजे जाएँ।
- ऐसी चर्चाएँ तथा अभ्यास किए जाएँ जो सीखने वाले को उसके पूर्वनिर्मित, गलत, मानसिक प्रतिरूपों के स्थान पर वैज्ञानिक प्रतिरूपों को स्थापित करने की सुविधा दें।

लेकिन ज्यादातर स्थितियों में न ही शिक्षक और न ही सीखने वाले को इन मानसिक प्रतिरूपों के बारे में सचेत रूप से पता रहता है। हर चीज स्पष्ट रूप से समझ ली गई प्रतीत हो सकती है... जब तक कि आप 'संज्ञानात्मक द्वन्द' की किसी स्थिति का सामना नहीं करते। एक अच्छा विज्ञान शिक्षक यह जानता है कि भ्रम और द्वन्द को पहचानना और उस पर काम करना गहराई से सीखने के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होता है।

चलिए देखें कि गिरती हुई वस्तुओं के मामले में यह कैसे काम करेगा। सबसे पहले शिक्षक विद्यार्थियों को ऊपर बताया गया 'किताब पर कागज का पन्ना' रखकर गिराने वाला प्रयोग करने के लिए कह सकता है और उसके द्वारा एक संज्ञानात्मक द्वन्द की स्थिति निर्मित कर सकता है। हो सकता है कि वह प्रयोग विद्यार्थियों को हवा के प्रतिरोध के मौजूद होने के बारे में सचेत कर सकता है और उनके दिमाग में उसके बारे में पर्याप्त सन्देह पैदा कर सकता है जो पहले उन्हें स्वतः स्पष्ट प्रतीत होता था (कि ज्यादा भारी वस्तुएँ ज्यादा तेजी से गिरती हैं)। अब शिक्षक विद्यार्थियों से उन सभी कारकों के बारे में गहराई से विचार करने के बारे में कह सकता है जो इस प्रक्रिया में कोई भूमिका निभा सकते हैं। चर्चा के माध्यम से हो सकता है कि विद्यार्थी इस प्रकार के कारकों को चिन्हित करें – जैसे कि सतह का क्षेत्रफल, खोखलापन, खुरदुरापन, वातावरण की तेज हवा आदि। यह करने के बाद, फिर विद्यार्थी विभिन्न वस्तुओं के साथ विविध प्रकार के प्रयोग करेंगे जब तक कि वे उन पर आधारित इस गहरे निष्कर्ष पर न पहुँच जाएँ कि हल्की वस्तुएँ भी वाकई में उसी गति से गिरती हैं जितनी गति से भारी वस्तुएँ।

लेकिन क्या आपके दिमाग में वह 1% सन्देह अभी भी बचा रहता है कि यदि वायु का प्रतिरोध मौजूद न हो तो क्या सचमुच में एक पंख उसी समय जमीन पर पहुँचेगा जिस समय एक भारी बोलिंग बॉल पहुँचेगी? 100% पक्का विश्वास होने के लिए क्या लगेगा? उसके लिए तो एक ही रास्ता है कि इन वस्तुओं को एक निर्वात वातावरण में गिराया जाए – पर ऐसा वातावरण आपको कहाँ मिलेगा! हमारे सौभाग्य से यह खर्चीला प्रयोग किया जा चुका है – बी.बी.सी. की ह्यूमन यूनिवर्स नामक शृंखला से ली गई उसकी यह चकित करने वाली वीडियो क्लिप इस वैबसाइट पर देखें –

http://youtu.be/E43-CfukEgs



References

You can also visit our blog posts that discuss one of the above examples in details:

https://tostudentandteacher.wordpress.com/2015/01/17/does-a-heavier-object-fall-faster-to-the-ground/

http://blog.ei-india.com/2015/02/power-ofdemonstrations-on-unlearning/



__विष्णुतीर्थ अग्निहोत्री__ एजुकेशनल इनीशिएटिव्स में पिछले 10 सालों से मूल्यांकन तथा सीखने में सुधार करने पर काम कर रहे हैं और उनकी दिलचस्पी एक समेकित तथा बहु–विषयी पाठ्यक्रम विकसित करने में है।

__अनघ पुरन्दरे__ एजुकेशनल इनीशिएटिव्स में एक शिक्षा विशेषज्ञ हैं और विज्ञान में, खासतौर पर विज्ञान शिक्षा में, उनकी दिलचस्पी है।
__अनुवाद :__ सत्येन्द्र त्रिपाठी

बादलों से ढँका आकाश

आसिफ अख़्तर

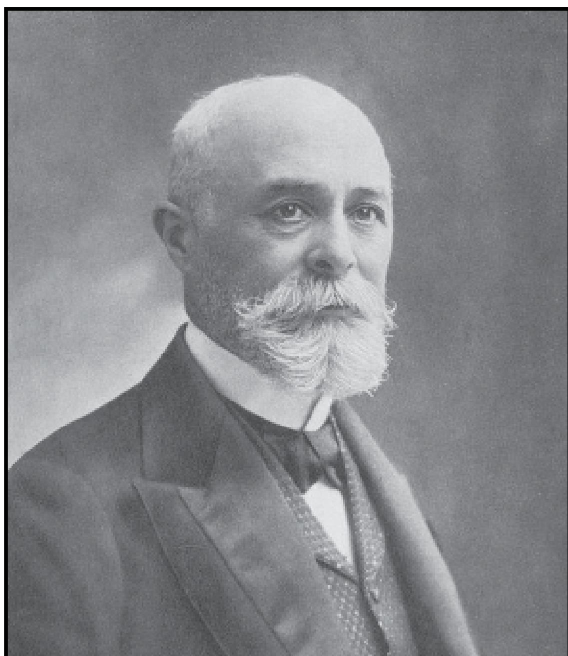
खराब मौसम तथा बहुत सम्भावित रूप से एक विफल प्रयोग के संयोग से हुए अवलोकन के परिणामस्वरूप किस प्रकार नोबेल पुरस्कार जीतने वाली रेडियोधर्मिता की खोज हुई? इस लेख में लेखक ने हैनरी बैक्वरैल के यूरेनियम लवणों के साथ किए गए प्रयोगों की कहानी बयान की है, जिसमें मूल रूप से इस भौतिकशास्त्री के द्वारा किए एक अप्रत्याशित और असामान्य अवलोकन को समझने के लिए किए गए वैज्ञानिक अनुसन्धानों की शृंखला का वर्णन किया गया है।

वह मार्च 1896 की पहली तारीख और पेरिस में सर्दी के मौसम का एक आलस भरा दिन था। पिछले चार दिनों से बादलों के पीछे छिपा सूर्य बाहर नहीं निकला था।

अपनी प्रयोगशाला में काम करते हुए भौतिकशास्त्री हैनरी बैक्वरैल को मालूम था कि ऐसे बादलों वाले दिन, उन्हें अपने चल रहे अध्ययन में कोई परिणाम नहीं मिल पाएँगे। पिछले कुछ महीनों से वे सूर्य के प्रकाश में एक्सपोज की जाने वाली फोटोग्राफिक प्लेटों का इस्तेमाल करते हुए फास्फोरैसेन्ट (स्फुरदीप्ति देने वाले, जो बाद तक दिखती रहती है) यौगिकों का अध्ययन कर रहे थे। पर, ऐसे सूर्य विहीन दिन के दौरान उनकी फोटोग्राफिक प्लेटों पर प्रकाश की क्रिया न हो सकने के कारण वे अप्रभावित बनी रहेंगी।

यह लगभग उसी समय की बात है जब संसार के वैज्ञानिक समुदाय में विल्हैम कोनरैड रोंटजेन द्वारा खोजी गईं X–किरणें शोध का लोकप्रिय विषय थीं। सबसे पहले पकड़ में आई X–किरणों के साथ वैक्यूम ट्यूबों (निर्वात नलिकाओं) में फास्फोरैसेन्स का एक रूप भी देखा गया था। हैनरी की दिलचस्पी इसकी जाँच–पड़ताल करने में थी कि क्या स्वाभाविक रूप से घटित होने वाली फास्फोरैसेन्स का किसी तरह से X–किरणों से कोई सम्बन्ध था। उन्होंने एक परिकल्पना प्रस्तावित की थी कि X–किरणों जैसा चीजों के भीतर प्रवेश कर सकने वाला विकिरण पैदा करने के लिए किसी वस्तु को स्वदीप्त होना (लुमिनैस– प्रकाश उत्सर्जित करना) जरूरी था।

इसे सिद्ध करने के लिए हैनरी ने प्रयोगों की एक शृंखला की योजना बनाई थी। इसमें वे पहले एक फास्फोरैसेन्ट यौगिक को अपनी प्रयोगशाला की खिड़की की पट्टी पर आने वाले सूर्य के प्रकाश में रखते। फिर इस यौगिक को एक धातु की वस्तु के साथ प्रकाश में एक्सपोज नहीं की गई फोटोग्राफिक प्लेट पर रख देते थे और फिर पूरे उपकरण को एक अपारदर्शी कागज से ढँक



ऐन्ट्वान हैनरी बैक्वरैल का एक पोट्रेट
Image Courtesy: Paul Nadar. Repository: Smithsonian Institution Libraries. Accessed on: Wikimedia Commons. License: Public Domain. URL: https://en.wikipedia.org/wiki/File:Portrait_of_Antoine-Henri_Becquerel.jpg

देते थे। उस उपकरण को प्रयोगशाला में उनकी अलमारी की एक अँधेरी दराज में रात भर रखा रहने दिया जाता था।

यदि परीक्षण किया जा रहा यौगिक वाकई में लुमिनेसेन्ट होगा, तो सूर्य के प्रकाश में रखे जाने से वह चमकने वाली आभा देने लगेगा। इस चमक में रखे जाने पर धातु की वस्तु का एक प्रतिबिम्ब फोटोग्राफिक प्लेट पर विकसित हो जाएगा। बैक्वरैल के अनुसार, यह चमक इस बात का संकेत देगी कि वह फास्फोरैसेन्ट यौगिक X–किरणें उत्सर्जित कर रहा था।

हैनरी ने अपने कुछ शुरुआती प्रयोगों के लिए यूरेनियम लवणों के एक संचय को चुना, जो उन्हें अपने पिता एडमण्ड बैक्वरैल से विरासत में मिला था। वे भी हैनरी की तरह एक भौतिकशास्त्री थे और ठोस वस्तुओं में फास्फोरैसेन्स के विषय पर अपने समय के अग्रणी विशेषज्ञ थे। हालाँकि यूरेनियम की खोज 1869 में हो चुकी थी। रसायनशास्त्री दिमित्री मैंडलीव ने आवर्ती तालिका



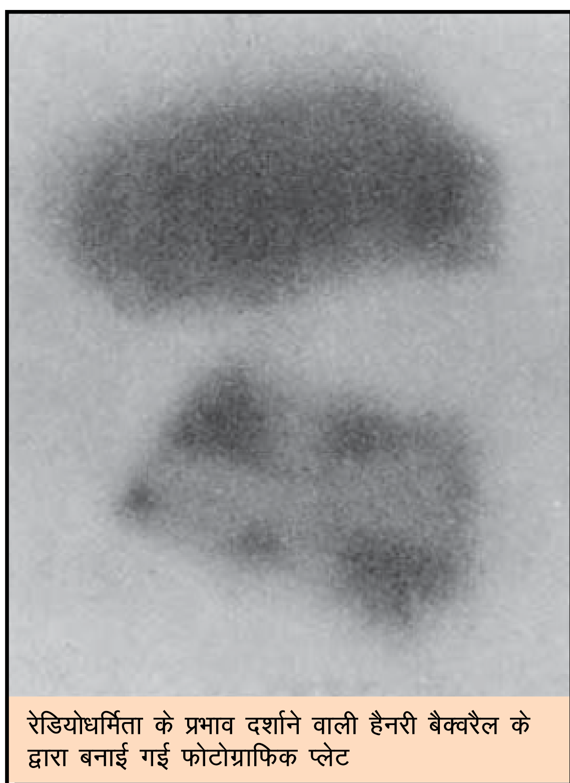
विल्हैम कोनरैड रोंटजेन

के उनके स्वरूप में (जिसमें उन्होंने तत्वों को उनके परमाणु भारों के बढ़ते हुए क्रम में व्यवस्थित किया था) यूरेनियम को सबसे भारी तत्व के स्थान पर रखा था। एडमण्ड बैक्वरैल ने यूरेनियम के सल्फाइड्स तथा अन्य यौगिकों का उनकी असाधारण रूप से चमकदार फास्फोरैसेन्स के कारण विस्तार से अध्ययन किया था।

जिस दिन हमारी कहानी शुरू होती है, हैनरी बैक्वरैल ने सभी फोटोग्राफिक प्लेटों को उन यूरेनियम क्रिस्टलों के साथ डेवलप करने का निर्णय लिया जिन्हें उन्होंने उसके पिछले सप्ताह तैयार किया था। पेरिस में सर्दियों के बादलों से ढँके आकाश के कारण उन लवणों में से किसी को भी ज्यादा धूप नहीं मिली थी। इसलिए हैनरी को अपनी प्लेटों पर ज्यादा कुछ दिखाई देने की उम्मीद नहीं थी।

फिर भी उन्होंने उन प्लेटों को डेवलप करने का निर्णय क्यों लिया, इसके बारे में तब से ही काफी अनुमान लगाए जाते रहे हैं। सुझाए गए कुछ

सबसे आम कारण हैं : उनमें सर्वोपरि थी हैनरी की जिज्ञासा या उनकी मितव्ययता की स्वाभाविक प्रवृत्ति – उन्हें उन फोटोग्राफिक प्लेटों को यूँ ही फेंकने में हिचकिचाहट हुई होगी जिन्हें उन्होंने अपना प्रयोग जमाने के लिए इतनी सावधानी से इस्तेमाल किया था। अक्सर सुझाया जाने वाला एक अन्य कारण है कि हैनरी को उसके अगले सप्ताह एक महत्त्वपूर्ण मीटिंग में भाग लेना था। उन्होंने आशा की होगी कि दिखाने के लिए कुछ न होने से तो उनके विफल प्रयोगों के परिणाम भी बेहतर होंगे। हैनरी की कार्यवाही का असली कारण तो शायद हमेशा एक रहस्य ही रहेगा।



रेडियोधर्मिता के प्रभाव दर्शाने वाली हैनरी बैक्वरैल के द्वारा बनाई गई फोटोग्राफिक प्लेट

परन्तु, जो बात हमें पता है, वह यह है कि जब हैनरी अपनी प्लेटों को विकसित कर रहे थे तो उन्हें उन पर कुछ बहुत धुँधले, हल्के प्रतिबिम्ब (जैसे कि कभी–कभी फास्फोरैसेन्ट पदार्थों को बहुत कम प्रकाश में रखने पर उनके साथ दिखाई देते हैं) दिखने की ही उम्मीद थी।

पर उन्होंने पाया कि न केवल उनकी प्लेटें किसी चीज से प्रभावित हो चुकी थीं, बल्कि वे उन पर कुछ बहुत चमकदार प्रतिबिम्ब देख सकते थे। यह बिलकुल ही अप्रत्याशित था। उनकी अँधेरी दराज में प्रकाश का कोई स्रोत नहीं था। पर्याप्त प्रकाश के बगैर उनकी फोटोग्राफिक प्लेटों पर वे स्पष्ट गहरे प्रतिबिम्ब कैसे प्रकट हो गए थे?

जिस लवण के परिणामस्वरूप उनकी फोटोग्राफिक प्लेटों पर ये प्रतिबिम्ब प्रकट हुए थे, वह पोटैशियम यूरानिल सल्फेट K2 U O2 (So4) था। उन क्रिस्टलों के साथ हैनरी ने उस प्रयोग को एक से ज्यादा बार दोहराया और हर बार उन्हें वही परिणाम प्राप्त हुआ। जब उन क्रिस्टलों को बहुत कम प्रकाश दिखाया गया, तब भी फोटोग्राफिक प्लेटों पर स्पष्ट गहरे काले प्रतिबिम्ब दिखाई दिए।

हैनरी ने बिना कोई समय बर्बाद किए इस बारे में एक रिपोर्ट पेरिस की ऐकैडिमी ऑफ साइंसेज को भेज दी। इस रिपोर्ट में हैनरी ने अपना निष्कर्ष व्यक्त किया था कि जो प्रतिबिम्ब उन्हें दिखाई दे रहे थे, वे पोटैशियम यूरानिल सल्फेट विसरित धुँधले प्रकाश और साथ ही परावर्तित (रिफलैक्टैड) तथा अपवर्तित (रिफ्रैक्टैड) प्रकाश के कारण उत्तेजित होने से बन रहे हो सकते हैं। उन्होंने यह भी सुझाव दिया कि इस तरह से उत्तेजित किए जा रहे यूरेनियम क्रिस्टल ऐसे विकिरणों को पैदा करने में सक्षम थे जो, बहुत सम्भव था कि X–किरणों के रूप में थे।

इस खोज का वैज्ञानिक समुदाय द्वारा बहुत दिलचस्पी के साथ स्वागत किया गया। उसे व्यापक रूप से दुनिया भर में दोहराया गया – और हमेशा उसके परिणामस्वरूप धुँधले प्रकाश में रखे गए यूरेनियम के लवणों के द्वारा फोटोग्राफिक प्लेटों पर वैसे ही प्रतिबिम्ब उत्पन्न किए गए। परन्तु यह भी स्पष्ट प्रतीत होता था कि उत्तेजित यूरेनियम क्रिस्टलों के द्वारा उत्पन्न कुछ ऊर्जा X–किरणों जैसी प्रकाश का स्पन्दन थीं। ये X–किरणें फोटोग्राफिक प्लेटों पर बनने वाले प्रतिबिम्बों के गाढ़ेपन को समझा सकने के लिए या इन क्रिस्टलों की गैसों का आयनीकरण करने की क्षमता को समझा सकने के लिए या हैनरी के प्रयोगों को दोहराने का प्रयास कर रहे भौतिकशास्त्रियों को कभी–कभी जला देने के लिए

पर्याप्त नहीं मालूम पड़ती थीं। क्या यह इस बात का संकेत था कि यूरेनियम क्रिस्टलों को कितने शक्तिशाली ढंग से उत्तेजित किया गया था?

अपने प्रयोगों की अगली शृंखला में हैनरी ने यह पता करने की कोशिश की कि यूरेनियम क्रिस्टलों को उत्तेजित करने के लिए किसी भी प्रकाश की जरूरत थी भी या नहीं। उन्होंने यह पहले जैसी ही विधि का इस्तेमाल करते हुए किया, सिवाय इसके कि नई शृंखला में उपयोग किए गए क्रिस्टलों को बिलकुल भी धूप नहीं दिखाई गई। क्रिस्टलों को एक अपारदर्शी कार्डबोर्ड के बक्सों में फोटोग्राफिक प्लेटों पर रखा गया। इनमें से कुछ प्रयोगों में एल्यूमिनियम तथा काँच की तख्तियों का उपयोग करते हुए, क्रिस्टलों को ऐमल्सन (प्लेटों पर लगे रासायनिक लेप) से भी अलग रखा गया। हर प्रयोग में एक से परिणाम प्राप्त हुए, जिसने यह दिखाया कि फोटोग्राफिक प्लेटों को विकसित करने के लिए उपयोग किए जाने से ठीक पहले यूरेनियम क्रिस्टलों को प्रकाश दिखाए जाने की कोई जरूरत नहीं थी। और यह भी कि फोटोग्राफिक प्लेटों पर देखे जा रहे प्रतिबिम्ब क्रिस्टलों तथा प्लेट के ऐमल्शन के बीच किसी रासायनिक अभिक्रिया का भी परिणाम नहीं थे। इससे हैनरी ने निष्कर्ष निकाला कि यूरेनियम क्रिस्टलों को प्रयोग के एकदम पहले उत्तेजित किए जाने की भी जरूरत नहीं थी। और यह कि वे क्रिस्टल ऐसे अदृश्य विकिरणों को पैदा करने में समर्थ थे जो इन यौगिकों द्वारा उत्सर्जित चमकदार किरणों से ज्यादा लम्बे समय तक बने रह सकते थे। परन्तु फिर भी वे यह समझने की गलती करते रहे कि यह गुण यूरेनियम लवणों की फास्फोरैसेन्स विशेषता से सम्बन्धित था।

इसलिए वे यह समझा सकने में असमर्थ थे कि उतने ही गहरे प्रतिबिम्ब यूरेनस सल्फेट जैसे गैर–फास्फोरैसेन्ट यूरेनियम लवणों के द्वारा उत्पन्न किए जाते हुए क्यों देखे गए। क्या यह सम्भव था कि तीव्र, अदृश्य विकिरणों को पैदा करने की इस क्षमता का फास्फोरैसेन्स से कोई सम्बन्ध नहीं था, बल्कि उसका पूरा सम्बन्ध उन पोटैशियम यूरानिल सल्फेट क्रिस्टलों की प्रकृति से था जिन्हें हैनरी अपने प्रयोगों में इस्तेमाल करते रहे थे? इस



सम्भावना की छानबीन करने के लिए, हैनरी ने अपने प्रयोगों की अगली शृंखला में यूरेनियम नाइट्रेट के क्रिस्टलों की जाँच–पड़ताल करने का निर्णय लिया। यह विदित है कि यूरेनियम नाइट्रेट को जब घोला जाता है या पिघलाकर अपने क्रिस्टलीकरण का पानी जैसा द्रव बना दिया जाता है तब वह अपनी लुमिनैसेन्स (दीप्ति) खो देता है। इसलिए हैनरी ने यूरेनियम नाइट्रेट क्रिस्टल को अँधेरे में गर्म किया और एक काँच की नली का इस्तेमाल करते हुए उसे गर्म करने वाली अल्कोहल की लौ के प्रकाश से भी बचाए रखा। पिघले हुए इस यौगिक का तब फिर से अँधेरे में क्रिस्टलीकरण होने दिया गया। गर्म करने की प्रक्रिया ने इस लवण की फास्फोरैसेन्स को नष्ट कर दिया था।

यदि हैनरी का यह मानना सही था कि केवल फास्फोरैसेन्ट यौगिक ही उन अदृश्य विकिरणों को पैदा कर सकते थे, तो फिर नए सिरे से बनाए गए यूरेनियम नाइट्रेट लवण के इन क्रिस्टलों के लिए वैसे प्रतिबिम्ब बनाना सम्भव नहीं होना चाहिए था जैसे कि यूरेनियम सल्फेट क्रिस्टलों के द्वारा फोटोग्राफिक प्लेटों पर बनाए जाते देखे गए थे। परन्तु जब यह प्रयोग किया गया, तो उत्पन्न हुए प्रतिबिम्बों की स्पष्टता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा, वे वैसे ही गहरे थे।

अपने इन प्रयोगों के परिणामस्वरूप, हैनरी ने यह निष्कर्ष निकाला कि जिन अदृश्य विकिरणों ने

फोटोग्राफिक प्लेटों को डेवलप करने में मदद की थी, वे सभी फास्फोरैसेन्ट यौगिकों का सामान्य गुण नहीं थे, बल्कि वे यूरेनियम के लवणों का ही विशिष्ट गुण थे। यह तथ्य कि वे विकिरण यूरेनियम के परमाणुओं द्वारा उत्पन्न किए गए थे, अन्ततः मई 1896 में सिद्ध हो गया जब हैनरी ने दिखाया कि विशुद्ध यूरेनियम धातु का उपयोग करने पर प्राप्त होने वाले प्रतिबिम्ब, यूरानिल सल्फेट से पैदा हुए प्रतिबिम्बों की तुलना में 3 से 4 गुना अधिक गहरे थे।



इस घटना को मैरी क्यूरी द्वारा रेडियोधर्मिता (रेडियोएक्टिविटी) का नाम दिया गया। अपने पति पियरे क्यूरी के साथ मैरी ने इन अदृश्य किरणों पर अपना सघन शोध करना जारी रखा। हैनरी, मैरी एवं पियरे को संयुक्त रूप से 1903 में भौतिकशास्त्र का नोबेल पुरस्कार प्रदान किया गया।

उस प्रारम्भिक अवलोकन को, जो हैनरी को इस खोजयात्रा के मार्ग पर ले गया, आज संयोग या आकस्मिक खोज के एक उदाहरण की तरह सराहा जाता है। पर किसी भी ऐसी अन्य आकस्मिक खोज की ही तरह, इस तथ्य को पहचानने की काबिलियत –कि उनकी प्लेटों पर दिखाई देने वाले गहरे प्रतिबिम्ब बनना तभी सम्भव था जब उन प्लेटों को निरन्तर प्रकाश के किसी तीव्र स्रोत का सामना करना पड़ा हो और उनके प्रयोग में प्रकाश के किसी ऐसे ज्ञात स्रोत के न होने के कारण यह परिणाम असाधारण था – यह दर्शाती है कि यह खोज हैनरी की वैज्ञानिक प्रतिभा पर भी निर्भर थी। इतना ही नहीं, उनके प्रारम्भिक अवलोकन के बाद, हैनरी के अनगिनत प्रयोगों (जिनमें से कई झूठी पगडण्डियों पर भी ले गए) के परिणामस्वरूप आखिरकार रेडियोधर्मिता की जो बेहतर और सही समझ हासिल हुई, वह इस खोज में निहित परिश्रम और लगन का एक साक्षी दस्तावेज है।

पिछले 120 वर्षों में इन अदृश्य विकिरणों को वरदान तथा अभिशाप दोनों रूपों में जाना गया है। एक ओर इस घटना के परिणामस्वरूप विद्युत के रूप में ऊर्जा के एक बड़े स्रोत का जन्म हुआ है। दूसरी ओर इन विकिरणों का उपयोग सैकड़ों–हजारों कैंसर रोगियों का जीवन बचाने के लिए भी किया गया है। लेकिन इसने ऐसे आणविक शस्त्रों के उत्पादन में भी सहायता की है जो पृथ्वी ग्रह से समूची मानव जाति का अस्तित्व मिटा देने में समर्थ हैं।

References

1. Discovery of radio-activity. Kamble, V. B. (2015, March 22). Retrieved from www.vigyanprasar.gov.in http://www.vigyanprasar.gov.in/dream/apr2001/radioactivity.htm

2. Benchmarks: Henri Becquerel discovers radioactivity on February 26, 1896. Carolyn Gramling. Earth Magazine, February 28, 2011. URL: http://www.earthmagazine.org/article/benchmarks-henri-becquerel-discovers-radioactivity-february-26-1896.

3. "Henri Becquerel - Biographical". Nobelprize.org. Nobel Media AB 2014. Web. 27 Jun 2015. http://www.nobelprize.org/nobel_prizes/physics/laureates/1903/becquerel-bio.html

4. Henri Becquerel. (2015, June 27). In Wikipedia, The Free Encyclopedia. Retrieved 14:55, June 27, 2015, from https://en.wikipedia.org/w/index.php?title=Henri_Becquerel&oldid=668908867



आसिफ अख्तर *अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन के जिला संस्थान, अल्मोड़ा की विज्ञान टीम के एक सदस्य और स्रोत व्यक्ति हैं। वे दो दशकों से हाईस्कूल तथा इण्टर कालेज स्तर पर जीवविज्ञान तथा रसायनशास्त्र पढ़ाते रहे हैं। आसिफ को विज्ञान कथाएँ पढ़ना तथा विज्ञान और सामाजिक मुद्दों पर व्यंग्यचित्र बनाने में आनन्द आता है। वे विज्ञान पत्रिका, विज्ञान प्रगति, में नियमित रूप से लिखते रहे हैं। वे बायो–थिंकर्स, पटना के संस्थापक अध्यक्ष हैं जो विज्ञान को लोकप्रिय बनाने वाला एक संगठन है।* ***अनुवाद*** *: सत्येन्द्र त्रिपाठी*

मक्खियों का अनजाना संसार!

गीता अय्यर

क्या बात मक्खियों को व्याध–पतंगों (ड्रैगनफ्लाई) या तितली से भिन्न बनाती है? चमकदार सुन्दर ब्लूबॉटल और ग्रीनबॉटल मक्खियाँ किस तरह हत्याओं को सुलझाने में सहायता करती हैं? कीड़ों के काटने के चिन्ह, त्वचा के घाव (गॉल्स) और चाकलेट में क्या चीज समान होती है? क्या मक्खियों में स्वाद कलिकाएँ (टेस्ट–बड्स) होती हैं? हम विज्ञान की कक्षा में मक्खियों का परिचय कैसे करवाते हैं? यह लेख असली मक्खियों के दिलचस्प संसार, उनकी अविश्वसनीय विविधता तथा उनके द्वारा हमें प्रदान की जाने वाली विविध प्रकार की सेवाओं की छानबीन करता है और अन्त में एक ऐसी गतिविधि बताता है जिसका उपयोग शिक्षक मक्खियों के जीवन के एक पहलू के बारे में विद्यार्थियों को समझाने के लिए कर सकते हैं।

आमतौर पर मक्खियाँ गन्दगी, बीमारी और घृणा की कल्पना जगाती हैं। मक्खियों की इस छवि से हमारा परिचय स्कूल में होता है। एक विद्यार्थी से बेचारी घरेलू मक्खी का परिचय इतने निर्णायक तरीके से करवाया जाता है, कि उससे हमारे मन पर यह छाप बन जाती है कि *सभी मक्खियाँ घृणास्पद जीव होती हैं।* घरेलू मक्खी के बारे में सीमित वैज्ञानिक जानकारी के साथ, गन्दगी पीने वाले उसके मुँह के अंगों का सजीव वर्णन होता है जो हमारे मन में मक्खी की अवांछनीय कीट जैसी अमिट छवि बना देता है। मक्खी से विद्यार्थी की अगली मुलाकात स्वास्थ्य पर किसी पाठ के दौरान बीमारियों के वाहक के रूप में होती है और वह मक्खियों के घृणास्पद जीवों के अलावा कुछ और हो सकने की सम्भावना को, मानो ताबूत में आखिरी कील ठोकने जैसे, निर्णायक ढंग से समाप्त कर देती है।

> *"मक्खी को जानने का मतलब ज्ञान की महत्ता में थोड़ा–सा भागीदार बनना है।"*
>
> *– प्रोफेसर विंसेन्ट जी डैथियर*

इसमें कोई सन्देह नहीं कि अनेक मक्खियाँ होती हैं जो काटती हैं और बीमारियाँ फैलाती हैं। *लेकिन क्या सभी मक्खियाँ ऐसी ही छवि बनाए जाने की हकदार हैं?* अब समय आ गया है कि कोई मक्खियों के पक्ष में भी बोले। उनके रंगों, विविधता और शोभा का अनुमान केवल घरेलू मक्खी के आधार पर या सड़ते हुए कूड़े के ढेर पर उसकी उछलकूद को देखकर नहीं लगाया जाना चाहिए, हालाँकि यह उछलकूद भी बिना लाभ की नहीं होती। मैं जल्दी ही आपको बताऊँगी कि वह कैसे और क्यों होती है?



भूरी मसिड मक्खी

मक्खियों के ऐसे अनेक रोचक पहलू होते हैं जिनके बारे में हम विस्तार से चर्चा कर सकते हैं। लेकिन मैं इस लेख में शहरी वातावरण में पाए जाने वाले उनके एक छोटे समूह और उस परिवार की कुछ मक्खियों की विविधता तथा उनके द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाओं से आपका परिचय करवाने का प्रयत्न करूँगी। मैं लेख की समाप्ति ऐसे विवरण से करूँगी जिसमें घरेलू मक्खी के मुँह के अंगों का निरीक्षण सूक्ष्मदर्शी यंत्र के नीचे रखी कृत्रिम रंगों वाली स्लाइड के माध्यम से करने के बजाय, एक अधिक रोचक ढंग से किया जा सकता है।

क्या मक्खियाँ गन्दी होती हैं?

मक्खियाँ सबसे ज्यादा साफ कीटों में से होती हैं। वे अपनी निजी साफ–सफाई के बारे में बहुत फिक्रमंद रहती हैं। वास्तव में, व्यक्तिगत साफ–सफाई के बारे में मनुष्य उनसे एकाध सबक सीख सकते हैं। अगली बार किसी मक्खी का नजदीक से निरीक्षण कीजिए। आप गौर करेंगे कि वह बार–बार अपने को कितना साफ करती है।

यदि मक्खी सड़ने वाली सामग्री पर जाती है, तो ऐसा वह अपने पोषण की जरूरतों को पूरा करने के लिए करती है। आखिरकार हम मनुष्य भी सड़ने वाले पदार्थ पर उगने वाले खाद्यों को पसन्द करते हैं, क्या ऐसा नहीं है? यदि आप अपने प्रतिदिन ग्रहण किए जाने वाले भोजन का एक सर्वेक्षण करें, तो आपको पता चलेगा कि हमारी पसन्दीदा खाने की चीजों में से *कितनी* सड़ते हुए पदार्थों से आती हैं! उदाहरण के लिए मशरूमों को ही ले लीजिए, जो गोबर के ढेर पर बहुत अच्छी तरह उगते हैं। या एक स्वास्थ्यवर्धक पेय कोम्बुचा को लें, जो काली या हरी चाय के शक्करयुक्त घोल पर कुछ खास किस्म के खमीर (यीस्ट) तथा जीवाणुओं (बैक्टीरिया) की प्रजातियों को उगने (कोम्बुचा की कल्चर उस घोल पर एक लिसलिसे पैनकेक जैसी होती है) देने के तरीके से बनाया जाता है! हम कितने प्रकार के खमीर वाले खाद्य पदार्थों का उपभोग करते हैं!

मक्खियाँ जो बीमारियाँ फैलाती हैं, उसमें शायद कुछ दोष मनुष्यों का भी होता है। यदि हम अपनी साफ–सफाई और परिवेश की स्वच्छता पर अधिक ध्यान देते, तो मक्खियाँ हमारे वातावरण में ऐसी आजादी से न मँडराती रहतीं, क्या वे ऐसा कर पातीं?

मक्खी क्या है?

बटरफ्लाई (तितली), ड्रैगनफ्लाई, स्कोर्पियन फ्लाई, मेफ्लाई, स्टोनफ्लाई, फायरफ्लाई (जुगनू), आउलफ्लाई इत्यादि से आबाद इस संसार में सिर्फ फ्लाई (मक्खी) कहलाने वाली यह कीट क्या है?

ऊपर जिन कीटों की सूची दी गई है, वे एक कीटविज्ञानी के दृष्टिकोण से मक्खियाँ नहीं होतीं। असली मक्खियाँ डिपटेरा परिवार की सदस्य होती हैं। यह नाम उनकी पारिभाषिक विशेषता कि इन मक्खियों के पास सिर्फ एक जोड़ा पंख होते हैं, को दर्शाता है (लैटिन में डि का मतलब दो और पटेरा का मतलब पंख होता है)। इसके विपरीत, सभी अन्य कीट परिवारों के कीड़ों में पंखों के दो जोड़े होते हैं! यह तथ्य इसे और भी अधिक रोचक बनाता है कि असली मक्खियाँ परमियन 250 MYA

(2500 लाख वर्ष पहले) में मौजूद अपने चार–पंखों वाले पूर्वजों से विकसित हुई हैं। परन्तु उनकी इन आज की उत्तराधिकारियों में पंखों का दूसरा जोड़ा – उनके पीछे के पंख – ठूँठ जैसी संरचनाओं में बदल गया है, जिन्हें हाल्टर्स कहते हैं। प्रत्येक हाल्टर को एक जायरोस्कोप (घूमने में मदद करने वाला उपकरण) जैसा समझा जा सकता है, वे उड़ान के दौरान सन्तुलन बनाए रखने के लिए बहुत जरूरी होते हैं।


क्रिसोप्स प्रजाति : बाइटिंग फ्लाई

ऐसा नहीं लगता कि दो पंख रह जाने ने इसे अन्य कीटों से कोई कम फुर्तीला बना दिया हो, वह अत्यन्त फुर्तीली होती है और वाकई में अपने नाम फ्लाई (उड़ना) की हकदार है। उन तथ्यों पर विचार करें जो मक्खियों पर होने वाली कक्षा की पढ़ाई में नहीं पता चलते। मक्खियाँ उड़ान में अविश्वसनीय रूप से चपल होती हैं। कीटों में वे सबसे अच्छी हवाबाज होती हैं – वे मँडरा सकती हैं, पीछे की ओर उड़ सकती हैं, अपनी जगह पर मुड़ सकती हैं और उड़कर कमरे की छत पर उल्टी लटक सकती हैं। उनके पास सैंसर्स (संवेदक) – गति सूचक – होते हैं जो उनके ऐंटिना के एक अंग अरिस्टा में स्थित रहते हैं और उनकी उड़ने की गति को मापते रहते हैं। एक घरेलू मक्खी के पंखों के फड़फड़ाने की गति लगभग 180 बार प्रति सेकेण्ड होती है! मनुष्य की अपनी मांसपेशी सिकोड़ने की सबसे तेज गति एक सेकेण्ड में दस बार होती है। इसलिए यह कोई रहस्य नहीं कि एक मक्खी को सपाटे से मारना इतना कठिन क्यों होता है!

संसार में कितनी मक्खियाँ हैं?

कोई उनकी ठीक–ठीक संख्या नहीं जानता। जैसा कि पहले जिक्र किया गया है, असली मक्खियाँ डिपटेरा परिवार की सदस्य होती हैं जो कि कीटों में तीसरा सबसे बड़ा समूह होता है। मच्छर भी इसी परिवार के सदस्य होते हैं! विशेषज्ञों के द्वारा मक्खियों की 1,60,000 से भी अधिक प्रजातियों का पहले ही वर्णन किया जा चुका है। अनेक अन्य का अभी वर्गीकरण किया जाना और बहुत–सी अन्य का खोजा जाना अभी बाकी है। आप कह सकते हैं, इसका मतलब वाकई में बहुत विराट संख्या होता है!

मक्खियों की सेवाएँ और विविधता

इस ग्रह पर पशुओं (जिनमें मनुष्य भी शामिल हैं) के हर परिवार में उनके खलनायक और नायक होते हैं। मक्खियों का परिवार भी इसका कोई अपवाद नहीं है! मक्खियों की दुनिया की छानबीन करके हम बहुत–सी दिलचस्प बातें जान सकते हैं। उनमें से कुछ का मैं यहाँ वर्णन करूँगी।

परागण करने वालों के रूप में मक्खियाँ : यह एक अच्छी तरह स्थापित तथ्य है कि पौधों और कीटों, दोनों ने अपनी विविधता के विकास के लिए परस्पर एक–दूसरे को प्रभावित किया है। माना जाता है कि फूलों वाले शुरुआती पौधों का परागण करने वालों में मक्खियाँ सबसे आगे रही हैं, फिर भी ऐसी महत्त्वपूर्ण सेवा प्रदान करने में उनकी भूमिका अपेक्षाकृत अनजानी ही बनी रही है। यह विदित है कि 150 डिपटेरा परिवारों में से, तकरीबन 70 परिवारों की मक्खी प्रजातियाँ (ईवैनहिइस आदि, 2008) भोजन पाने के लिए फूलों के पास जाती हैं। यह एक दस्तावेजी तथ्य है कि सैकड़ों (लार्सैन आदि के अनुसार, करीब 550) प्रकार के जंगली और उगाए गए पौधों का परागण प्राथमिक रूप से मक्खियों द्वारा ही किया जाता है। मक्खियों के द्वारा किए गए परागण को आमतौर पर मायोफिली कहा जाता है।

क्या चीज मक्खियों को इतना अच्छा परागण करने वाला बनाती है? न केवल उनकी संख्या भरपूर

होती है, बल्कि वे बहुत अलग–अलग तरह के परिवेशों में भी मौजूद रहती हैं। ठण्डे आल्पाइन तथा आर्कटिक क्षेत्रों में जहाँ मधुमक्खियों के द्वारा होने वाला परागण घट जाता है, मक्खियाँ ही सबसे महत्त्वपूर्ण परागणकर्ता होती हैं। माना जाता है कि जंगलों के निचले क्षेत्रों में छोटे, साधारण से दिखने वाले फूलों या डायोऐसियस फूलों वाली विविध प्रकार की झाड़ियों का परागण करने में मक्खियों की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है। उनकी भरपूर मौजूदगी के अलावा उनकी शारीरिक विशेषताओं की विविधता – जैसे कि मुँह के अंगों, जीभ की लम्बाई, पिलोसिटी (बालों का घनापन) की साइज और गहनता आदि में परिवर्तन – ये सभी मक्खियों को कुछ सबसे असरदार परागण करने वाली सार्वकालिक जीव बनाने में योगदान देते हैं। इस बात के समर्थन में तो शायद फूलों वाले पौधे भी अपने सिर हिला देंगे!

मक्खियाँ अपने खुद के कारणों से फूलों के पास जाती हैं – फूलों का मधु और पराग उनके भोजन के स्रोत होते हैं। पराग में मौजूद प्रोटीन, कुछ मक्खियों के प्रजनन करने के लिए आवश्यक होते हैं। कुछ मक्खियाँ फूलों पर अपने अण्डे देने जाती हैं, ऐसा करके वे यह सुनिश्चित कर लेती हैं कि उनके विकसित होते लार्वा को फूलों के सिरों, बीजों या बनते हुए फलों के रूप में आसानी से भोजन मिलता रहेगा। और इसलिए कुछ मक्खियों के लिए फूल समागम (मेटिंग) या मिलने (डेटिंग) के स्थान होते हैं। यह कितना सुविधाजनक है!

इन परागण करने वालियों में मेरी पसन्दीदा निस्सन्देह रूप से सिरफिडे परिवार की खूबसूरत और रंगबिरंगी मक्खियाँ हैं, जिन्हें आमतौर पर होवर फ्लाइज (मँडराने वाली मक्खियाँ) या फ्लावर फ्लाइज (फूलों वाली मक्खियाँ) कहा जाता है। पहली नजर में होवर फ्लाइ शायद किसी को मक्खी जैसी लगेगी भी नहीं, क्योंकि वह मक्खी के बजाय मधुमक्खी जैसी अधिक दिखती है। परन्तु, उनमें से प्रत्येक की इतनी लम्बी प्रोबोसिस (सूँड़) होती है कि वह मधु पीने के लिए गहरे से गहरे दलपुंजों में जा सकती है। यह उन्हें बहुत बढ़िया परागणकर्ता बनाता है जो कई प्रकार के पौधों की सेवा करती हैं और इस भूमिका में मधुमक्खियों के बाद उनका दूसरा स्थान होता है। हम जिन खाद्य पदार्थों को खाते हैं उनमें से अनेक का परागण होवर फ्लाइज के द्वारा ही किया जाता है। सिर्फ थोड़े से उदाहरण लें तो, हम इन मक्खियों को आम, सेब, नाशपाती, चेरी, स्ट्राबेरी के फूलों पर या धनिया, प्याज,गाजर, मिर्ची और शिमला मिर्च आदि पर देख सकते हैं।

किसी भी कीट का जीवन ऐसी तरकीबों और आदतों से भरा रहता है जो उसके जीवित रहने में योगदान देती हैं। एक ऐसी विशेषता है लार्वा तथा वयस्कों के लिए अलग–अलग खाद्य स्रोतों का होना। वयस्क कीट अपनी सन्तानों के साथ भोजन के लिए प्रतिस्पर्धा नहीं करते। इसलिए जहाँ एक वयस्क होवर फ्लाइ परागण में मदद करने वाली शाकाहारी जीव होती है, वहीं उसका लार्वा या मैगट अन्य कीड़ों (ज्यादातर ऐफिड्स तथा पौधों का रस चूसने वाले अन्य कीड़ों) को खाने वाले (इंसेक्टीवोरस) होते हैं, और इस तरह कीट नियंत्रक अभिकर्ताओं की तरह काम करते हैं। यह एक और ऐसा तथ्य है जिस पर शायद ही कोई ध्यान दिया जाता है। इसलिए सिरफिडे मक्खियाँ परागणकर्ताओं और कीट नियंत्रकों, दोनों तरह से महत्त्वपूर्ण होती हैं।


होवर फ्लाई *मेसैमब्रियस क्वाड्रिविट्टाटस*

कीटों को आकर्षित करने के लिए पौधे विभिन्न प्रकार की गन्ध छोड़ते हैं। कुछ फूलों के सड़ते हुए अंगों से निकलने वाली दुर्गन्ध, कालीफोरिडे परिवार की कैरियन (सड़ा मांस) तथा डंग (गोबर)

मक्खियों को आकर्षित करती है। वे इन फूलों पर सड़ते हुए मांस को पाने की आशा में जाती हैं और उनका परागण करके निराश होकर लौटती हैं। आमतौर पर ब्लो फ्लाइज कहलाने वाली ब्लूबॉटल तथा ग्रीनबॉटल मक्खियाँ बहुत रंगीन और आकर्षक होती हैं। दिलचस्प बात यह है कि वे अपराधों की जाँच (फोरेंसिक्स) में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं (नीचे देखें)।


ब्लो फ्लाई – ब्लू बॉटल मक्खी, *कालीफोरा प्रजाति*


ब्लो फ्लाई – ग्रीनबॉटल मक्खी, *लुसिल्ला प्रजाति*


गोल्डन ब्लो फ्लाई

ताबानिडे परिवार की हट्टीकट्टी मक्खियाँ, जो आमतौर पर हॉर्स फ्लाइज (घोड़े की मक्खियाँ) या ताबानिड मक्खियाँ कहलाती हैं, ज्यादातर खून की प्यासी होती हैं, लेकिन उनमें से कुछ तुलना में कम दुष्ट होती हैं। वे तंग करने वाले कीटों की तरह जानी जाती हैं, क्योंकि उनमें से कई प्रजातियाँ जानवरों और मनुष्यों को काटती हैं। लेकिन कुछ अपनी दर्शनीय लम्बी जीभों से ऐसे फूलों का परागण करती हैं जिनके दलपुंज लम्बी नली के आकार के होते हैं। ताबानिड मक्खियाँ फिलोलिचे प्रजाति की होती हैं। इनकी कुछ मादा मक्खियों में उनकी लम्बी जीभ खून चूसने तथा फूलों का मधु चूसने, दोनों कामों के लिए बनी होती है! लम्बी जीभों वाली मक्खियों के द्वारा होने वाले परागण का राइनो–मायोफिली नाम से वर्णन किया जाता है।


ताबानिड मक्खी–फिलोलिचे प्रजाति, *फोटो : संजय सोंधी*


ताबानिड मक्खी–फिलोलिचे प्रजाति, *फोटो : संजय सोंधी*

सारे संसार के प्रिय खाद्य पदार्थ चाकलेट के अस्तित्व का श्रेय मक्खियों को है। मिजेस (छोटे मच्छर) भी मक्खियाँ होती हैं। उनमें से वे जो सेराटोपोगोनिडे तथा सेसिडोमाईडे परिवारों की

होती हैं उन्हें उनकी काटने और घाव बनाने वाली आदतों के कारण अधिक जाना जाता है। पर उनमें से सभी काटने वाली या घाव बनाने वाली नहीं होतीं। कोका का पौधा उसके मुख्य तने के निचले हिस्से में पैदा होने वाली नन्हीं सफेद मंजरियों (ब्लॉजम्स) के परागण के लिए इन दो परिवारों की छोटी मिज प्रजातियों पर निर्भर करता है। इस फूल की मशरूम के जैसी गन्ध उसी तरह मिजेस को आकर्षित करती है, जैसे चाकलेट हमें आकर्षित करती है। कुछ सीमित क्षेत्रों में होवर मक्खियों की एक विशेष प्रजाति के अलावा, कोका के पौधों को फल पैदा करने के लिए मिजेस मक्खियों की ही जरूरत होती है। यदि मिज नहीं, तो कोका नहीं और चाकलेट भी नहीं! क्या मुझे मिजेस के लिए तालियाँ बजतीं सुनाई दे रही हैं? अब जब अगली बार चाकलेट या कोका की दावत उड़ा रहे हों, तो मक्खियों को धन्यवाद देना याद रखें।


एक मिज

फोरैंसिक्स (अपराधों की जाँच का विज्ञान) में मक्खियाँ : जीवित से लेकर मृत तक, फूलों से लेकर लाशों तक पर जब मक्खियाँ अपने लिए पोषण तलाशती हैं, तो वे दूसरे जीवों को अप्रत्यक्ष सहायता पहुँचाती हैं। अपराधों की जाँच–पड़ताल करने में मक्खियाँ मनुष्यों की मदद करती हैं और वे फोरैंसिक कीटविज्ञानियों की एक पसन्दीदा जीव होती हैं।

ब्लो मक्खियाँ केवल परागण करने वाली ही नहीं होतीं; पशुओं के विघटित होते, सड़ते हुए पदार्थ के प्रति उनका जबर्दस्त लगाव उन्हें मृत देहों की ओर आकर्षित करता है। वास्तव में किसी मृत्यु स्थल पर पहुँचने वाली वे पहली जीव होती हैं! उनकी गन्ध की इन्द्रिय इतनी तीव्र होती है कि जाहिर तौर पर एक ब्लो मक्खी 16 किलोमीटर दूर से मरे हुए शरीर को सूँघ सकती है! इस परिवार के सदस्य विभिन्न नामों से जाने जाते हैं – ब्लूबॉटल, ग्रीनबॉटल आदि। वे आसानी से पहचानी जा सकती हैं – वे आम घरेलू मक्खी के एक बड़े प्रतिरूप जैसी दिखती हैं। कोई पूछ सकता है कि वे मृत देहों की ओर क्यों खिंची चली आती हैं? ब्लो मक्खियाँ अपनी सन्तानों के लिए एक भोजन स्रोत की तरह मृत देहों को देखती हैं। वे लाशों के छिद्रों में अपने अण्डे देती हैं और 24 घण्टे के भीतर उन अण्डों में से मैगट (छोटी मक्खियों जैसे कीड़े) निकल आते हैं। सरकोफेगिडे परिवार की फ्लैश फ्लाइज (मांस की मक्खियाँ) शवों के ऊपर सीधे जीवित सन्तानों को जन्म देती हैं! उनके ऐसे आचरण से हमें कैसे मदद मिलती है? एक ब्लो मक्खी का जीवन इतिहास भली–भाँति दर्ज किया हुआ होता है और वह उन मृत देहों के पोस्टमार्टम के दौरान, जिन्होंने इन मक्खियों को आकर्षित किया, बहुत सी जानकारियाँ प्रदान करता है।


फ्लैश फ्लाई

पोस्टमार्टम के दौरान महत्त्वपूर्ण जानकारी प्रदान करने में मक्खियों की कुछ अन्य प्रजातियाँ भी समान रूप से उपयोगी होती हैं – जैसे कि ब्लैक सोल्जर फ्लाई, कॉफिन फ्लाई, ब्लैक स्कैवेंजर फ्लाई, मसिडे परिवार की हाइड्रोटी प्रजाति की सदस्य मक्खियाँ तथा हम्पबैक्ड फ्लाइज (कूबड़वाली मक्खियाँ)।

उनकी प्रदान की गई सेवाओं का दायरा यह पता करने कि क्या लाश को अपराध के मूल स्थान से हटाया गया है से लेकर टोक्सिकोलोजी (जहर विज्ञान) और कई मामलों में मौत के समय का निर्धारण करने तक में भी होता है।

चीन के एक अपराध खोजी संग त्जू की 1247 ईसवी में लिखी गई किताब "द वाशिंग अवे ऑफ रोंग (अपराध को धोकर छिपाना)" अपराधों की जाँच–पड़ताल में मक्खियों की भूमिका के बारे में पहला लिखित दस्तावेज है। अपराधों की जाँच के कीटविज्ञान की नींव रखने वाली यह पहली किताब है। चीन के एक गाँव में एक हत्या होती है और मृत व्यक्ति का शव बुरी तरह कटा हुआ पाया जाता है। अपनी जाँच में कोई प्रगति न होती देखकर जाँचकर्ता सभी गाँव वालों को अपने हँसिए लाने को कहता है और उन्हें अपने सामने जमीन पर रखवाता है। जल्दी ही एक हँसिए पर मक्खियों का झुंड मँडराने लगता है। उस हँसिए के मालिक ने उसे अच्छी तरह से धोया नहीं था और मक्खियाँ खून की गन्ध से आकर्षित हो गई थीं। उसका मालिक अपराध करना स्वीकार कर लेता है। इस तरह अपराधों को सुलझाने में मक्खियों का इस्तेमाल शुरू हुआ।

यदि आप अँग्रेजी के टी.वी. धारावाहिक "बोन्स" को पसन्द करते हैं, तो निश्चित ही आप उसके पात्र जैक हॉजिन्स, जो एक फोरैंसिक कीटविज्ञानी तथा जीवविज्ञानी है, के काम के माध्यम से फोरैंसिक कीटविज्ञान की बारीकियों से पहले से ही परिचित होंगे।

मक्खियों की मदद से सुलझाए गए अपराधों के अनेक अन्य उदाहरण भी उपलब्ध हैं।

कीट नियंत्रक एजेन्टों (अभिकर्ताओं) के रूप में मक्खियाँ : खेती पर शोध करने वाले और खेती करने वाले किसान, फाइटोफेगस कीटों की रोकथाम करने में मक्खियों के द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाओं की गवाही देंगे। इन भूमिकाओं में मदद करने वाली बहुत–सी मक्खियाँ होती हैं, परन्तु उनमें से मेरी पसन्दीदा कुछ मक्खियों का वर्णन नीचे किया गया है।

मैं उन्हें जुएल (रत्न) मक्खियाँ कहती हूँ, न कि लम्बे–पैरों वाली मक्खियाँ जैसा कि उन्हें आमतौर पर कहा जाता है। उनका यह अधिक प्रचलित नाम उनकी लम्बी टाँगों की ओर इशारा करता है, जो डोलिकोपोडिडे परिवार की मक्खियों की एक स्पष्ट दिखाई देने वाली विशेषता होती है। जुएल फ्लाइज छरहरी और नाजुक छोटी मक्खियाँ होती हैं, जिनके सुन्दर रंग होते हैं। वे ज्यादातर धातु जैसी चमक वाली नीली, हरी और सुनहरी होती हैं, पर पर्यावरण की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण इन मक्खियों में से कुछ का रंग फीका सिलेटी भी होता है। ये बहुत कुछ चलने के लिए पैरों में बँधे बाँस (स्टिल्ट्स) जैसी इतनी विशिष्ट दिखती हैं कि वे आपकी नजरों से चूक नहीं सकतीं। उनका शरीर छरहरा होता हैं, आँखें बहुत उभरी हुई होती हैं और उनकी खास पहचान उनकी लम्बी टाँगें होती हैं। इस प्रजाति के नर अपनी टाँगों का प्रदर्शन मादा मक्खियों को रिझाने के लिए करते हैं, जो कि लगता है कि मनुष्यों की प्रजाति के बिलकुल विपरीत है! शानदार करतब और संकेत नरों के प्रणय व्यवहार की खासियत होते हैं। इनमें से अनेक मक्खियाँ उड़ान के दौरान समागम करती हैं, जो कि बहुत थकाने वाला होता है। इसलिए नर कभी–कभी एक ऐसी संरचना दर्शाने के द्वारा भ्रम निर्मित करते हैं जिसमें मादा मक्खियों को लगता है कि उनका समागम उड़ान में हो रहा है। जबकि वास्तव में वे छली गई होती हैं।

अधिकांश परिवेशों में पाई जाने वाली जुएल मक्खियाँ परभक्षी होती हैं और वे बिना रीढ़ वाले विभिन्न प्रकार के कीटों को खाती हैं – जैसे कि ऐफिड्स, थ्रिप्स, स्पाइडर माइट्स तथा कोलैम्बोलन्स आदि। वास्तव में डोलिकोपस की एक खास प्रजाति मच्छरों के लार्वा को खाती है! कुछ प्रजातियाँ मेहतर जैसी सफाई करने वाली भी होती हैं। ये बहुत चंचल होती हैं, इसलिए उनका निरीक्षण करने के लिए व्यक्ति को एकदम स्थिर और चुप रहना पड़ता है।

लगभग एक–से काम करने वाले सिपाही (सोल्जर्स) और डाकू (रॉबर्स) तो केवल कीटों की दुनिया में हो सकते हैं! सोल्जर मक्खियाँ स्ट्रैशियोमाइडे


टाँगों वाली मक्खी


लम्बी टांगों वाली मक्खियाँ

परिवार की सदस्य होती हैं, जबकि रॉबर मक्खियाँ ऐसिलिडे परिवार की होती हैं। मक्खियों के संसार में सोल्जर मक्खियों की तुलना में, रॉबर मक्खियाँ ज्यादा बार कीटों पर हमला करके उन्हें पकड़ती हैं। सोल्जर मक्खियों की सेवाएँ कई तरह की होती हैं जिनमें कुछ परभक्षी काम भी शामिल रहते हैं।

मक्खियों के संसार में रॉबर मक्खियों का परिवार सबसे अधिक परभक्षी समूह होता है और वे केवल कीटों का ही भोजन करती हैं। उनका नाम सचमुच में उनके आचरण को निरूपित करता है। वे आक्रामक शिकारी होती हैं, अपने शिकार पर घात लगाकर हमला करती हैं और मजबूत शरीर रचना के साथ ताकतवर मांसपेशियों वाली होती हैं जो उन्हें कीटों को उड़ान में ही पकड़ लेने में मदद करती हैं! सिर पर प्रमुखता से उभरी उनकी आँखों के बीच में खड़े, कड़े बालों के मूँछ जैसे गुच्छे की वजह से वे दिखने में भी डाकुओं जैसी होती हैं। वास्तव में उनके इन कड़े बालों को बताने के लिए उपयोग किया गया शब्द 'मिसटैक्स' उस ग्रीक शब्द से निकला है जिसका अर्थ 'मूँछ' या 'ऊपर का ओंठ' होता है। वैसे तो ये सार्वभौमिक मक्खियाँ सारे संसार भर में फैली हुई हैं, परन्तु वे ऊष्णकटिबंधीय (ट्रॉपिकल), तथा उप–ऊष्णकटिबंधीय (सबट्रॉपिकल) क्षेत्रों में आम होती हैं तथा सूखे और धूप वाले बंजर या अर्ध–बंजर इलाकों में बहुतायत में होती हैं।

रॉबर मक्खियों को बहुत आसानी से पहचाना जा सकता है। उनके लम्बे छरहरे शरीर में उनके पेट की नोक उनके बन्द पंखों के पीछे दिखती है। उनकी मिसटैक्स को पहचानने में भूल होना मुश्किल है । उनका सिर तथा गला बालों वाला होता है। उनके लम्बे ढलवाँ पेट के साथ उनके चमकीले रंगों (काला, सिलेटी, लाल या पीला) की संरचनाओं के कारण उन्हें अक्सर भूल से ततैया समझ लिया जाता है। उनमें से कुछ अपने मजबूत और बालों वाले शरीरों के साथ मधुमक्खियों की नकल करती हैं, जबकि अन्य जिनका शरीर दुबला–पतला, लोचवाला होता है, डैमसेलफ्लाइज की नकल करती हैं। जैसा कि आप देख सकते हैं, ये मक्खियाँ भेष बदलने की कला में भी पारंगत होती हैं। उनके बैठने का ठिकाना भी किसी परिवेश में इन मक्खियों को पहचानने का एक और तरीका होता है। रॉबर मक्खियों को शिकार का इंतजार करते हुए किसी पौधे के सबसे ऊँचे छोर पर बैठना पसन्द है। पकड़े गए शिकार को चुभोकर उनके भीतर रॉबर अपनी लार छोड़ती हैं जिसमें जहरीले न्यूरोटोक्सिक तथा प्रोटियोलिटिक एन्जाइम होते हैं जो उन्हें मार डालते हैं। वयस्क तथा बच्चे, दोनों तरह की रॉबर मक्खियाँ बहुत प्रकार के कीटों को खाती हैं, इस तरह वे किसी भी इलाके की कीट आबादी को नियंत्रित रखने का महत्त्वपूर्ण पर्यावरणीय कार्य करती हैं।

सोल्जर मक्खियों की आदतों और उनकी खाने की पसन्दीदा चीजों में बहुत विविधता होती है, लेकिन वे मुख्य रूप से अपने पंखों की नसों की अनोखी संरचना से पहचानी जाती हैं। कुछ सोल्जर मक्खियाँ परागण करने वाली होती हैं, कुछ अपराधों की जाँच में मदद करती हैं, कुछ


समागम करती रॉबर मक्खियाँ


हरी सोल्जर मक्खी

अन्य कचरे–कूड़े की कम्पोस्ट खाद बनाने में मददगार होती हैं, जबकि कुछ परभक्षी होती हैं। चमकदार रंगों वाली सोल्जर मक्खियाँ, ततैयों और मधुमक्खियों जैसी दिखती हैं। सोल्जर मक्खियाँ सैप्रोफेगस, मायोफेगस या परभक्षी हो सकती हैं


सोल्जर मक्खी

और वे सामान्यतया पानी वाले परिवेशों के पास पाई जाती हैं क्योंकि उनमें उनके लार्वा विकसित होते हैं। इन मक्खियों पर बहुत ज्यादा शोध नहीं हुआ है, सिवाय हर्मेशिया इल्यूसैंस के, जिसे आमतौर पर काली सोल्जर मक्खी कहा जाता है। आगे हम इस मक्खी पर फिर से गौर करेंगे।


छोटी सोल्जर मक्खी

कम्पोस्ट (कूड़ा खाद) बनाने में मक्खियाँ : ब्लैक सोल्जर फ्लाई, हर्मेशिया इल्यूसैंस का अब अनेक देशों में कचरे को सड़ाकर कम्पोस्ट खाद बनाने में विस्तृत रूप से इस्तेमाल किया जा रहा है। परन्तु भारत में अभी इस प्रक्रिया का व्यापक उपयोग नहीं हो रहा हैं। यह प्रक्रिया केवल पुणे में कुछ शोधकर्ताओं द्वारा अमल में लाई जा रही है।



क्रेन मक्खी

मेरे घर के पिछवाड़े के आँगन में बने कम्पोस्ट के गड्ढे में काली सोल्जर मक्खियाँ हैं। यहाँ उनमें से एक की तस्वीर दी गई है जो अन्य जीवरूपों के अलावा कचरे को भी विघटित करने में मदद कर रही है।



काली सोल्जर मक्खी

वैज्ञानिक शोध में मक्खियाँ : फ्रूट फ्लाइज (फलों की मक्खियाँ) का हमारी प्रयोगशालाओं में उपयोग होते हुए अब कई दशक बीत चुके हैं। जीन (आनुवांशिक इकाई) की क्रियाओं तथा विरासत की प्रणालियों को समझने के हमारे प्रयासों में वे अभी भी एक जानी–मानी और विस्तृत रूप से दर्ज की गई भूमिका निभाती जा रही हैं।

पर कुछ अन्य प्रकार के प्रयोगों में मक्खियों की भूमिका के बारे में कम ही जाना जाता है। उदाहरण के लिए, 2007 में हार्वर्ड यूनिवर्सिटी में कुछ शोधकर्ताओं ने एक रोबोटिक फ्लाई (रोबोट जैसी मशीनी मक्खी) बनाई। 60 मिलीग्राम भार और 3 सेंटीमीटर पंख–विस्तार वाली इस सजीव दिखने वाली मक्खी को एक वास्तविक मक्खी की हलचलों की नकल करने वाले प्रतिरूप की तरह निर्मित किया गया। अत्यन्त पतले कार्बन तन्तु से बनी इस रोबोटिक मक्खी की पंख फड़फड़ाने की दर 110 बार प्रति सेकेण्ड है। उड़ने वाले ऐसे कीटों को निर्मित करने का यह पहला प्रयास है जिनमें सैंसर्स (सूचना ग्रहण करने वाले संवेदक) लगे होने से वे जासूसी का काम कर सकते हैं। ऐसा लगता है कि जल्दी ही 'फ्लाई ऑन द वॉल (दीवार पर बैठी मक्खी – गुप्त जासूस)', सिर्फ एक बढ़िया मुहावरा न होकर, हकीकत बन जाएगी। सेना की प्रयोगशालाओं ने इन मक्खी जासूसों में निश्चित रूप से बहुत दिलचस्पी दिखाई है।

मक्खियाँ तथा मिट्टी की उपजाऊ ताकत : एक ज्यादा बड़े आकार के मच्छर की कल्पना करें – टिपुलिडे परिवार की क्रेन फ्लाई या टिपुलिड फ्लाई वैसी ही दिखती है। लेकिन उनकी समानता शक्ल–सूरत पर ही समाप्त हो जाती है। ये सुशील मक्खियाँ न केवल काटती नहीं हैं, बल्कि उनकी वयस्क सदस्य भोजन ही नहीं करतीं! वयस्क मक्खियाँ लगभग 10 से 15 दिन तक ही जीवित रहती हैं। मादा मक्खियाँ उनके प्यूपा से परिपक्व ओवा (अण्डाणु) लेकर निकलती हैं। वे समागम के लिए अपना साथी खोजती हैं और फिर जल्दी ही नम जमीन पर, या कभी–कभी पानी की सतह पर, अपने अण्डे देती हैं। जब वे भोजन करती हैं तो उनके लार्वा जैविक पदार्थ को विघटित करने में मदद करते हैं और मिट्टी में सूक्ष्म–जीवाणुओं (माइक्रोबियल) की गतिविधि को बढ़ाते हैं। इसलिए वे मिट्टी के पर्यावरण तंत्र में बहुत उपयोगी होते हैं और अपनी गतिविधियों से मिट्टी की उपजाऊ ताकत को बनाए रखते हैं।

उन्हें उनके छरहरे, लम्बे शरीरों और पैरों के कारण बहुत आसानी से पहचाना जाता है। उनकी टाँगें

विशेष रूप से लम्बी होती हैं। हालाँकि वे सारे संसार में पाई जाती हैं, परन्तु उनकी विविधता उष्णकटिबंधों में सबसे ज्यादा होती है। चूँकि वे आसानी से प्रकाश की ओर आकर्षित होती हैं, इसलिए आप अक्सर उन्हें टाँगें फैलाए दीवार को पकड़े हुए देख सकते हैं। यदि आप सुबह घूमने जाते हैं तो उन्हें पत्तियों पर आराम करते हुए देखा जा सकता है। दिलचस्प बात यह है कि क्रेन मक्खियों को अक्सर उतनी ही आसानी से चलते हुए देखा जा सकता है जितना कि उड़ते हुए देखा जाता है।

विज्ञान कक्षाओं में मक्खियाँ

इसमें कोई सन्देह नहीं कि जिस मक्खी से विद्यार्थियों का उनके पाठों में सबसे ज्यादा सामना होता रहेगा, वह घरेलू मक्खी है। इसलिए क्यों न उसके मुँह के अंगों के बारे में पढ़ाने के लिए एक भिन्न तरीके को इस्तेमाल करके उसे रोचक बना दिया जाए? मुँह के अंग भोजन करने के लिए होते हैं और उनके बारे में सीखने का इससे बेहतर तरीका और क्या हो सकता है कि किसी मक्खी को वास्तव में भोजन करते हुए देखा जाए।

यह हम कैसे कर सकते हैं? इसकी शुरुआत करने के लिए हमें एक जीवित मक्खी की जरूरत होगी। लेकिन एक छोटी मक्खी से कुछ करवा पाना काफी तिकड़म वाला काम हो सकता है! लेकिन थोड़े अभ्यास के बाद, आप यह अच्छे से कर सकेंगे। इसका जिक्र करना उचित होगा कि इसमें काफी समय और अभ्यास की जरूरत होती है, पर उसे करना बहुत सार्थक होता है। मैं आपको विश्वास दिलाती हूँ कि ऐसी गतिविधियों के माध्यम से यह जानने के अलावा कि एक मक्खी कैसे अपने भोजन का सुराग पाकर उसे खोजती है और फिर कैसे उसे खाती है और भी बहुत कुछ सीखा जाता है। उदाहरण के लिए, यह जाँच–पड़ताल दर्शाएगी कि मक्खियाँ अपने पैरों से स्वाद चखती हैं!

किसी ज्यादा पक चुके केले या आम को कहीं रख दीजिए। बहुत जल्दी आप देखेंगे कि कई घरेलू मक्खियाँ आकर उन पर बैठ जाती हैं। एक छोटी चाय की छन्नी या नम कपड़े से उनमें से कुछ को पकड़ लीजिए और उन्हें एक सूखे पारदर्शी जार में बन्द करके रख लीजिए।

अगले कुछ चरण मुश्किल भरे हैं। तीन काँच की स्लाइडें लें। उन पर संख्या 1, 2 तथा 3 लिख दें। अब 1 और 2 पर पानी की कुछ बूँदें टपकाएँ और 3 पर शक्कर के घोल की कुछ बूँदें डालें।

इसके बाद का काम बहुत तेजी से करना होगा। अपनी तर्जनी पर कुछ फैवीकोल (ध्यान रखें कि फैवीक्विक नहीं) चुपड़ लें, फिर बन्द मक्खियों वाले जार का ढक्कन खोलें और तर्जनी से सबसे पास वाली मक्खी की छाती (थोरैक्स) को छुएँ। मक्खी आपकी उँगली पर चिपक जाएगी। अपनी उँगलियों से उसे नरमी से इस तरह पकड़ें कि उसके दोनों पंख उसकी पीठ पर बन्द बने रहें। चिन्ता न करें – प्रयोग के अन्त में, आप अपनी तर्जनी को पानी में धोकर मक्खी को छुटकारा दे सकते हैं। मक्खी कुछ समय तक गीली रहेगी (आप उसे हल्के हाथ से एक सूखे कपड़े से छूकर सुखा सकते हैं), लेकिन जल्दी ही वह खुद को सुखा लेगी और उड़ जाएगी।

उँगली से चिपकी हुई मक्खी अपने बन्दी होने के कारण परेशान होगी। जब आप उसे धीरे से नीचे लाकर स्लाइड 1 पर के पानी के पास लाएँगे, तो आप वास्तव में उसकी सूँड़ को पानी पीने के लिए सिर से बाहर आते हुए देखेंगे। जब वह पानी पीना समाप्त कर दे, तब उसे स्लाइड 1 से हटाकर, स्लाइड 2 पर की पानी की बूँदों के पास इस तरह ले जाएँ कि उसके पैर पानी को छुएँ। क्या अब आपको उसकी सूँड़ नीचे आती हुई दिखती है?

अब इसी प्रक्रिया को स्लाइड 3 के साथ दोहराएँ। आप देखेंगे कि जैसे ही मक्खी के पैर शक्कर के घोल को छूते हैं, वैसे ही उसकी सूँड़ उसे पीने के लिए निकल आती है। आप अब अलग–अलग तरह के खाद्य पदार्थों के साथ इसे आजमा सकते हैं और मक्खी की पसन्दीदा खाने की चीजों, या उसे कितना खाने की जरूरत होती है, आदि जैसी

बातों की जाँच–पड़ताल कर सकते हैं। एक कीट को खाते हुए देखना कक्षा में सीखने का सक्रिय वातावरण निर्मित कर देता है, जिसके बाद फिर सूक्ष्मदर्शी में नीचे देखी जाने वाली शारीरिक रचना का अध्ययन किया जा सकता है।

निष्कर्ष

यह हमारे मानवीय परिवेशों में आमतौर पर पाई जाने वाली कुछ ऐसी मक्खियों के परिवारों का केवल छोटा–सा परिचय है, जो पहचानी जा सकने के लिए पर्याप्त बड़ी होती हैं। यह देखते हुए कि संसार में मक्खियों की 1,60,000 से भी अधिक प्रजातियाँ हैं और उनमें नई प्रजातियाँ जुड़ती जाती हैं, मेरा मन कवि ऑगडैन नैश की इन पंक्तियों से सहमत होता है कि

ईश्वर ने अपने विवेक से
मक्खी को बनाया
और ऐसा क्यों किया
यह हमें बताना भूल गया।



References

1. One proboscis, two tasks: Adaptations to blood-feeding and nectar-extracting in long-proboscid horse flies (Tabanidae, Philoliche). Karolyia Florian et al. Arthropod Structure & Development, Vol. 43: Issue 5, Sept 2014: 403-413.

2. The use of insects in forensic investigations: An overview on the scope of forensic entomology. Joseph et al. Journal of Forensic Dental Sciences, Vol. 3(2); Jul-Dec 2011:89-91. URL: www.ncbi.nlm.nih.gov/pmc/articles/PMC3296382/

3. Lords of the flies: the insect detectives. Jon Henley. The Guardian: Forensic Science. Sep 23, 2010. URL: http://www.theguardian.com/science/2010/sep/23/flies-murder-natural-history-museum.

4. Courtship in long-legged flies (Diptera:Dolichopodidae): function and evolution of signals. Martin Zimmer, Olaf Diestelhorst, and Klaus Lunau. Behavioral Ecology, Vol. 14, No. 4: 526–530. URL: http://beheco.oxfordjournals.org/content/14/4/526.full.pdf

5. Robber Flies (Asilidae). Fritz Geller-Grimm, Torsten Dikow & Robert J. Lavigne. URL: http://www.geller-grimm.de/asilidae.htm.

6. Occurrence of Black Soldier Fly *Hermetia illucens* (Diptera: Stratiomyidae) in Biocompost. Gujarathi Gayatri R. and Pejaver Madhuri K. Research Journal of Recent Sciences, Vol. 2(4), April (2013): 65-66. URL: http://www.isca.in/rjrs/archive/v2/i4/9.ISCA-RJRS-2012-469.pdf.

7. Black soldier fly farming. URL: http://www.blacksoldierflyfarming.com/.



गीता अय्यर *शिक्षा तथा पर्यावरण के जुड़े हुए क्षेत्रों में काम करने वाली एक लेखक तथा स्वतंत्र सलाहकार हैं। उन्होने शिक्षा, पर्यावरण तथा प्राकृतिक इतिहास के विषयों पर विस्तृत रूप से लिखा है। डॉ. अय्यर से brownfishowl@yahoo.co.uk पर सम्पर्क किया जा सकता है।* ***अनुवाद :*** *भरत त्रिपाठी*

कोस्टा रीका की सफलता

श्रुति राव

पर्यावरण के अनुकूल नवीकरणीय संसाधनों से ऊर्जा का उत्पादन करना हमारे ग्रह के लम्बे समय तक बने रहने के लिए अब अनिवार्य आवश्यकता बन गया है। मध्य अमेरिका का एक छोटा–सा देश कोस्टा रीका किस तरह नवीकरणीय संसाधनों से 100% ऊर्जा उत्पादन करने की उपलब्धि हासिल करने वाला पहला देश बन गया? विभिन्न प्रकार के ऊर्जा स्रोतों के लाभ और नुकसान क्या हैं? यह लेख संसार के वर्तमान ऊर्जा परिदृश्य के सन्दर्भ में कोस्टा रीका की उपलब्धि की पड़ताल करता है। साथ ही उन कारकों की भी छानबीन करता है जो नवीकरणीय ऊर्जा संसाधनों के विकास में सहायता करते हैं या बाधा डालते हैं।

पृथ्वी की हालत के बारे में जनसंचार माध्यम निराशा और अवसादजनक खबरों और रिपोर्टों से भरे रहते हैं। खबरों के शीर्षक हमें भूमण्डलीय तापमान में वृद्धि (ग्लोबल वार्मिंग) की चेतावनी देते हैं। समाचारों का विश्लेषण करने वाले हमें जीवाश्म ईंधनों के वैश्विक भण्डार के खाली होते जाने के बारे में चेताते हैं। इंटरनेट की वैबसाइटें संसार के सबसे अधिक प्रदूषित 10 देशों की सूचियाँ प्रकाशित करती हैं। पर्यावरण की पत्रिकाओं में छपने वाले लेख बताते हैं कि कैसे धरती को तमाम तरह के जहरीले पदार्थों (टॉक्सिन्स) से पाटा जा रहा है। दुर्योग से ये सारी खबरें बिलकुल सच हैं।

जिन कारणों ने पृथ्वी को इस दशा में पहुँचाने में योगदान दिया है, उनमें मनुष्यों की बढ़ती हुई ऊर्जा जरूरतें एक प्रमुख कारण है। वर्तमान में हम जिस ऊर्जा पर निर्भर करते हैं, उसका उत्पादन मुख्य रूप से जीवाश्म ईंधनों को जलाकर किया जाता है। जीवाश्म ईंधन नवीकरणीय नहीं होते अर्थात उन्हें फिर से पैदा नहीं किया जा सकता, इसलिए वे लगातार समाप्त हो रहे हैं। इसके अलावा उनको जलाने से प्रदूषण होता है। हमारी ऊर्जा आवश्यकताओं का समाधान नवीकरणीय ऊर्जा का दोहन करना है – ऐसी ऊर्जा जिसकी निरन्तर और प्राकृतिक रूप से पुनः आपूर्ति होती रहती है और जो उस तरह प्रदूषण नहीं फैलाती जैसा कि जीवाश्म ईंधन करते हैं।

इस जानकारी के बाद कि सुरक्षित भविष्य के लिए इस प्रकार की स्वच्छ और हरित (पर्यावरण के अनुकूल) ऊर्जा नितान्त आवश्यक है, अधिकाधिक देश अब ऊर्जा के पारम्परिक स्रोतों

पर अपनी निर्भरता को कम करने का प्रयास कर रहे हैं, साथ ही नवीकरणीय ऊर्जा के स्रोतों को विकसित करने में निवेश कर रहे हैं।

लेकिन क्या नवीकरणीय ऊर्जा की प्रौद्योगिकी व्यापक रूप से प्रचलित हो सकती है? क्या यह व्यावहारिक है? क्या हम ऐसी आशा करने का दुस्साहस कर सकते हैं कि भविष्य में किसी दिन, पृथ्वी को ज्यादातर शक्ति नवीकरणीय ऊर्जा के स्रोतों से मिलेगी?

कोस्टा रीका हमें राह दिखाता है

इन सवालों का आंशिक उत्तर 2015 के मार्च में मध्य अमेरिका के देश कोस्टा रीका से मिली एक खुशखबरी के रूप में सामने आया। कोस्टा रीका संसार का पहला ऐसा देश बन गया जो 100 प्रतिशत नवीकरणीय ऊर्जा से चलता है, अर्थात कोस्टा रीका ने इस वर्ष लगातार 75 दिनों तक अपने पूरे देश की ऊर्जा आवश्यकताओं की पूर्ति केवल नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों का इस्तेमाल करते हुए की है।

लेकिन यह खबर ठीक–ठीक किस कारण से इतनी उल्लेखनीय है? इसे समझने के लिए, आइए हम संसार की मौजूदा ऊर्जा स्थिति पर एक संक्षिप्त नजर डालें।

संसार की ऊर्जा आवश्यकताएँ

संसार में उत्पादित कुल ऊर्जा का लगभग 70 प्रतिशत हिस्सा जीवाश्म ईंधनों (कोयला, तेल तथा प्राकृतिक गैस) से आता है। परमाणुओं के संलयन (फ्यूजन) या विखण्डन से पैदा होने वाली आणविक ऊर्जा का संसार की कुल ऊर्जा में योगदान 11 प्रतिशत है। हालाँकि ऊर्जा उत्पादित करने का यह एक साफ–सुथरा और सक्षम तरीका प्रतीत होता है, पर इससे निकलने वाले खतरनाक आणविक कचरे को ठिकाने लगाना एक बड़ी समस्या है। इसके अलावा यदि किसी आणविक ऊर्जा संयंत्र में कुछ गड़बड़ी होती है तो उसके भयावह परिणाम हो सकते हैं।

दूसरी ओर, नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत ज्यादा सुरक्षित, अपेक्षाकृत कम प्रदूषण करने वाले और समाप्त न होने वाले होते हैं। उदाहरण के लिए, जलविद्युत ऊर्जा में विद्युत का उत्पादन गिरते हुए पानी की गुरुत्वाकर्षण ऊर्जा या बहते हुए पानी की गतिज ऊर्जा का इस्तेमाल करके किया जाता है। पानी की शक्ति एक टर्बाइन को चलाती है, जो फिर एक जैनरेटर को घुमाता है जिससे बिजली पैदा होती है। हालाँकि यह भी स्वच्छ ऊर्जा का एक स्वरूप है, पर इसके साथ इसकी अपनी समस्याएँ भी साथ आती हैं। इसके लिए बड़े बाँध बनाए जाते हैं। और बाँध के लिए भूमि के विशाल हिस्से की जरूरत होती है जिसके फलस्वरूप बहुत से समुदायों का विस्थापन होता है। आज पृथ्वी की ऊर्जा आवश्यकताओं में से 15 प्रतिशत की पूर्ति जलविद्युत द्वारा की जाती है।

संसार में पैदा की जा रही कुल ऊर्जा का 5 प्रतिशत से भी कम हिस्सा सौर, पवन (विंड), जैव पदार्थ (बायोमास) तथा भूगर्भीय ताप ऊर्जा (जियोथर्मल एनर्जी) से आता है। इस ग्रह पर मानव जीवन को बनाए रखने के लिए हमारे प्रयासों में, यही ऊर्जा के वे स्रोत हैं जिनका हमें व्यापक रूप से इस्तेमाल करने की जरूरत है।

इनमें से सौर ऊर्जा पृथ्वी पर सबसे अधिक प्रचुरता से उपलब्ध है। वास्तव में, पृथ्वी पर एक घण्टे में सूर्य से जितनी ऊर्जा आती है वह पूरे ग्रह की



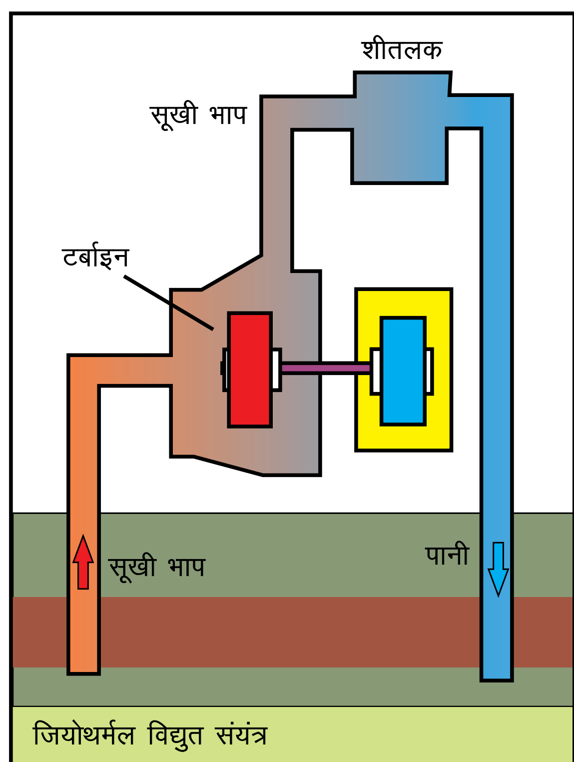
हांगकांग में सौर विद्युत संयंत्र

Source: https://en.wikipedia.org/wiki/Solar_power

WiNG CC BY-SA 3.0. Creative Commons Attribution-Share Alike 3.0 Unported

ऊर्जा आवश्यकताओं को एक साल से भी अधिक समय तक पूरा कर सकती है! लेकिन सौर ऊर्जा को विद्युत में बदलने में फोटोवोल्टैइक सेल्स की पट्टियों का उपयोग करना पड़ता है जो अभी भी काफी खर्चीले हैं।

पवन ऊर्जा एक अन्य भरपूर उपलब्ध संसाधन है, जिसमें बहती हुई हवा की ताकत से चलने वाली एक पवन चक्की बिजली पैदा करती है। बायोमास ऊर्जा का भी अब व्यापक रूप से उपयोग किया जा रहा है। इसे मूलतः पौधों से निकली जैव सामग्री से प्राप्त किया जाता है। यह मनुष्य द्वारा उपयोग की जाने वाली ऊर्जा का सबसे प्रारम्भिक स्वरूप है। जियोथर्मल (भूगर्भीय ताप) संयंत्र भूमिगत भाप का उपयोग टर्बाइनों को चलाने के लिए करते हैं और विद्युत का उत्पादन करते हैं। इनके अलावा ऊर्जा पैदा करने के कई और तरीके भी हैं, उदाहरण के लिए समुद्र के ज्वार–भाटों तथा लहरों का उपयोग करने वाले विद्युत संयंत्र।



इससे आपको समग्र तस्वीर स्पष्ट हो गई होगी – संसार में उत्पादित कुल ऊर्जा के समूह में नवीकरणीय ऊर्जा संसाधनों का हिस्सा बहुत छोटा है।

भारत में भी परिदृश्य बहुत भिन्न नहीं है। आज भारत की ऊर्जा का 60 प्रतिशत हिस्सा जीवाश्म ईंधनों के द्वारा, 16 प्रतिशत जलविद्युत के द्वारा और केवल लगभग 13 प्रतिशत ऊर्जा के अन्य नवीकरणीय संसाधनों से पैदा किया जाता है।

कोस्टा रीका की कहानी

अब जब हम ये आँकड़े देख चुके हैं, चलिए वापिस कोस्टा रीका की ओर आएँ। कोस्टा रीका की ऊर्जा आवश्यकताओं में से करीब 80 प्रतिशत की पूर्ति जलविद्युत से और करीब 16 प्रतिशत की पूर्ति पवन, भूगर्भीय ताप तथा अन्य स्वच्छ ऊर्जा रूपों से होती है। केवल 4 प्रतिशत ऊर्जा की जरूरतें जीवाश्म ईंधनों के माध्यम से पूरी की जाती हैं। संसार की किसी भी अन्य जगह के परिप्रेक्ष्य में यह उल्टी स्थिति वाकई में बहुत गौर करने लायक है। उन 75 दिनों में जब कोस्टा रीका को पूर्ण रूप से नवीकरणीय स्रोतों से ऊर्जा प्राप्त हुई, तब वहाँ जीवाश्म ईंधनों से मिलने वाली 4 प्रतिशत ऊर्जा को इस्तेमाल करने की कोई जरूरत नहीं पड़ी, क्योंकि उसकी पूर्ति जलविद्युत ने कर दी, और इस तरह उसने 100 प्रतिशत नवीकरणीय ऊर्जा की उपलब्धि हासिल की।

लेकिन क्या ऐसी उपलब्धि को हासिल करना अन्य देशों के लिए आसान है?

कोस्टा रीका के सन्दर्भ में हमें कुछ बातों को ध्यान में रखना जरूरी है। पहली बात कि वहाँ 100 प्रतिशत नवीकरणीय ऊर्जा की उपलब्धि जब हासिल हुई, तब मुख्य कारण यह था कि उस दौरान कोस्टा रीका के चार बड़े जलविद्युत संयंत्रों के जलग्रहण क्षेत्र में भरपूर बारिश हुई थी।

इसके अलावा कोस्टा रीका छोटा–सा देश है; आकार में वह पंजाब के बराबर है। उसकी आबादी त्रिपुरा की आबादी से भी कम है। यह देश मुख्य रूप से पर्यटन तथा कृषि पर निर्भर करता है और वहाँ ऊर्जा की सघन खपत करने वाले उद्योग नहीं हैं। कोस्टा रीका अपनी भौगोलिक स्थिति की दृष्टि से भी भाग्यशाली है – वह पृथ्वी के ऐसे इलाके में स्थित है जहाँ नवीकरणीय ऊर्जा के दो स्रोत –

जलशक्ति (हाइड्रोपॉवर) तथा भूगर्भीय तापशक्ति – भरपूर मात्रा में मौजूद हैं।

पर इस सबसे कोस्टा रीका की उपलब्धि का महत्त्व कम नहीं हो जाता। वहाँ के लोगों का इस मील के पत्थर तक पहुँचने का दृढ़ संकल्प सराहना के योग्य है। लम्बे समय से कोस्टा रीका उन देशों में अग्रणी रहा है जिन्होंने सक्षम रूप से नवीकरणीय ऊर्जा का उपयोग किया है। इसका श्रेय मुख्य रूप से कोस्टा रीकन इलेक्ट्रिसिटी इंस्टीट्यूट (आई.सी.ई.) को जाता है, जो अपनी कार्यकुशलता, दूरदृष्टि और पर्यावरणीय दीर्घकालिकता (एनवायरनमेंटल सस्टेनेबिलिटी) पर जोर के लिए विख्यात है। कोस्टा रीका का एक महत्त्वाकांक्षी लक्ष्य 2021 तक कार्बन शून्य (न्यूट्रल) देश बनने का भी है, अर्थात उसका इरादा तब तक कार्बनिक गैसों के अपने उत्सर्जन को कम करके शून्य तक ले आना है। नवीकरणीय ऊर्जा की उपलब्धि हासिल करके वह उस लक्ष्य को पूरा करने की दिशा में काफी आगे बढ़ गया है।

कोस्टा रीका की भी अपनी समस्याएँ हैं

कोस्टा रीका का प्रभावशाली रिकार्ड बनाए रखने में कुछ समस्याएँ हैं। कोस्टा रीका के ऊर्जा मिश्रण में जलविद्युत का हिस्सा बहुत बड़ा है। परन्तु अकेले उस पर इतना आश्रित रहना व्यावहारिक नहीं है, क्योंकि जलविद्युत का उत्पादन मौसम पर निर्भर करता है। गर्मियों में यदि पानी की उपलब्धता में कमी आती है, तो उस देश को फिर से जीवाश्म ईंधनों की ओर मुड़ना पड़ेगा। दरअसल, 2014 में वहाँ पड़े सूखे के दौरान ठीक यही हुआ था। सूखे ने पीने के पानी का अभाव पैदा कर दिया था तथा फसलों और पशुधन को नुकसान पहुँचाया था।

कोस्टा रीका के लिए सबसे उत्साहवर्धक विकल्प नवीकरणीय ऊर्जा का एक अन्य स्रोत, ज्वालामुखीय भूगर्भीय ताप ऊर्जा (वोल्केनिक जियोथर्मल एनर्जी) है जो वहाँ भरपूर मात्रा में है, निरन्तर पैदा होती रहती है और मौसम की स्थितियों पर निर्भर नहीं करती। किन्तु, भूगर्भीय ताप ऊर्जा संयंत्रों के सम्भावित स्थल कोस्टा रीका के राष्ट्रीय उद्यानों (नेशनल पार्क्स, जो संरक्षित क्षेत्र होते हैं) के भीतर हैं। वहाँ इन संयंत्रों के निर्माण के लिए सड़कें बनाना पड़ेंगी और जमीन के नीचे भूगर्भीय ताप संसाधनों के स्रोतों तक पहुँचने के लिए ड्रिलिंग करना पड़ेगी। इसलिए उसे भूगर्भीय ऊर्जा के उपयोग तथा राष्ट्रीय उद्यानों के संरक्षण के बीच चुनाव करना पड़ेगा। इसके अलावा, संरक्षणप्रेमियों ने तर्क दिया है कि अभी तक देश ने पवन ऊर्जा की सम्भावनाओं की पर्याप्त रूप से ऐसी जाँच–पड़ताल नहीं की है, जो राष्ट्रीय उद्यानों के भीतर भूगर्भीय ताप ऊर्जा संयंत्रों के निर्माण को उचित ठहरा सके।



निष्कर्ष

इन समस्याओं के बावजूद, इससे इनकार नहीं किया जा सकता कि कोस्टा रीका की उपलब्धि उचित दिशा में आगे बढ़ने का एक बड़ा कदम है। हम आशा करते हैं कि यह दूसरे देशों को प्रेरणा देने का काम करेगा और उन्हें नवीकरणीय ऊर्जा के उनके प्रयासों में तेजी लाने के लिए उत्साहित करेगा, ताकि हम एक अधिक हरित ग्रह बनाने के अन्तिम लक्ष्य की ओर बढ़ सकें।



__श्रुति राव__ फ्रेमोंट, अमेरिका में रहने वाली एक लेखिका हैं। उन्होंने एनर्जी इंजीनियरिंग में एम.टैक की उपाधि हासिल की है। उनकी कहानियों ने कई पुरस्कार जीते हैं। विज्ञान, यात्रा तथा जीवनशैली पर उनके लेख नियमित रूप से प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहते हैं। __अनुवाद__ : सत्येन्द्र त्रिपाठी

स्टैलेरियम के माध्यम से समय को समझना

आनन्द नारायणन

क्या सूर्य प्रतिदिन एक ही निश्चित स्थान से उदित होता है और एक ही निश्चित स्थान पर अस्त होता है? उसके उदित होने और अस्त होने के स्थानों का हमारे दिनों और रातों की लम्बाई से क्या सम्बन्ध है? यदि हम रात को आसमान में दिखाई देने वाले तारों में से किसी एक को चुन लें और एक साल तक प्रतिदिन उसका निरीक्षण करें, तो क्या वह ऐसा दिखेगा जैसे उसने कभी अपना स्थान न बदला हो? हम अपनी कक्षा की दीवारों के भीतर आकाश तथा समय के ऐसे रहस्यों से छोटे विद्यार्थियों का परिचय कैसे करवा सकते हैं?
इस सन्दर्भ में, यह लेख स्टैलेरियम नामक एक फ्री ओपन सोर्स सॉफ्टवेयर (कम्प्यूटर प्रोग्राम) की जाँच–पड़ताल करता है, जो शिक्षकों तथा विद्यार्थियों में समान रूप से रुचि जगाने वाला एक शैक्षणिक सहायता उपाय है। यह कुछ खगोलीय घटनाओं की कल्पना करने में और उनसे जुड़ी अवधारणाओं को समझने में एक कम अमूर्त, किन्तु ज्यादा दिलचस्प तरीके से उनकी मदद कर सकता है।

समय की हमारी अवधारणा का बड़ा हिस्सा आकाशीय पिण्डों का निरीक्षण करने से आया है। जिस व्यवस्थित तरीके से सूर्य, चन्द्रमा, ग्रह तथा तारे आकाश में यात्रा करते हैं, वही हमारे दिनों, रातों, महीनों और सालों को परिभाषित करने का आधार बनता है। दिन का समय आकाश में सूर्य की स्थिति से पता चलता है। महीना पृथ्वी के चारों ओर चन्द्रमा की परिक्रमा पर आधारित होता है। साल तथा ऋतुएँ सूर्य की उस आभासी वार्षिक गति से जुड़ी हुई हैं जैसी वह प्रकट रूप से पृथ्वी से दिखाई देती है।

डिजिटल घड़ियों के इस युग में समय जानने की दृष्टि से आकाश की उपयोगिता अब पुरातन हो चुकी है। लेकिन, अभी भी खगोलीय समय निर्धारण की मूलभूत अवधारणाओं को समझने में बहुत सार्थकता है। देखने में सरल से लगने वाले ऐसे सवालों के उत्तर हम कितनी अच्छी तरह से जानते हैं, जैसे कि सूर्य ठीक–ठीक कहाँ उगता है, क्या दिन की अवधि उतनी ही होती है जितनी रात की तथा क्या भौगोलिक स्थिति में परिवर्तन के साथ आकाश में सूर्य की स्थिति भी बदलती है? वास्तविक संसार के अवलोकन द्वारा इन प्रश्नों के उत्तर खोजने में बहुत वक्त लगता है और ऐसा करना हर समय व्यावहारिक भी नहीं होता। वास्तविक दुनिया के अवलोकनों के बजाय प्लैनेटेरियम सॉफ्टवेयर इसके बहुत बढ़िया विकल्प हो सकते हैं।

ऐसे कई सॉफ्टवेयर मौजूद हैं जो हमें आकाश में पिण्डों की प्रकट गति की कल्पना करने में मदद करते हैं। स्टैलेरियम भी ऐसा ही एक ओपन–सोर्स सॉफ्टवेयर है जो बिना किसी लागत के प्राप्त किया जा सकता है। स्टैलेरियम को www.stellarium.org वैबसाइट से डाउनलोड किया जा सकता है।

स्टैलेरियम किसी भी दी गई तारीख और समय पर हमारे द्वारा पृथ्वी पर चुने गए किसी भी स्थान से दिखाई देने वाले आकाश के पिण्डों (बॉडीज) को दर्शाता है। इस सॉफ्टवेयर की कई उपयोगी विशेषताएँ हैं। इसमें हम समय में आगे तथा पीछे जा सकते हैं, किसी वस्तु को उससे दूर जाकर (जूम–अवे) या उसके पास आकर (जूम–इनटू) देख सकते हैं, पृथ्वी के वायुमण्डल को हटा सकते हैं, अवलोकन करने के अपने स्थान को बदल सकते हैं, नक्षत्रों (कॉन्स्टेलेशन्स) को पहचानने के लिए उनके लेबलों और सीमाओं को स्विच ऑन करके पटल पर ला सकते हैं। गहरे आकाश में स्थित गैलैक्सियों, तारा–समूहों और अनेक अन्य चीजों को देख सकते हैं। साफ्टवेयर पर इन विशेषताओं को ढूँढ़ना आसान है और वे इस सॉफ्टवेयर के साथ आने वाली उपयोगकर्ता मार्गदर्शिका (यूजर्स गाइड) में भी अच्छी तरह से समझाए गए हैं।

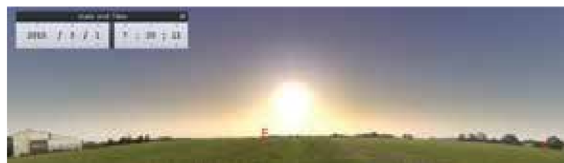
यह लेख कुछ ऐसे अभ्यासों का वर्णन करता है जो आकाश की संरचनाओं और विशेष अवधियों के बारे में सीखने के प्रति विद्यार्थियों की रुचि को जगाकर उन्हें उसमें संलग्न रख सकते हैं।

सूर्य के उदित होने तथा अस्त होने के स्थान

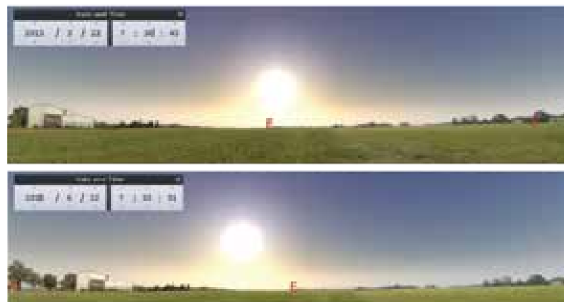
हम सभी जानते हैं कि पृथ्वी से देखने पर सूर्य पूर्व में उदित होता हुआ और पश्चिम में अस्त होता हुआ प्रतीत होता है। लेकिन क्या यह हमेशा सत्य होता है? क्या सूर्य हमेशा ठीक पूर्व दिशा में ही उदित होता है और ठीक पश्चिम दिशा में ही अस्त होता है?

स्टैलेरियम के माध्यम से ऐसे सवालों की जाँच–पड़ताल करना आसान होता है। इसका उत्तर खोजने में मदद करने वाली प्रक्रिया नीचे चरणबद्ध ढंग से दी जा रही है :

1. स्टैलेरियम में देखने का अपना कोण इस तरह बदलें ताकि आपके सामने पूर्व दिशा हो।
2. मार्च की 1 तारीख और समय 7:30 बजे सुबह का डालें (वर्ष कोई भी हो, उससे फर्क नहीं पड़ता)। आप देखेंगे कि सूर्य उग आया है, पर एकदम पूर्व में नहीं, बल्कि पूर्व से थोड़ा–सा दक्षिण की तरफ (जैसा कि नीचे चित्र में दिखाया गया है)।



3. समय को स्थिर रखते हुए (7:30 बजे सुबह), तारीख को मार्च 1 से एक–एक दिन करके बढ़ाते जाएँ। गौर करें कि तारीख के साथ सूर्य के उदित होने का स्थान भी बदलता है।
4. आप देखेंगे कि सूर्योदय का स्थान निम्नलिखित तरीके से इधर–उधर होता है :
   - मार्च 21 (± 1 दिन), सूर्य ठीक पूर्व दिशा से उगता है।
   - मार्च से जून तक, उगता हुआ सूर्य पूर्व दिशा के उत्तर की ओर खिसकता रहता है।
   - जून 21 (± 1 दिन), सूर्य पूर्व दिशा से उत्तर की ओर सबसे अधिक खिसक चुका होता है।
   - जून से सितम्बर तक उगता हुआ सूर्य अब दक्षिण की ओर खिसकने लगता है।
   - सितम्बर 22 (± 1 दिन), अब सूर्य फिर से ठीक पूर्व में उगता है।





- सितम्बर से दिसम्बर तक, सूर्य पूर्व दिशा से दक्षिण की ओर खिसकता है।
- दिसम्बर 22 (± 1 दिन), सूर्य पूर्व दिशा से दक्षिण की ओर सबसे अधिक खिसक चुका होता है। और फिर यह चक्र दोहराया जाता है।

उपरोक्त अभ्यास से सीखे जाने वाले कुछ तथ्य :

1. सूर्य हमेशा एकदम पूर्व दिशा से नहीं उगता।
2. न ही, वह एकदम पश्चिम दिशा में अस्त होता है।
3. सूर्य ठीक पूर्व दिशा से वर्ष में केवल दो ही बार उदित होता है। ये दो दिन वर्नल ईक्वीनॉक्स या वसंत समपथ (मार्च 21 ± 1 दिन) तथा आटम्नल ईक्वीनॉक्स या शरद समपथ (सितम्बर 22± 1दिन)(± 1 दिन), कहलाते हैं। 'ईक्वीनॉक्स' का शाब्दिक अर्थ 'बराबर दिन और रात' का होना होता है।
4. सदियों पहले जो केलेण्डर व्यवस्था भारत में प्रचलित हो गई, उसमें वर्ष को दो भागों में बाँटा गया है। दिसम्बर से लेकर जून तक की 6 माह की अवधि – जब उगते हुए (और अस्त होते हुए) सूर्य की स्थिति दक्षिण से उत्तर की ओर खिसकती है – को उत्तरायण (इसका अर्थ उत्तर की ओर यात्रा होता है) कहते हैं। जून से लेकर दिसम्बर तक दूसरे 6 माह की अवधि को – जब उगते हुए (और अस्त होते हुए) सूर्य की स्थिति उत्तर से दक्षिण की ओर खिसकती है – को दक्षिणायण (इसका अर्थ दक्षिण की ओर यात्रा होता है) कहते हैं।
5. क्या ये अवलोकन तब भी सही होगें जब हम दक्षिणी गोलार्ध में कहीं स्थित हों? इसकी जाँच 'लोकेशन विंडो' में जाकर दक्षिणी गोलार्ध में किसी स्थान (उदाहरण के लिए, कुआलालाम्पुर, मलेशिया) को चुनकर की जा सकती है।

दिन तथा रात की अवधि

सूर्य के उदित होने और अस्त होने के समय दिन तथा रात की अवधियों को निर्धारित करते हैं। दिलचस्प बात यह है कि दिन और रात हमेशा बराबर अन्तराल के नहीं होते। वर्ष के माह विशेष पर निर्भर करते हुए, दिन का दौर रात के दौर से लम्बा या छोटा हो सकता है। उनमें पाया जाने वाला अन्तर हमारी भौगोलिक स्थिति पर भी निर्भर करता है। स्टैलेरियम के माध्यम से इन अवधारणाओं की खोजबीन की जा सकती है। स्पष्टता की दृष्टि से, इस अभ्यास को तीन अलग–अलग भौगोलिक स्थितियों के लिए करना बेहतर होता है।

भूमध्य रेखा के निकट स्थित स्थान से

1. पृथ्वी की भूमध्य रेखा के निकट स्थित कोई स्थान चुनें (उदाहरण के लिए, चेन्नई)।
2. जनवरी के महीने से आरम्भ करके एक–एक महीने के चरणों में आगे बढ़ें।
3. प्रत्येक माह के लिए, उस समय को दर्ज करते जाएँ जब सूर्य पूर्वी क्षितिज से उदित होता है। दर्ज किए जाने वाले अपने आँकड़ों की एक सरल तालिका बनाने का प्रयास करें। क्या एक पूरे साल की अवधि में सूर्य के उदित होने के समय में कोई विशेष प्रवृत्ति दिखाई देती है?
4. जब आप यह प्रक्रिया पूरी कर लें तो देखने के अपने कोण को पश्चिम की ओर कर लें।
5. जनवरी से दिसम्बर तक, उस समय को दर्ज करते जाएँ जब सूर्य पश्चिमी क्षितिज से नीचे जाते हुए अस्त होता है। फिर से अपने आँकड़ों को तालिका में दर्ज करें। क्या सूर्य के अस्त होने के समय में कोई रुझान दिखाई देता है?

इन दोनों तालिकाओं से पूरे साल के लिए, दिन तथा रात की अवधियों की गणना करें। क्या वर्ष के दो आधे हिस्सों, उत्तरायण तथा दक्षिणायण,

के दौरान तुलनात्मक दृष्टि से दिन तथा रात की अवधियों में कोई खास प्रवृत्ति दिखाई देती है?

भूमध्य रेखा से दूर किसी स्थान से

1. अवलोकन के लिए भूमध्य रेखा से दूर स्थित किसी स्थान को चुनें (उदाहरण के लिए, श्रीनगर)।
2. ऊपर की प्रक्रिया को दोहराएँ।

समय के आँकड़ों की तालिका से दिन तथा रात की अवधियों की गणना करें। क्या वर्ष के दो आधे हिस्सों, उत्तरायण तथा दक्षिणायण, के दौरान तुलनात्मक दृष्टि से दिन तथा रात की अवधियों में कोई खास प्रवृत्ति दिखाई देती है? भूमध्य रेखा के पास की स्थिति के लिए प्राप्त जानकारी की तुलना में, यह ताजा जानकारी कैसी दिखाई देती है?

उत्तरी ध्रुव से

1. अपने अवलोकन स्थल के रूप में उत्तरी ध्रुव को चुनें (भूमध्य रेखा से उत्तर की ओर 90 डिग्री के अक्षांश पर)।
2. उपरोक्त प्रक्रिया को दोहराएँ।

उत्तरी ध्रुव पर दिन तथा रात के चक्र में क्या खास बात दिखाई देती है? क्या इससे यह समझ में आता है कि उत्तरी ध्रुव क्यों रहने योग्य जगह नहीं है?

दक्षिणी गोलार्ध से

1. दक्षिणी गोलार्ध में, भूमध्य रेखा के पास किन्तु उससे नीचे स्थित कोई जगह चुनें (उदाहरण के लिए श्रीलंका में कोई स्थान) और ऊपर के चरणों को दोहराएँ।
2. दक्षिणी गोलार्ध में, भूमध्य रेखा से दूर स्थित कोई जगह चुनें (उदाहरण के लिए, कुआलालामपुर, मलेशिया) और ऊपर के चरणों को दोहराएँ।
3. दक्षिणी ध्रुव को ही अवलोकन स्थल चुनें और उपरोक्त चरणों को दोहराएँ।

क्या दक्षिणी गोलार्ध में रहने वाले लोगों के लिए माह बदलने के साथ दिन तथा रात की अवधियों में कोई अन्तर पड़ता है? क्या केलेण्डर वर्ष के उत्तरायण तथा दक्षिणायण भागों में वैसे ही अवलोकन प्राप्त होते हैं जैसे कि उत्तरी गोलार्ध से मिलते हैं?

तारों का उदित और अस्त होना

सूर्य की ही तरह, तारे भी पूर्व में उदित होते और पश्चिम में अस्त होते दिखाई देते हैं। यह इस कारण से होता है क्योंकि पृथ्वी का अपनी धुरी पर घूमना पश्चिम से पूर्व की ओर होता है। स्टैलेरियम में नीचे दी गई नियंत्रण पट्टी (कंट्रोल पैनल) से समय की गति बढ़ाकर, हम तेजी से आगे बढ़ते हुए (फास्ट फॉरवर्ड), समय के अनुसार, आकाश में तारों का आभासी स्थान परिवर्तन देख सकते हैं।

दिन तथा रात के चक्र की अवधि इस पर निर्भर करती है कि आकाशीय पिण्डों को अपनी प्रारम्भिक स्थिति पर वापिस जाने में कितना समय लगता है। दिलचस्प बात यह है कि, दिन तथा रात की यह अवधि बदल जाती है यदि हम अपने पास के किसी पिण्ड (जैसे कि सूर्य) के बजाय ज्यादा दूर स्थित तारों को चुनते हैं।

इसकी जाँच–पड़ताल नीचे दिए अभ्यास के द्वारा की जा सकती है। इसके लिए इस सॉफ्टवेयर को सावधानीपूर्वक इस्तेमाल करने की जरूरत होगी।

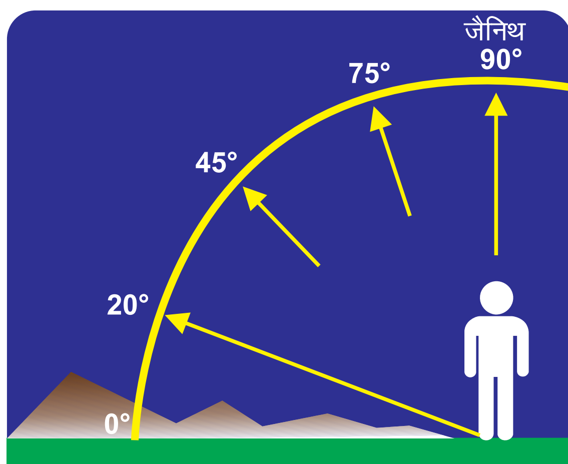
इस अभ्यास के लिए, विद्यार्थियों को दो अवधारणाओं का ज्ञान होना पड़ेगा :

(क) 'आल्टीट्यूड (ऊँचाई)' का क्या आशय होता है?

(ख) कोणों को किस मिनटों तथा सेकेण्डों में बाँटा जाता है?

आल्टीट्यूड इसको मापता है कि हमारे क्षितिज के सापेक्ष आकाश में कोई पिण्ड कितने ऊपर या कितने नीचे है। यदि कोई तारा पूर्वी क्षितिज के

ऊपर अभी–अभी उदित हो रहा है, तो उसका आल्टीट्यूड 0 डिग्री है। इसी प्रकार, यदि कोई तारा अभी पश्चिम में अस्त हो रहा है तो उसका आल्टीट्यूड भी 0 डिग्री है। यदि कोई तारा एकदम हमारे सिर के ऊपर है (उस स्थिति को जैनिथ प्वाइंट – शीर्ष बिन्दु – कहते हैं) तो वह 90 डिग्री के आल्टीट्यूड पर है। जिस तारे ने जैनिथ बिन्दु को पार कर लिया हो, उसका आल्टीट्यूड 90 डिग्री से कम होता है। नीचे दिया गया चित्र आल्टीट्यूड कोण की परिभाषा को दर्शाता है।



जिस तरह एक घण्टे को 60 मिनट में और फिर मिनट को और छोटे हिस्से 60 सेकेण्डों में विभाजित किया जाता है, उसी तरह एक डिग्री से छोटे कोणों को भी मिनटों और सेकेण्डों में बाँटा जाता है। कोणीय 1 मिनट एक डिग्री का 1/60 वाँ हिस्सा होता है और 1 सेकेण्ड एक मिनट का 1/60 वाँ हिस्सा होता है। कोणों को दशमलव प्रणाली में लिखने के बजाय, आम तरीका उन्हें मिनटों तथा सेकेण्डों में व्यक्त करने का है। इस तरह, 45.5 डिग्री के कोण को 45 डिग्री 30 मिनट के रूप में भी लिखा जाता है तथा 60.73 डिग्री के कोण को 60 डिग्री 43 मिनट और 48 सेकेण्ड की तरह भी लिखा जाता है।

इन दो अवधारणाओं को समझ लेने के बाद हम आगे बढ़ते हुए निम्नलिखित अभ्यास को कर सकते हैं जो हमें एक दिन की परिभाषा को समझने में मदद करेगा।

सूर्य की दैनिक अवधि

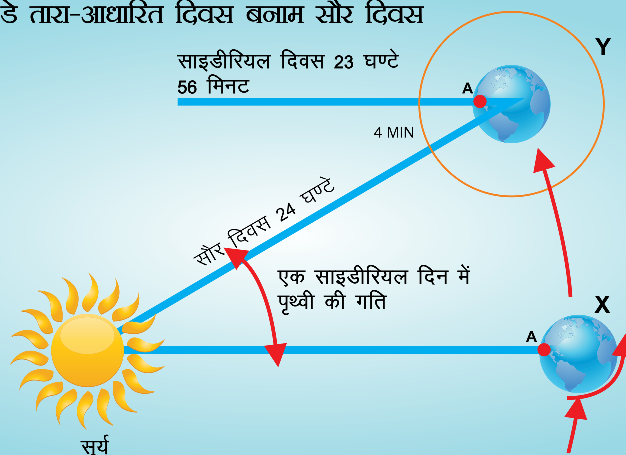
1. अपना अवलोकन स्थल चुनें।
2. कोई समय (मान लीजिए कि 10:00 सुबह) और अपनी पसन्द की कोई तारीख चुनें।
3. नीचे की नियंत्रण पट्टी का उपयोग करते हुए (पॉज के द्वारा) समय को ठहरा दें। यह काम बहुत महत्त्वपूर्ण है, अन्यथा आपको आवश्यक अवलोकनों को करने में कठिनाई हो सकती है।
4. क्लिक करके परदे पर सूर्य की छवि को लाइए। अन्य चीजों के अलावा, स्टैलेरियम उस समय पर सूर्य का आल्टीट्यूड दर्शाएगा।
5. अब समय को एक–एक घण्टे से बढ़ाते जाएँ और पता करें कि सूर्य को आकाश में उसी आल्टीट्यूड पर पहुँचने में कितना समय लगता है।
6. आप देखेंगे कि सूर्य का आल्टीट्यूड अपने प्रारम्भिक मान पर लगभग 24 घण्टे में वापिस आता है (उसके कोण में कुछ आर्क मिनटों का अन्तर होगा। एक आर्क मिनट एक डिग्री का 1/60 वाँ भाग होता है और कोण का बहुत छोटा माप होता है। इसलिए यहाँ हमारे अभ्यास के लिए इस अन्तर की उपेक्षा की जा सकती है।

इस प्रकार दिन–रात के 24 घण्टे की अवधि वाले चक्र की हमारी वर्तमान परिभाषा आकाश में सूर्य की इस दैनिक आभासी यात्रा पर आधारित है। सूर्य को पृथ्वी के चारों ओर एक पूरा चक्कर लगाने में 24 घण्टे लगते हैं। (पृथ्वी के अपनी धुरी पर घूमने के कारण हम इस सापेक्षिक गति को सूर्य की यात्रा की तरह देखते हैं। पर वास्तव में सूर्य पृथ्वी का चक्कर नहीं लगाता)। 24 घण्टे की यह अवधि एक सौर दिवस (सोलर डे) होता है और यह समय प्रणाली सौर समय (सोलर टाइम) या नागर समय (सिविल टाइम) कहलाती है।

तारों की दैनिक अवधि

ऊपर जैसे ही चरणों का अनुसरण करते हुए, अब सूर्य के बजाय रात को दिखाई देने वाले किसी तारे (कोई भी तारे) को चुनकर आगे बढ़ें।

साइडीरियल डे वर्सेस सोलर डे तारा-आधारित दिवस बनाम सौर दिवस



1. क्लिक करके उस तारे की छवि को परदे पर लाएँ। स्टैलेरियम उस तारे का आल्टीट्यूड दर्शाएगा।
2. समय को एक–एक घण्टे बढ़ाते जाएँ और पता करें कि उस तारे को आकाश में उसी प्रारम्भिक आल्टीट्यूड पर वापिस आने में कितना समय लगता है।
3. आप पाएँगे कि तारे को आकाश में उसी आल्टीट्यूड पर वापिस आने में 24 घण्टे नहीं लगते, बल्कि केवल 23 घण्टे और 56 मिनट लगते हैं। पूरे 24 घण्टे में वह तारा आल्टीट्यूड में 1 अतिरिक्त डिग्री आगे बढ़ जाता है।

इस प्रकार यदि हम अपने दिन–रात के चक्र की परिभाषा के लिए, सूर्य के बजाय आकाश में किसी अन्य तारे को चुनते हैं, तो इस चक्र की अवधि 24 घण्टे से कम होगी। सही कहें तो इस दिन–रात के चक्र की अवधि 23 घण्टे और 56 मिनट होगी। दिन–रात के चक्र की यह प्रणाली साइडीरियल टाइम कहलाती है। 'साइडीरियल' लैटिन भाषा के मूल का शब्द है और इसका अर्थ 'तारों से सम्बन्धित' होता है।

हमारी रोजमर्रा की गतिविधियाँ सूर्य के उदित होने और अस्त होने से प्रगाढ़ता से जुड़ी हुई हैं, इसलिए दैनिक प्रयोजनों के लिए जो घड़ियाँ हम इस्तेमाल करते हैं, वे 24 घण्टे के सौर दिवस पर आधारित होती हैं। पर इसके विपरीत एस्ट्रोनॉमर्स (खगोलशास्त्री) अक्सर साइडीरियल समय का उपयोग करते हैं, क्योंकि उनकी दिलचस्पी सूर्य के परे स्थित पिण्डों में होती है, जो रात को उपलब्ध हो पाते हैं।

पृथ्वी के द्वारा सूर्य की परिक्रमा किए जाने के कारण सौर दिवस, साइडीरियल दिवस से अधिक लम्बा होता है।

ऊपर दिया गया चित्र पृथ्वी को उसकी काल्पनिक धुरी पर घूमते हुए, और साथ ही सूर्य की परिक्रमा करते हुए दिखाता है। कल्पना करें कि पृथ्वी पर बिन्दु A एक अवलोकन करने वाले की स्थिति दर्शाता है। अब हमें आकाश में एक सन्दर्भ बिन्दु की आवश्यकता होती है, जिसके सापेक्ष पृथ्वी के घूर्णन (स्पिन – अपनी धुरी पर घूमना) को मापा जा सके। उदाहरण के लिए, हमें कैसे यह पता चलेगा कि पृथ्वी ने अपनी धुरी पर पूरा 360 डिग्री का चक्कर लगा लिया है? जब हमारे पास पृथ्वी से बाहर का कोई सन्दर्भ बिन्दु होगा, केवल तभी हम उसके सापेक्ष पृथ्वी के घूर्णन की बात कर सकते हैं। यह सन्दर्भ बिन्दु सूर्य हो सकता है या और दूर स्थित तारे हो सकते हैं। यह विकल्प चुनना ही सौर दिवस और साइडीरियल दिवस में अन्तर पैदा करता है।

पृथ्वी पर बिन्दु A को सुदूर तारों के सापेक्ष 360 डिग्री घूर्णन करने में जो समय लगता है वह 23 घण्टे और 56 मिनट होता है। इस अवधि के दौरान,

पृथ्वी से देखने पर, तारे आकाश में अपने स्थान पर वापिस लौट आते हैं। लेकिन, उसी अवधि में, सूर्य परिक्रमा की अपनी कक्षा में पृथ्वी थोड़ा–सा आगे बढ़ गई होती है। एक दिन में पृथ्वी अपनी परिक्रमा कक्षा में कितनी आगे बढ़ती है?

पृथ्वी को सूर्य के चारों ओर 360 डिग्री का एक पूरा चक्कर लगाने में 365 दिन लगते हैं। इसलिए एक दिन में पृथ्वी अपनी परिक्रमा कक्षा में लगभग 1डिग्री कोण से आगे बढ़ जाती है। इससे पता चलता है कि पृथ्वी के सापेक्ष सूर्य को आकाश में अपने मूल स्थान पर वापिस आकर दिखाई देने के लिए, पृथ्वी को अपनी धुरी पर 1 अतिरिक्त डिग्री घूर्णन करना पड़ता है। 1डिग्री अतिरिक्त घूर्णन के लिए पृथ्वी को लगभग 4 मिनट का समय लगता है, जो इसी कारण से साइडीरियल दिवस और सौर दिवस का अन्तर होता है।

निष्कर्ष

ये उन अनेक अभ्यासों में से कुछ थोड़े से उदाहरण हैं जो हम स्टैलेरियम का उपयोग करके कर सकते हैं। इस सॉफ्टवेयर में भरपूर संसाधन उपलब्ध हैं। यदि आपको सॉफ्टवेयर का उपयोग करने की विधि को समझने के लिए मदद की जरूरत हो तो उपयोगकर्ताओं के लिए इसकी दी गई मार्गदर्शिका से वह अच्छी तरह प्राप्त हो सकती है। अनेक विश्वविद्यालयों ने स्टैलेरियम का उपयोग करते हुए अपने प्रायोगिक अभ्यास बनाए हैं। जब आप स्टैलेरियम की परस्पर सम्बन्धित विशेषताओं से अच्छी तरह परिचित हो जाएँगे, तो आप बदलते हुए आकाश की संरचनाओं और गतियों की खोजबीन करने के लिए अपने खुद के अभ्यास निर्मित कर सकेंगे।



आनन्द नारायणन *इण्डियन इंस्टीट्यूट ऑफ स्पेस साइंस एण्ड टैक्नोलोजी में एस्ट्रोफिजिक्स (अन्तरिक्ष–भौतिकशास्त्र) पढ़ाते हैं। उनके शोधकार्य यह समझने पर केन्द्रित है कि किस तरह बेरियोनिक पदार्थ गैलेक्सियों के बाहर बड़े पैमाने पर वितरित हुआ है। वे नियमित रूप से एस्ट्रोनोमी से सम्बन्धित शैक्षणिक और सार्वजनिक विज्ञान प्रसार गतिविधियों में अपना योगदान देते हैं। बीच–बीच में, दक्षिण भारत के सांस्कृतिक इतिहास की छानबीन करने के लिए उन्हें यात्राएँ करना अच्छा लगता है।* ***अनुवाद*** *: भरत त्रिपाठी*

आई वंडर...

आप भी लिखें....

आई वंडर... माध्यमिक स्कूल की विज्ञान शिक्षा पर केन्द्रित पत्रिका है। यह छमाही पत्रिका (नवम्बर तथा मई) मूल रूप से अँग्रेजी में प्रकाशित होगी, लेकिन बाद में इसके हिन्दी तथा कन्नड़ अनुवाद भी प्रकाशित होंगे। पत्रिका छपे हुए रूप में और ऑनलाइन उपलब्ध होगी।

हमें हमेशा ऐसे लेखों की तलाश रहेगी जो माध्यमिक स्कूल में पढ़ाए जाने वाली वैज्ञानिक अवधारणाओं पर आधारित हों। तो अगर आपके पास ऐसे किसी लेख का विचार है जो विज्ञान विषय की किसी ऐसी अवधारणा की एक व्यापक और गहरी समझ देता है जो माध्यमिक स्कूल के विज्ञान पाठ्यक्रम से मेल खाती है तो उसे हमारे साथ साझा करिए।

आपका लेख विज्ञान की किसी अवधारणा के इतिहास, उसकी उपयोगिता या फिर अन्य विषयों से उसके अन्तरसम्बन्धों की पड़ताल पर भी हो सकता है।

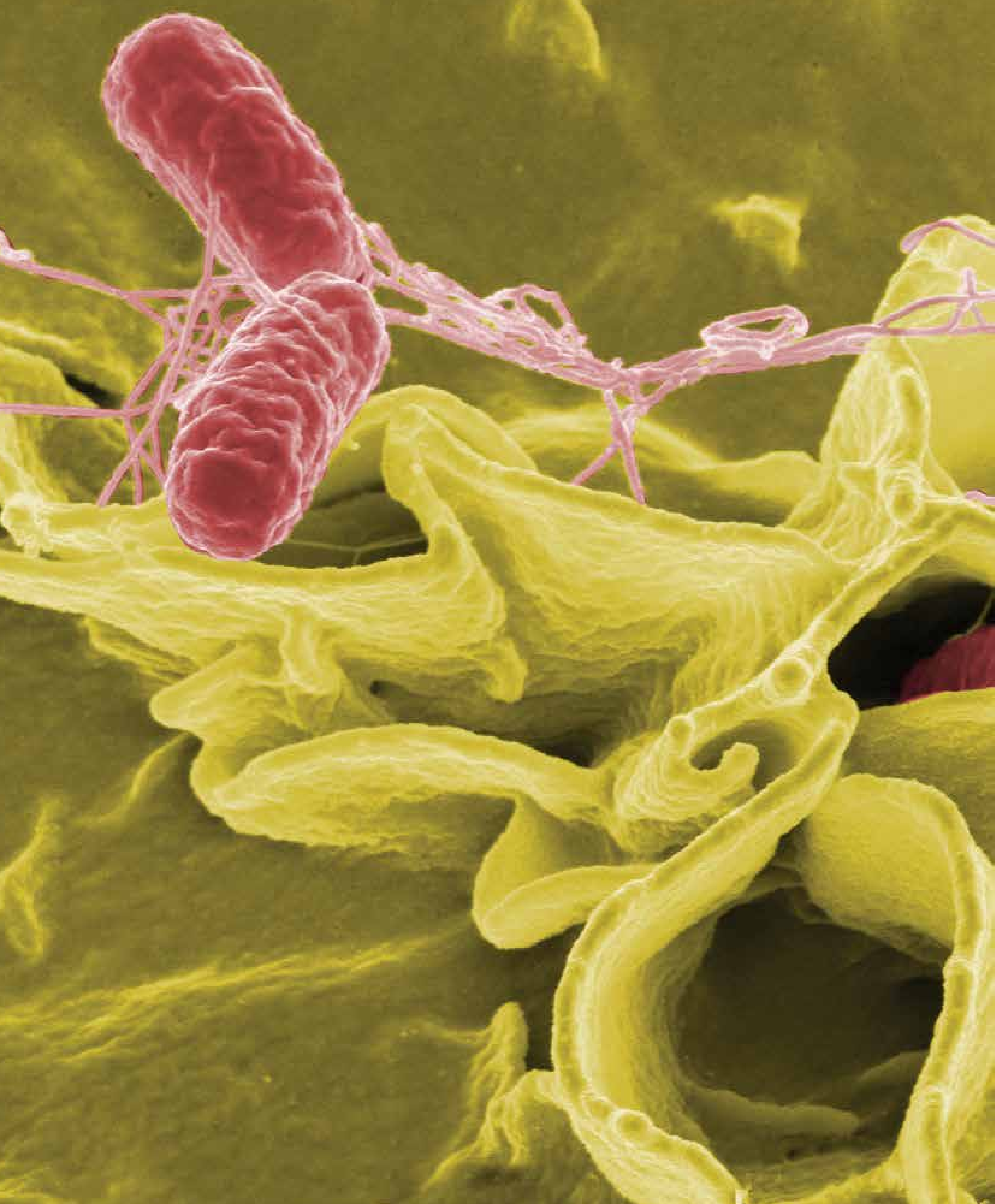
हमें कैसी सामग्री चाहिए इस बारे में और अधिक व्यापक जानकारी के लिए आप इस अंक के विभिन्न खण्डों को देख सकते हैं। इस बारे में आप हमसे भी सम्पर्क कर सकते हैं। हम आपकी मदद करेंगे कि आपका लेख किस खण्ड के लिए उपयुक्त होगा।

हम खासतौर पर माध्यमिक स्कूलों में कार्यरत विज्ञान शिक्षकों और शिक्षक शिक्षा से जुड़े व्यक्तियों से आने वाली सामग्री का स्वागत करेंगे। हम विज्ञान शिक्षण पर आपके अनुभव, कक्षाओं में आपके द्वारा आजमाई गई विज्ञान गतिविधियाँ और उनसे शिक्षण में बेहतरी के बारे में जानना चाहेंगे।

आप हमें हर अंक में प्रकाशित लेखों पर अपनी प्रतिक्रिया से भी अवगत कराएँ। हम चुनी हुई आपकी प्रतिक्रियाओं को अगले अंक में इस पन्ने पर जगह देंगे।

आप अपना लेख कभी भी भेज सकते हैं। आपको केवल यह ध्यान रखना है कि अगर आप अपना लेख नवम्बर, 2017 अंक में प्रकाशित करवाना चाहते हैं तो उसके बारे में आपके आरम्भिक विचारों की एक रूपरेखा हमें जुलाई, 2017 के अन्त तक मिल जाना चाहिए। यह रूपरेखा अधिक से अधिक 500 शब्दों में **iwonder.editor@azimpremjifoundation.org** *पर अपने नाम तथा संक्षिप्त परिचय के साथ भेजें। हमारी कोशिश होगी कि हम जल्द से जल्द आपसे सम्पर्क करें।*

सम्पादक गण



कोशीय संरचना में जटिल परस्पर क्रिया का एक दृश्य इलेक्ट्रान माइक्रोस्कोप से।
आई वंडर के अगले अंक में **परस्पर क्रिया** की रोमांचक दुनिया।
साथ ही जीवविज्ञान में उभरते रुझान